"दुष्वप्नं दुरितं निष्वाथ गच्छेम सुकृतस्य लोकं" —वेद।

लेखक—

—विद्यावाचस्पति—

पण्डित गणेशदत्त 'इन्द्र',

आगर-मालवा, मध्यभारत।

प्रकाशक—

पं० कैलासनाथभार्गव 'अमर',

अध्यक्ष—

भार्गवपुस्तकालय, गायघाट, काशी।

जयहिन्द सं० २—१
सन् १९४९ ई०

मूल्य २) रु०

मुद्रक—
पं० बैकुण्ठनाथ भार्गव
आनन्दसागर प्रेस, गायघाट, काशी।

समर्पण

देश के नवयुवकों तथा भारत के भावी
कर्ण-धार प्यारे बच्चों के पाप-शून्य
कोमल नन्हे-नन्हे हाथों में

यह पुस्तक

लेखककी ओरसे अत्यत प्रेम एव स्नेह-पूर्वक
समर्पित ।

तुम्हारा—
गणेशदत्त 'इन्द्र' ।

प्रविष्ट युवकों के लिए ब्रह्मचर्य पालन असम्भव हो जाता है। उन्हें जो शिक्षा दी जाती है वह संसारयात्रा में सहायिका हो सकती है पर मनुष्य नहीं बनाती। इसपर यदि उनके सामने यह आदर्श रखा जाय कि जीवनभर में २५ बार से अधिक वीर्यपात अविधेय है तो वह असम्भव कोटि में जाकर व्यर्थ ही होगा।

हमारे विद्वान् लेखक ने इस आदर्श का उल्लेख तो किया है पर सारी पुस्तक में उसपर जोर नहीं दिया है, यह संतोष की बात है। एक प्राचीन सुभाषित है जिसमें कहा गया है कि विश्वामित्र पराशर प्रभृति जो ऋषि वायु, जल और सूखी पत्तियाँ खाकर जीवन यापन करते थे, वे भी सुन्दर स्त्री को देखकर धैर्यच्युत हो गए तो जो रोज दूध, दही, घी आदि काम-वर्द्धक पदार्थ खाते हैं 'तेषामिन्द्रियनिग्रहो यदि भवेत् विन्ध्यस्तरेत्सागरम्।' अतएव आवश्यकता ऐसे पुस्तक की है जो वर्तमान परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए वीर्यरक्षा का यथासम्भव उपाय बतावे, साधारण दोष से डरकर धूर्तों के हाथ में न फँसने की आवश्यकता बतावे और उन दोषों से निष्कृति पाने का उपाय बतावे। ऐसे उपाय इस पुस्तक में बड़ी योग्यता के साथ बताये गये हैं और इसीलिए मैं चाहता हूँ कि जो हिन्दी जानते हैं वे इसे अवश्य पढ़ें, बालक और युवक इसके सहारे अपने आप को गड्ढे में गिरने से बचावें तथा माता-पिता और अभिभावक अपने बच्चों को प्रकृत ज्ञान देकर उन्हें कुमार्ग में जाने से बचाने का यत्न करें। इस दृष्टि से यह पुस्तक आबाल-वृद्ध सब के काम की है—सब इससे काम उठा सकते हैं। पुस्तक की भाषा सरल और शुद्ध है तथा चित्रों से विषय समझने में अच्छी सहायता मिल सकती है। प्रारम्भ में लेखक ने शरीर रचना का जो वर्णन किया है उसे प्रत्येक स्त्री पुरुष को ध्यान पूर्वक पढ़ना चाहिये। इसमें जो यौगिक क्रियाएँ बतायी गयी हैं वे भी अनुभूत और यत्नसाध्य हैं। चिकित्सा और औषधि के सम्बन्ध में मैं तो यही कहूंगा कि अच्छे सुयोग्य और अनुभवी वैद्य, हकीम या डाक्टर की सलाह के बिना स्वप्नदोष निवारणार्थ कभी कोई दवा न लेनी चाहिये। विज्ञापनी दवाओं का तो विषवत् त्याग करना चाहिये।

ज्ञानमण्डल, काशी,
सौर ५ आषाढ़, २००६ वि०

बा० वि० पराड़कर

भूमिका

आजकल किस समाचार पत्र को उठाकर देखिये उसी में ९० प्रतिशत वीर्य-सम्बन्धी दवाओं के तथा कोकशास्त्रादि पुस्तकों के नोटिस छपे हुए पाये जाते हैं। समाचार पत्रों के विज्ञापनों को देखकर देश की दशा का पता चल जाता है। अनुभव तो बताता ही है लेकिन वर्तमान विज्ञापन भी इस बात की पुष्टि कर रहे हैं कि भारत इस समय वीर्य सम्बन्धी रोगों से और विशेषकर स्वप्न-दोषसे पीड़ित है। आज जिस तरह रोगों की संख्या बढ़ रही है और जीवन पर जैसे अनेक संकट झेलने पड़ते हैं वह किसी से छिपे नहीं हैं। जिस तरह रोगों ने देश में कदम बढ़ाया है उससे कहीं अधिक आधुनिक वैद्य हकीम और डाक्टरों ने उत्पात मचा रखा है। एक ओर रोग जीवन का संहार कर रहा है तो दूसरी तरफ वैद्य डाक्टर और हकीम धन लूट रहे हैं।

विज्ञापनबाजों का बाजार गर्म है। कोई तीन दिन में स्वप्नदोष भगाता है, तो कोई एक ही खुराक में जवान को बुड्ढे से बचाता है। कोई नामर्दों को मर्द बनाता है तो कोई सेर से दुगनी बढ़ाता है। कोई एक औषधि से ही हजारों रोगों को हटाता है तो कोई अमीरी बटी सुंघाता है। कोई कोई तो बिना दवा के ही स्वप्नदोष हटाते हैं और इसी ढंग से सैकड़ों रुपये कमाते हैं। तात्पर्य यह कि ऐसे धूर्त धोखेबाज विज्ञापनों ने ही हमारे नवयुवकों के धन और स्वास्थ्य को चौपट कर डाला है। आजकल विज्ञापनबाजी ठीक जुए के ढंग पर हो रही है। किसी के पास वैद्य से इसलिये वैसे भी वैद्य हैं। कोई किसी औषधालय में कूटते कूटते वैद्यराज बन बैठे हैं। किसी ने सिद्ध महात्माओं से वरदान ले रखा है किसी को किसी देवता ने बहुमूल्य बूटी दे रखी है। कहीं ८) रु० तोले की भस्म बिक रही है तो कहीं दस रुपये चीज लेकर मुट्ठे को बदाम बनाया जा रहा है। इस तरह देश में महा अन्धेर तथा धार्मिक तमाशा हो रहा है। देश के जीवन का भयंकर खून किया जा रहा है—विपत्ति में फँसे हुए रोगियों का सर्वस्व हड़प कर धर्म तथा जीवन का नाश किया जा रहा है। जब मनुष्य रोग के पंजे में फँस जाता है तो वह प्यासे मृग की भाँति डाक्टरों हकीमों तथा विज्ञापन बाजों के मनमोहक विज्ञापनों की ओर दौड़कर

इस पुस्तक के लेखक

अपने जीवन को उल्टा और दु खप्रद बना लेता है। अनेक वैद्य हकीम धर्म को ताक में रखकर, परमात्मा के अस्तित्व पर थूक फेंककर, दुखिया गरीबों की कमाई से अपना जेब भर रहे हैं। अमीरों को दिवालिया बना देते हैं। मृग को जाल में फाँसने के लिये जिस प्रकार व्याध सुरीली बाँसुरी की तान सुनाता है—मछलियों के प्राण लेने के लिये जिस प्रकार लोहे के बलिये में स्वादिष्ट चीजें लगाई जाती हैं, उसी तरह नकली वैद्यों द्वारा रोगियों को अनेक सहानुभूति सूचक ढकोसले दिखाये जाते हैं। रोगी विपत्ति में फंसे होने के कारण रस्सी के भरोसे साँप पकड़ लेते हैं और अन्त में अपने जीवन से हाथ धो बैठते हैं। जिधर देखिये उधर ही, एक ओर रोगियों का आर्त्तनाद मच रहा है तो दूसरी ओर धूर्त चिकित्सकों का प्रबल तूफान उठा है। इस विचित्र दृश्य को देखकर ऐसा कौन सहृदय व्यक्ति होगा जिसके हृदय को दु ख न हो?

इन्हीं सब बातों को देखकर हमें एक ऐसी पुस्तक की हिन्दी ससार में बड़ी आवश्यकता मालूम पड़ी जो अपने देश के नवयुवकों को इन धोकेबाज मूर्ख वैद्यों के पजे से बचावे और स्वप्नदोषादि वीर्य रोगों से बचने तथा रोगों को हटाने में सहायता देनेवाली हो। यद्यपि मैं अपने को इस विषय पर कुछ लिखने का पूर्ण अधिकारी नहीं समझता, तथापि अपने अब तक के अनुभवों को अपने भाइयों के सामने रखने का मुझे अधिकार अवश्य है। इस पुस्तक को लिखने का विचार मेरे मन में वर्षों से था किन्तु कई अनिवार्य कारणों से असमर्थ रहा। इस असमर्थता का फल अच्छा ही हुआ। मुझे इस विषय में कुछ अधिक अनुभव हुआ और उन अनुभवों द्वारा लोगों को लाभ भी पहुँचा। पाठक विश्वास रखें, इसमें जो जो बातें लिखी गई हैं, वे सभी अनुभूत हैं। किसी पुस्तक से या लोगों के कहने सुनने से ही नहीं लिखी गई हैं। आशा है, आप इसे साद्यन्त पढ़कर मेरे श्रम को सफल करेंगे।

यद्यपि इस पुस्तक में आवश्यकीय सभी विषयों का वर्णन किया जा चुका है तथापि यदि किसी पाठक को किसी विषय पर कुछ अधिक पूछताछ करना हो तो जवाब के लिये डाक खर्च भेजने पर मैं उसे उत्तर देने के लिये सदा तय्यार हूँ।

विनीत—
गणेशदत्त "इन्द्र"

शान्ति कुटीर
आगर मालवा

विषय-सूची

चित्र-सूची

प्रेमोपहार

प्रकाशकीय दो शब्द

हिन्दी साहित्य में अभी अनेक विषय अछूते से ही हैं। उन पर यदि कुछ लिखा भी गया तो वह विषय और भाषा के महत्व के सामने नगण्य-सा है। अधिकारी विद्वानों ने उन विषयों पर अभी तक या तो ध्यान ही नहीं दिया अथवा जान बूझकर लेखनी उठाने की कृपा नहीं की। यौन साहित्य पर अभी हिन्दी में उँगलियों पर गिनी जाने योग्य पुस्तकें ही उपलब्ध हैं, जब कि विदेशी भाषाओं का साहित्य भण्डार प्रचुर परिमाण में ऐसे आवश्यक साहित्य से परिपूर्ण है। प्रमुख चार पदार्थों में से एक "काम" पर साहित्य में कुछ भी न होना खेद का विषय है। धर्म पर अनेक शास्त्र हैं, अर्थशास्त्र पर काफी प्रकाश डाला जा रहा है, मोक्ष सम्बन्धी साहित्य की बहुलता तो चरम सीमा तक पहुँची हुई है, फिर 'काम' से ही ऐसी चिढ़ क्यों जो इस ओर दुर्लक्ष्य किया जा रहा है। साहित्यिकों की यह उदासीनता जनता के लिये अहितकर सिद्ध हुई है।

यद्यपि यह "स्वप्न दोष" एक रोग है और उसी का विवेचन इस पुस्तक में है तथापि इसकी परिगणना यौनसाहित्य में ही है, क्योंकि यह एक यौन रोग है। बचपन, कुमारावस्था और यौवन काल में किये यौन दुराचारों का ही प्रतिफल और उसी का प्रायश्चित्त यह "स्वप्न दोष" है। इस दोष की निवृत्ति के निमित्त ही इस सर्वव्यापी विषय पर वैज्ञानिक पद्धति से विचार किया गया

स्वप्नदोष-विज्ञान

विषय-प्रवेश

भारतवर्ष में आज कुछ ऐसे इने गिने ही आदमी होंगे जिन्हें "स्वप्नदोष" की बीमारी न हो। वैसे तो इस बीमारी को इस नाम से सभी जानते हैं, तो भी हमें इस सम्बन्ध में कुछ स्पष्ट कर देना उचित जान पड़ता है। "स्वप्नदोष" शब्द स्वप्न और दोष दो शब्दों से बना हुआ है, जिसका अर्थ है स्वप्न = सपना, ख्वाब, निद्रावस्था में दीखने वाला दृश्य इत्यादि। और दोष = पाप, अपराध, गुन्हा, त्रुटि, ऐब, विकार इत्यादि। अब इस शब्द का अर्थ बिलकुल साफ हो गया अर्थात् स्वप्नावस्था में किसी प्रकार का पाप या ऐब हो जाना स्वप्नदोष कहलाता है। इसे फारसी मे "एहतिलाम" और अंग्रेजी में "नाइट पोल्यूशन" (Night Pollution) कहते हैं। स्वप्न में वीर्य को स्खलन करने वाले दृश्य को देखकर वीर्यपात होना "स्वप्नदोष" कहलाता है।

वीर्य को धातु, शुक्र, धात, बीज, वीरज, वीर्य, रेतः आदि कई नामों से पुकारते हैं। समझदार व्यक्ति इसकी उपयोगिता इसके नामों से ही समझ सकते हैं। वीर्यवान् ही वीर होता है। शुक्रधारी ही

है। मानव समाज में व्यापकता से प्रसरित इस सर्वनाशी रोग पर हिन्दी के अधिकारी विद्वानों का मौन उचित नहीं माना जा सकता।

मुझे हर्ष है कि उक्त विषय पर इस विषय के अधिकारी लेखक पं० सत्येश दत्तजी "इन्दु" धामर (मध्यभारत) निवासी ने अपनी लेखनी उठाकर हिन्दी साहित्य के एक अभाव की पूर्ति की है। तरुण–भारत की निराशा को हटाकर भ्रमित, त्रस्त पतित अव्यवस्थित-से नवयुवकों का मार्ग प्रदर्शन किया है। मुझे युवकों के हाथों इस "स्वप्नदोष विज्ञान" को प्रकाशित कर पहुँचाने में अपार हर्ष हो रहा है। यह पुस्तक युवकों का हित साधन कर सके यही मेरी एकान्त कामना है।

॥ जयहिन्द ॥

भार्गव-आश्रम
काशी।
१ जुलाई १९४९
"जयहिन्द" सं० २

विनम्र
कैलाशनाथ भार्गव 'अमर',
(प्रकाशक)

———

गीता मे भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र के कहे हुए इस महत्त्वपूर्ण वाक्य का अपमान किया जा रहा है। वीर्यरक्षा के महत्त्व को सहज ही मे जान लेना हर एक व्यक्ति का काम नहीं हैं। इस विषय पर अधिक लिख कर हम पुस्तक का कलेवर बढ़ाना ठीक नहीं समझते। अत सक्षेप मे ही यहाँ प्रकाश डालने की चेष्टा की गई है।

इस वीर्यरक्षा का नाम हमारे पूर्वजों ने "ब्रह्मचर्य" रखा है। सब आश्रमों की जड़, इस मानव शरीर का मूल, ससार का सच्चा सुख और आनन्द इसी आश्रम में है। इसके विना शेष आश्रम या यों कहिये कि शरीर ही नींव रहित भवन की तरह है। तभी तो वेदने इसकी प्रशसा में लिखा है कि:—

"ब्रह्मचर्यण तपसा देवा मृत्युमुपाघ्नतः।"

अर्थात्—"इस ब्रह्मचर्य रूपी तपद्वारा ही देवता लोग मृत्यु को अपने वश मे करते हैं।" यह बड़ा भारी तप है—यह तप जन्म से पच्चीस वर्ष की उम्रतक होता है। यह तप अत्यन्त कठिन है। आयुर्वेद में मानवी आयु का विधान कम से कम सौ वर्षों का है। उसके चार भाग चारों आश्रमों के लिये हम आर्य-लोगों मे प्रचलित हैं। अर्थात् जन्म से २५ वर्ष की उम्र तक ब्रह्मचय (वीर्यरक्षा), पच्चीस से पचास वर्ष की आयुतक गृहस्थ (वीर्य का सदुपयोग), पचास से पचहत्तर वर्ष की अवस्था तक वानप्रस्थ (पुनः वीर्यरक्षा) और पचहत्तर से सौ अर्थात् मरणपर्यंत सन्यास (वीर्यरक्षा)। अर्थात् हम लोगों का हमारी २६ वर्ष की उम्र से केवल पचास वर्ष की उम्र तक ही वीर्य का खर्च करना शास्त्रों ने बताया है—वह भी आज कल के इन्द्रिय-लोलुप व्यक्तियों की तरह नहीं।

हमारे आर्यशास्त्रों की आज्ञा देखिये:—"जन्म से छब्बीसवें वर्ष गृहस्थाश्रम में प्रवेश करो और ब्रह्मचारिणी कन्या का पाणिग्रहण करो। वर्ज्य तिथियों को छोड़कर नियमानुसार स्त्री-सङ्गम करो।"

दुष्प्राप्य हो सकता है। धातु शब्द का अर्थ है, सार, मूल, बल, बीज मुख्य-पदार्थ इत्यादि। इसी संस्कृत शब्द "धातु" का अपभ्रंश धात हो गया है। मणि-शब्द का अर्थ है बहुमूल्य मोती, सर्वोत्तम पदार्थ रत्नविशेष इत्यादि। यह वीर्य नामक पदार्थ मानव शरीर ही क्या समस्त प्राणियों के शरीर का मूलाधार है। जिसके इस आधार स्तंभ में दोष उत्पन्न हो गया, वह मानों इस संसार में किसी भी काम का नहीं रहा। यह लोक ही नहीं बल्कि उसका परलोक भी बिगड़ जाता है। न जाने कब यह मानव शरीर रूपी छप्पर, वीर्यरूपी आधारस्तंभ के खराब हो जाने पर, किस रोगरूपी हवा के एक दो झकोरे से नष्ट हो जावे। क्योंकि इस शरीर का पोषक पदार्थ एकमात्र वीर्य ही है। कहा भी है "मरणं बिन्दुपातेन जीवनं बिन्दुधारणात" इसी से शरीर पुष्ट, दृढ़ सुन्दर और दीर्घजीवी होता है। जिसका शरीर वीर्यवान है उसका एकाएकी रोग भी कुछ नहीं बिगाड़ सकता। जैसे निर्बल तृणादि-काष्ठ को अग्नि सहज ही में जला सकता है उसी प्रकार निर्बल शरीर को मृत्यु शीघ्र ही भस्म कर सकता है किन्तु सबल को वह बड़ा सोच समझ कर ही छूता है। अर्थात् बलवान् व्यक्ति को मृत्यु का भय नहीं रहता। उस पुरुष के पुरुषार्थ को देखकर मृत्यु भी रुक जाता है। यह बात आज कल के अल्पवीर्य व्यक्तियों को झूठी मालूम होती है और हसने लगते हैं। कुछ भाग्य के भरोसे बैठकर चैन की बंसी बजानेवाले निराशावादी भी हमारे इस कथन की दिल्लगी उड़ावेंगे और कहेंगे कि "जो कुछ भी परमात्मा ने भाग्य में लिख दिया है, उसे तो मेटनेवाला कोई नहीं है। "बूटी की बूंटी नहीं है" और जितनी आयु विधाता ने लिख दी है उसमें एक पल भी घट बढ़ नहीं सकता है०।" परन्तु ऐसा कहना ठीक नहीं। क्योंकि—

"कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते संगोऽस्त्वकर्मणि ॥"

देश में वसिष्ठ, वाल्मीकि, गौतम, भारद्वाज, अत्रि, पराशर, व्यास, दधीचि आदि हजारों महात्मा पैदा होते थे—जिनके ज्ञान और तेजसे सारा विश्व प्रकाशित था और अन्यदेशवासी दाँतों नीचे अँगुली दवाते थे। यहाँ राम, लक्ष्मण, परशुराम, विश्वामित्र, हनुमान, भीष्मपितामह, हरिश्चन्द्र, रघु, दिलीप शिवि, कृष्ण, अर्जुन, कर्ण, युधिष्ठिर, भीमसेन आदि वीरपुङ्गव तथा सीता, अनसूया, सावित्री, मैत्रेयी, गार्गी, लोपा-मुद्रा, गांधारी, द्रौपदी, सुकन्या, और दमयन्ती जैसी नारियाँ इस देश में हो चुकी हैं। मध्यकाल में महाराणा प्रताप, शिवाजी, गुरुगोविंद सिंह, महावीरस्वामी, विक्रम, महाराजा रणजीतसिंह, महर्षि दयानन्द सरस्वती आदि अनेक वीर तथा चन्द्रा, लक्ष्मीबाई आदि वीर नारियाँ हो गई हैं। जव से हमने आयुर्वेद के नियमों को तोड़ा है, तव से अपने देश को अपने हाथों आधिव्याधिका केन्द्र वना लिया।

लोग कह सकते हैं कि "शास्त्रकारों ने मनमाने घरजाने इतने कठोर नियम वना दिये कि उनका सोलहवाँ हिस्सा भी लोगों से पालन नहीं हो सकता।" ऐसा कहना भूल है। शास्त्रकारों की हम लोगों से शत्रुता तो थी ही नहीं। हम उन्हीं की सन्तान हैं। वे हमारे शुभ-चिन्तक थे। इसलिये जो कुछ उन्होंने लिखा है वह वात्सल्य-प्रेम के कारण, हमारे हितके लिये तथा प्रकृति आज्ञा के अनुसार ही लिखा है। आप प्रायः देखेंगे कि मनुष्य जिस उम्र में अपना वीर्यपात आरम्भ करता है, उससे चौगुनी उम्र ही पाता है—दो चार साल कम या इससे ज्यादा। शर्त्त यह है कि जो वीच में सँभल जावेंगे और वीर्यरक्षा का ध्यान रखेंगे, वे अधिक आयु भी पा सकेंगे और जो रात दिन वीर्यपात करेंगे वे और भी जल्दी मर जावेंगे।

आज कल, हमारे देश मे एक वड़ा भारी अन्याय हो रहा है। जहाँ लडके को धोती वाँधना, और लड़की को गोबर थापना आया कि माता-पिता को, उनके विवाह की चिन्ता होने लगती है। अपरिपक्व

दोनों पतिपत्नी ब्रह्मचारी तथा उचित अवस्था में हैं, अतएव गर्भ शीघ्र ही रह जावेगा। अब गर्भावस्था में स्त्री-प्रसङ्ग मना है, क्योंकि उस समय प्रसङ्ग द्वारा गर्भपात होने, बच्चे का कुरूप होने, मूर्ख तथा पागल होने, और निर्बल होने का पूरा पूरा डर है। स्त्री पुरुष का कार्य केवल गृहस्थ धर्म पालन करते हुए परमात्मा की सृष्टि में उसके नियम द्वारा वृद्धि करना तथा पितृ-ऋण से मुक्त होना मात्र है—न कि अपने वीर्य को पानी की भाँति बहाकर अपने जीवन को बरबाद करना। आज कल लोग इस बात का ध्यान नहीं रखते, इसी कारण पृथ्वी सब देशोंकी अपेक्षा, भारतवर्ष में बच्चों की मृत्युसंख्या इतनी अधिक है, कि सरकारी रिपोर्टों के पढ़ने से रोंगटे खड़े हो जाते हैं। यद्यपि बालकों की इस बड़ी बड़ी मृत्युसंख्या के और भी कई कारण हैं, तथापि सब में मुख्य कारण अपने वीर्यकी बरबादी है।

बालक पैदा होने के बाद भी जब तक वह अपनी माता का दूध पीता है, तब तक स्त्रीप्रसङ्ग वर्जित है। इसके विरुद्ध जो लोग आचरण करते हैं उनके बच्चे प्रायः मर जाया करते हैं। यदि जीवित भी रहें तो मूर्ख और रोगी रूप में अपना जीवन व्यतीत करते हुए पृथ्वी पर भार रूप रहते हैं। शास्त्रमर्यादा के अनुसार चलने पर, प्रत्येक मनुष्य को कम से कम दो वर्ष में एक दो बार ही स्त्रीप्रसंग द्वारा वीर्यपात करने का मौका आता है। अर्थात् उसे अपने २५ वर्ष के गृहस्थकाल में सिर्फ१०-२५ बार अथवा यों कहिये कि सारे जीवन में २०-२१ बार स्वेच्छा पूर्वक वीर्यपात करने की, हमारे महर्षिगण आज्ञा देते हैं। पाठक इस बात पर नाक-भौं अवश्य चढ़ावेंगे और कहेंगे कि "ऐसा तो इस पृथ्वीपर आज एक व्यक्ति भी नहीं निकलेगा !!" यह बात अलग है कि ऐसे आदमी पृथ्वीपर अब हैं या नहीं ? इससे हमें प्रयोजन नहीं किन्तु बात सिर्फ यहीं यह है कि "शास्त्रों की आज्ञा ऐसी है। और ऐसा ही होना भी चाहिये।" जिस समय इस नियम का अच्छी तरह पालन होता था उस समय हमारे

लेकिन शरमाओ मत। इसमे तुम्हारा कोई अपराध नहीं है। अब भी तुम अपने को सँभाल लो। वीर्य को सॅभाल कर खर्च करो, यह अमूल्य वस्तु है। वीर्य ही इस मानव शरीर का सूर्य है। इसके बिना, मानवजीवन घोर अन्धकारमय है। अब भी सॅभल जाओ, नहीं तो "स्वप्नदोष" "प्रमेह" आदि किसी रोग के भयङ्कर पजे में फॅसकर, शीघ्र ही अपने जीवन से हाथ धो वैठोगे। ब्रह्मचर्य का पालन करो, नष्ट हुए ब्रह्मचर्य की पूर्त्ति, वर्त्तमान में वीर्यरक्षा द्वारा ही सकती है। यह अच्छी तरह याद रखो कि "वीर्यरक्षा ही जीवन है, और वीर्यनाश ही मृत्यु है।" वीर्यवान् पुरुष के पास मृत्यु भी नहीं आता और वीर्यहीन के पास से हजारों प्रयत्न करने पर भी मृत्यु नहीं हटता। सारांश यह कि मनुष्य के जितना वीर्य का नाश होगा, उतना ही वह मृत्यु के पास पहुँचेगा। वीर्यरक्षा से आरोग्य, शक्ति, तेज, उत्साह, सामर्थ्य, बुद्धि, प्रभुत्व, ऐश्वर्य, सिद्धि, आदि की प्राप्ति होती हैं, अतएव नवयुवको ! अच्छी तरह याद रखो कि "वीर्यहीन व्यक्ति ही बेमौत मरते हैं" इसलिये ब्रह्मचारी रहकर वीर्यरक्षा करो।

कहा भी है—

"ब्रह्मचारी न काचन आर्तिमार्च्छति ।"

अर्थात्—"ब्रह्मचारी को किसी प्रकार के कष्ट होते ही नहीं।" सचमुच वीर्य ही अ-मृत है। जो मनुष्य इस अमृत को धारण करता है, वही अ-मर हो जाता है। भारतीय युद्ध के प्रसिद्ध महारथी भीष्म-पितामह, इसी अमृत को सचय करके इच्छामरणी हुए थे। इसी अमृत के प्रभाव से वह १८० वप का बुड्ढा दस दिन तक ऐसी वीरता से लड़ा था, कि भगवान् श्रीकृष्ण, गाण्डीव-धारी अर्जुन और महा-पराक्रमी भीमसेन जैसे अद्वितीय नवयुवक योद्धाओं के दाँत खट्टे कर दिये थे, और यदि कौशलपूर्वक उन्हें शरशय्या पर नहीं सुलाया जाता तो निस्सन्देह पाण्डवों का नाश, और कौरवों की जीत होती। उत्तरायण सूर्य की प्रतीक्षा में, हजारों वाणों पर, जिनकी पैनी पैनी

अवस्था में यह पवित्र विवाह-संस्कार हमारे देश को तबाह कर रहा है—इसने भारत को आधिव्याधियों का केन्द्र बना दिया। बालविधवाओं की दुःखभरी आर्त्त आहों से दसों दिशायें निनादित हैं। व्यभिचार और भ्रूण-हत्या के अपराध से देश कलङ्कित बन गया। भारत के लाखों होनहार सपूतों को अल्पायु में ही काल के कराल गाल में जाना पड़ा। इससे पर भी हमारी वही हालत है। विवाह के कुछ समय बाद ही लड़के-लड़कियों के माँ-बाप उनसे सन्तान पैदा होने की आशा लगाये रहते हैं। प्रकृति नियम के विरुद्ध, उन्हें छोटी उम्र में अपने वीर्य को बरबाद करने के लिये एक कमरे में बन्द करके प्रसन्नता के गीत गाते हैं। किन्तु स्मरण रखिये प्रकृति के प्रबल नियमों को तोड़ने की शक्ति किसी में नहीं है। कुछ समय बाद ही जिस घर में पहिले खुशी के गीत सुनाई पड़ते थे वहीं से हृदय को विदीर्ण करनेवाला आर्त्तनाद सुनाई देता है। पाठक इसे विषयान्तर समझते होंगे, परन्तु ये सब बातें विषय से सम्बन्ध रखनेवाली हैं। इन बातों पर प्रकाश डाले बिना हमें आगे लिखने में रुकावटें आतीं इसलिये कुछ थोड़ा-सा लिखना आवश्यक समझा गया। यदि देखा जावे तो हम अपने विषय पर ही हैं, क्योंकि स्वप्न-दोष के कारणों को दूसरे शब्दों में कह रहे हैं।

पन्द्रह, सोलह वष के लड़कों के वीर्य द्वारा, तथा तेरह चौदह वर्ष की लड़की के गर्भ द्वारा उत्पन्न बालकों को देखकर, बड़ी ही मार्मिक-वेदना होती है। भारत की यह दुर्दशा देखकर, एक समझदार व्यक्ति के दिलपर वज्रपात सा होता है। सत्य बात तो यह है कि जिनके वीर्य और गर्भ से वे चूहे जिसी जैसे रोगाक्रान्त और कम उमरवाले बच्चे पैदा होते हैं, वे भी खुद फरमाते हैं कि—"हम बिना दाढ़ी मूछ वालों की इन मुर्दा सन्तानों को देखकर, लोग सन्देह तो करते होंगे कि यह हम्हीं द्वारा उत्पन्न हैं या नहीं? क्योंकि अभी हमारे चेहरे भी तो बिना दाढ़ी मूछों के, (लड़कियों सरीखे) ही हैं। इत्यादि।"

अनेक शिक्षा प्राप्त अथवा सुसंगति में बैठनेवाले समझदार युवक, अपने वीर्य की रक्षा करने की हिम्मत बाँधते हैं, किन्तु स्वप्नदोष के भयङ्कर उत्पात से, वे अपने विचारों को एक ताक में रखकर, उसका दुरुपयोग करने लग जाते हैं। ऐसे लोग इसी भय से कि—"शायद स्वप्नदोष हो जावेगा तो वीर्य व्यर्थ ही जावेगा।" मैथुनादि मे अधिक प्रवृत्त हो जाते हैं तभी तो म० गान्धीजी ने एक बार लिखा था कि "स्वप्नदोप की अधिक परवाह न करते हुए अपने वीर्य की रक्षा करो।" अर्थात् स्वप्नदोष के भय से भयभीत होकर, अपने वीर्य को नष्ट मत करो। कुछ लोग तो महात्मा जी के उक्त कथन पर से यह अर्थ लेते हैं कि "स्वप्नदोष का होना कोई भयङ्कर बात नहीं है। इ०।" ऐसा समझनेवाले बड़ी गलती पर हैं—महात्माजी का ऐसा विचार नहीं है-वे ब्रह्मचर्य को स्वराज्य का साधन बताते थे।

वास्तव में इस स्वप्नदोष के भयङ्कर रोग ने, हमारे कई नवयुवकों के, ब्रह्मचर्य पालन करने के साहस को तोड़ दिया है, अतएव इस समय भारत के लिये और और आवश्यकीय प्रश्नों के साथ ही एक प्रश्न यह भी है कि "वीयरक्षा किस प्रकार की जावे ?" वीर्य रक्षापर, इस विषय के ज्ञाताओं को, अपनी अपनी लेखनी से, अपने अनुभवों को अपने भाइयों के सामने रखने की कृपा करनी चाहिये, जिससे कि स्वप्नदोपादि रोगों से व्यथित भारतीय नवयुवक पुनः चेतनता तथा पुरुषार्थ प्राप्त करके, अपना तथा अपने देश का कल्याण करने का, नवजीवन अपने शरीर में स्थापित कर, देश सेवा के लिये कटिबद्ध होने का साहस कर सकें। बड़े बडे ग्रन्थों के लम्बे चौड़े प्रमाणों तथा नुसखों के लिख देने से काम नहीं चलेगा। लाभ होगा केवल अनुभूत बातों से ही। अतएव अनुभवी महाशयों को शीघ्र ही इधर ध्यान देना चाहिये।

नोकें उनके शरीर में घुसकर खून चूस रही थीं पड़े हुए बिना किसी कष्ट के, प्राणों को रोके रहे। उन बाणों की सेज पर, पुष्पशय्या की भाँति लगभग २ मास तक पड़े हुए, ज्ञानोपदेश देते रहना केवल ब्रह्मचर्य ही का प्रताप था। आज हम लोगों के शरीर में एक ज़रा सा काँटा चुभ जाता है तो हायतोबा के आर्तनाद से रात दिन घर गूँजा करता है !!

हमारी इस दुर्दशा का कारण वीर्यहीनता ही है। जो वीर्यवान वीर है वही स्वतन्त्र है। बलवान मनुष्य के विचार भी स्वतन्त्र होते हैं, और वीर्यहीन मनुष्य ही दब्बू रहते गये हैं। स्वतन्त्रता के लिये वीर्यवान होना परमावश्यक है। अपने 'नवजीवन" पत्र में महात्मा गान्धी ने "ब्रह्मचर्य" पर एक महत्वपूर्ण लेख लिखा था। उसमें उन्होंने वीर्यरक्षा सम्बन्धी अनेक आवश्यक बातें लिखी थीं। उसी लेख में महात्माजी ने "स्वप्नदोष" पर भी अपने विचारों को लोगों के आगे रखा था। आज कल हमारे देश में मृत्यु-संख्या बढ़ रही है, इसका एकमात्र कारण वीर्यहीनता ही है। इसलिये देश में बढ़ती हुई इस मृत्युसंख्या को रोकने देशोद्धार करने तथा आत्मोद्धार करने के लिये वीर्य सम्बन्धी विकारों को हटाकर, वीर्य-रक्षा परमावश्यक है।

हम लोगों को 'ऊर्ध्वरेता" होना चाहिये। 'रेता" शब्द का अर्थ है वीर्य और "ऊर्ध्व" शब्द का अर्थ है ऊपर, अर्थात् जो अपने वीर्य को नीचे नहीं गिराता और ऊपर ही रखता है वही ऊर्ध्वरेता है, तपस्वी है, नरोत्तम है और श्रेष्ठ है। हमारे ऋषि मुनियों के आचरण में यह बात आई थी, किन्तु आज हम इतने बलहीन हो गये हैं कि रात दिन, सोते जागते अपने वीर्यको बहाते रहते हैं। किसीको मूत्रके साथ किसीको पाखाना जाते वक्त, किसीको स्वप्न में किसीको शृंगाररस की बातें सुनने से किसीको कामेच्छा होते ही वीर्यपात होता रहता है। इस अवनति का भी कुछ ठिकाना है ? सारांश यह कि, देश इस समय अधिकतर वीर्य सम्बन्धी रोगों से ग्रस्त है। "स्वप्नदोष" ने तो खूब ही अपना चक्रवर्ती राज्य जमाया है।

अनेक शिक्षा प्राप्त अथवा सुसगति में बैठनेवाले समझदार युवक, अपने वीर्य की रक्षा करने की हिम्मत बाँधते हैं, किन्तु स्वप्नदोष के भयङ्कर उत्पात से, वे अपने विचारों को एक ताक मे रखकर, उसका दुरुपयोग करने लग जाते हैं। ऐसे लोग इसी भय से कि—"शायद स्वप्नदोष हो जावेगा तो वीर्य व्यर्थ ही जावेगा।" मैथुनादि मे अधिक प्रवृत्त हो जाते हैं तभी तो म० गान्धीजी ने एक बार लिखा था कि "स्वप्नदोप की अधिक परवाह न करते हुए अपने वीर्य की रक्षा करो।" अर्थात् स्वप्नदोष के भय से भयभीत होकर, अपने वीर्य को नष्ट मत करो। कुछ लोग तो महात्मा जी के उक्त कथन पर से यह अर्थ लेते हैं कि "स्वप्नदोप का होना कोई भयङ्कर बात नहीं है। इ०।" ऐसा समझनेवाले बड़ी गलती पर हैं—महात्माजी का ऐसा विचार नहीं है- वे ब्रह्मचर्य को स्वराज्य का साधन बताते थे।

वास्तव में इस स्वप्नदोप के भयङ्कर रोग ने, हमारे कई नवयुवकों के, ब्रह्मचर्य पालन करने के साहस को तोड़ दिया है, अतएव इस समय भारत के लिये और और आवश्यकीय प्रश्नों के साथ ही एक प्रश्न यह भी है कि "वीर्यरक्षा किस प्रकार की जावे?" वीर्य रक्षापर, इस विषय के ज्ञाताओं को, अपनी अपनी लेखनी से, अपने अनुभवों को अपने भाइयों के सामने रखने की कृपा करनी चाहिये, जिससे कि स्वप्नदोपादि रोगों से व्यथित भारतीय नवयुवक पुनः चेतनता तथा पुरुषार्थ प्राप्त करके, अपना तथा अपने देश का कल्याण करने का, नवजीवन अपने शरीर में स्थापित कर, देश सेवा के लिये कटिबद्ध होने का साहस कर सकें। बड़े बडे ग्रन्थों के लम्बे चौड़े प्रमाणों तथा नुसखों के लिख देने से काम नहीं चलेगा। लाभ होगा केवल अनुभूत बातों से ही। अतएव अनुभवी महाशयों को शीघ्र ही इधर ध्यान देना चाहिये।

जननेन्द्रिय

जो अङ्ग सन्तानोत्पत्ति के काम में आते हैं, उनको जननेन्द्रियाँ कहते हैं। पुरुषकी जननेन्द्रिय स्त्री की जननेन्द्रिय से भिन्न प्रकार की होती है। पुरुष जननेन्द्रिय को लिङ्ग शिश्न इत्यादि नामों से पुकारते हैं, और स्त्री की जननेन्द्रिय को भग, योनि, इत्यादि कहते हैं। पुरुष जननेन्द्रिय दो प्रकार की होती है :—

(१) बाह्य और (२) अन्तरीय। बाह्यजननेन्द्रिय वह है, जो बाहिर की ओर दिखाई देती है, जैसे लिङ्ग अंडकोष इत्यादि और अन्तरीय जननेन्द्रिय बस्तिगह्वर के भीतर रहती है—इसी कारण बाहिर से दिखाई नहीं देती। जैसे शुक्राशय शुक्रप्रनाली प्रोस्टेट ग्लेंड्स, शिश्नमूलग्रन्थि इत्यादि।

वीर्य निकलने का एक मात्र द्वार जननेन्द्रिय है। इस पुस्तक में हम पुरुष जननेन्द्रिय के लिये उपस्थेन्द्रिय गुह्येन्द्रिय शिश्न, काम-नेन्द्रिय मूत्रेन्द्रिय और लिङ्ग आदि शब्दों का प्रयोग करेंगे तथा स्त्री जननेन्द्रिय के लिये भग योनि इत्यादि शब्दों को काम में लावेंगे। यहाँ हम यह चाहते हैं कि जननेन्द्रिय के विषय में बातचीत करने के पूर्व थोड़ा सा मानवशरीर की रचना पर भी विचार कर लिया जाय। ऐसा किये बिना आगे बहुत कुछ रुकावटें आवेंगी, इसलिये संक्षिप्त रीति से इस विषय की चर्चा करना यहाँ परमावश्यक है।

हमारे शरीर की बनावट एक मकान की बनावट के समान है। मकानों का बनाने वाला कोई शिल्पी होता है, लेकिन इस जीवन युक्त शरीर का कर्त्ता सर्वगुणसम्पन्न शिल्पिराज विश्वकर्मा परमात्मा है। जैसे मकान अनेक छोटे छोटे पत्थरों और ईंटों से बनता है, उसी प्रकार यह शरीर भी बहुत सी छोटी छोटी ईंटों से तैय्यार हुआ

चित्र नं० १

देखो।

है। यदि मकान की ईंटों में, और शरीर की ईंटों मे कुछ भेद है तो यही है कि वे जड़ ईंटें हैं और ये हैं चैतन्य। जिन छोटी छोटी ईंटों से यह शरीर वना है, उन्हें "सेले" कहते हैं। सेल (Cell) अँग्रेजी भाषा का शब्द है। वहुत से लोग सेलके लिये "कोष" शब्द काम में लाते हैं, किन्तु हम यहाँ सेल शब्द ही प्रयोग करेंगे।

जैसे एक वडे भव्य राजप्रासाद में विविध आकार की ईंटें लगी रहती हैं—कोई वड़ी होती हैं, कोई छोटी होती हैं, कोई पतली तो कोई मोटी होती हैं। इसी तरह, शरीर भी कई प्रकार की सेलों से वना होता है। जिस सेल को जैसा काम करना पडता है, उसी कार्य के अनुसार उसका आकार और परिमाण होता है। कोई जीव-धारी वड़ा होता है, और कोई छोटा। वडे जीवधारी के शरीर मे अधिक, और छोटे जीवधारी के शरीर में कम सेलें होती हैं। जितनी ईंटे एक वड़े महल में होती हैं, उतनी एक छोटे मकान मे नहीं हो सकतीं। जितनी सेलें एक हाथी के शरीर मे होती हैं, उतनी एक कुत्ते के शरीर मे नहीं होतीं, और जितनी सेलें एक कुत्ते के शरीर मे होती हैं उतनी एक मक्खी के शरीर में नहीं होतीं। जितना छोटा कोई जीवधारी होगा, उतनी ही कम सेलें उसके शरीर में होंगी। यहाँ तक कि सवसे छोटे प्राणियों के शरीर केवल एक सेल से ही वनते हैं। सेलों की संख्या से, कुल जीवधारियों को दो श्रेणियों मे वाँटा जा सकता है। (१) एक सेलवाले जीवधारी और (२) वहुसेलयुक्त जीवधारी। मनुष्य के शरीर में वहुत सेलें हैं, इसलिये इसकी गिनती वहुसेलयुक्त प्राणियों में है।

मनुष्य के शरीर में कई प्रकार की सेलें हैं। कुछ सेलें चपटी होती हैं, मुटाई वहुत ही कम होती है जैसे ईंटों के सामने खपरैल या स्लेट। (देखिये चित्र नं० १ में १) कुछ सेलें ईंटों जैसी होती हैं। इनकी लम्वाई अधिक तथा चौड़ाई और मोटाई कम। ये स्तम्भाकार सेलें कहाती हैं। कुछ सेलों में लम्वाई चौड़ाई और मोटाई वरावर होती हैं, इनको घनाकार सेलें कहते हैं। वहुत सी सेलें वेलनाकार होती

हैं। ये सेलें अन्नमार्ग की दीवार में पाई जाती हैं (देखो चित्र नं० १ में २) बहुत सी सेलों के एक सिरे पर बड़े सूक्ष्म सूक्ष्म कोमल बाल के समान तन्तु निकले रहते हैं। वे बार एक ओर को गति किया करते हैं। ऐसी सेलें कण्ठ, टेंटुवे वायु प्रणालियों की भीतरी दीवारों में और अन्य कई स्थानों में पाई जाती हैं (देखो चित्र नं० १ में ३)। कुछ सेलें गोलाकार होती हैं, पास-पास रहने से जो दबाव एक सेल का दूसरी सेल पर पड़ता है, उसके कारण कुछ सेलें अठपहलू या छः पहलू दिखाई देने लगती हैं। ऐसी सेलें यकृत (जिगर) में मिलती हैं (देखो चित्र नं १ में ४)। कुछ सेलें बीच से मोटी होती हैं और उनके सिरे नुकीले होते हैं—ये सेलें तर्काकार कहलाती हैं। ऐसी सेलें सौत्रिक तन्तु में पाई जाती हैं (देखो चित्र नं १ में)। कुछ सेलें ऐसी होती हैं जैसी छोटी मकड़ियाँ। बीच में से मोटी होती हैं, और इस मोटाई से मकड़ी के पैरों के सदृश बहुत से तार निकले रहते हैं। ये मकड़ीवत् सेलें हड्डियों मे पाई जाती हैं (देखो चित्र नं १ में ६)। बहुत सी सेलें सुई के समान होती हैं, इनके कोनों और तली से बहुत से तार निकले रहते हैं। ये सूच्याकार सेलें मस्तिष्क में पाई जाती हैं (देखो चित्र नं में ७ और ८)। कुछ सेलें लहसुन और शलगम जैसी होती हैं। इनमें भी बहुत से तार होते हैं। ये भी मस्तिष्क में पाई जाती हैं (देखो चित्र नं १ में ९ और १)। कुछ सेलें सर्पाकार होती हैं। इसमें एक मोटा सिरा होता है, जिससे एक लम्बा और पतला पूंछ जैसा भाग लगा रहता है। ये सेलें मनुष्य के अण्ड में बनती हैं और शुक्रकीट कहलाती हैं (देखो चित्र नं १ में ११)। ऊपर गिनाई हुई सेलों के अतिरिक्त और कई प्रकार की सलें होती हैं, जैसे मांससेलें (चित्र नं १ में १६,१४ १६)रक्त की सेलें (चित्र नं १ में १२) कार्टिलेज की सेलें (चित्र १ में १७) मज्जा की बहुमींगीवाली सेलें (चित्र १ में १८) वायुकर्माणि बालों में पाई जानेवाली विशेष प्रकार की सेलें।

सेलें सूत्रों सेलों को जोड़ने वाले मसाले और तरल से

चित्र नं० २
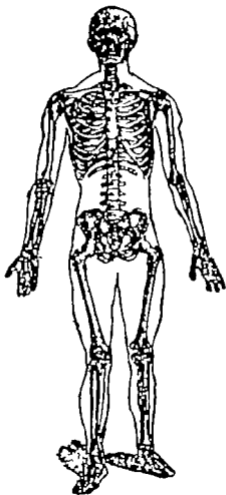
समस्त शरीर निर्म्मित है। शरीर के छोटे छोटे भागों को अङ्ग कहते हैं। जैसे हाथ, पैर, जाँघ, हृदय, अंत्र, आँख। कुछ अङ्ग ठोस होते हैं, जैसे बाहु, जघा, यकृत, कुछ अग पोले होते हैं और थैली के समान होते हैं, जैसे मूत्राशय, वीर्याशय, आमाशय, गर्भाशय, कुछ अंग नलियों के सदृश होते हैं, जैसे रक्त की नलियाँ, पाचक रसों की नलियाँ, शुक्र की नलियाँ, मूत्र की नलियाँ।

शरीर के ३ बड़े भाग हैं (१) शिर (२) ग्रीवा (३) धड़। शिर शरीर के उस भाग को कहते हैं, जिसमें आँखें कान मुख नासिका इत्यादि हैं। शिर और धड़के बीच मे जो भाग है वह ग्रीवा या गरदन कहलाता है। जहाँ ग्रीवा धड़से जुड़ती है वहाँ से ऊपर की शाखाएँ (ऊर्ध्व शाखाएँ) निकलती हैं। धड़के नीचे, नीचे की शाखाएँ, (निम्न या अधःशाखाएँ) लगी रहती हैं।

धड़के दो भाग हैं। एक ऊपर का भाग जिसमे पसलियाँ हैं, और जिसमे सामने स्तन होते हैं, इसको वक्षस्थल या छाती कहते हैं। दूसरा नीचे का भाग, जिसमे सामने सूँडी या नाभि होती है और जिसके नीचे के भाग मे पुरुषों के शिश्न या स्त्रियों के भगनामक अग होते हैं, इसे उदर या पेट कहते हैं।

यदि हम त्वचामांस, वसा या मांस और सौत्रिक तन्तु से निर्म्मित कोमल अगों को, काट छाँटकर शरीर से निकाल दें तो शरीर का दृढ़ ढाँचा बाकी रहेगा। जब मृत शरीर पृथ्वी में गाड़ दिया जाता है, तो मांस आदि चीजें शीघ्र सड़कर मिट्टी मे मिल जाती हैं। परन्तु उसका ढाँचा वर्षों तक पड़ा रहता है। यह ढाँचा, बहुत से छोटे बड़े वा मोटे तथा पतले टुकड़ों के आपस में सौत्रिक तन्तु द्वारा जुड़ने से बनता है। इस कुल ढाँचे को ककाल या अस्थि-पंजर कहते हैं, और उसके टुकड़ों को अस्थियाँ या हड्डियाँ। (देखो चित्र न० २) शरीर के १०० भागों में १६ भाग ककाल के होते हैं। यदि मनुष्य का भार १॥ मन हो तो, उसके कंकाल का भार ९। सेर के लगभग होगा।

पचीस छब्बीस वर्ष की उमरवाले मनुष्य के शरीर में छोटी बड़ी कुछ २ ६ हड्डियाँ होती हैं। स्त्री पुरुषों के शरीर में इन हड्डियों की संख्या में कोई कमोबेशी नहीं है। नरकंकाल के ५ भाग हैं।

(१) कपर या करोटि (खोपड़ी) यह २२ हड्डियों से बनी है।

(२) पृष्ठवंश मेरुदण्ड रीढ़ या कसेरु, यह २६ हड्डियों से बना है।

(३) ऊर्ध्वशाखायें–प्रत्येक शाखा में ३२ हड्डियाँ हैं। दोनों में ६४।

(४) निम्नशाखायें–प्रत्येक शाखा में ३१ अस्थियाँ हैं। दोनों में ६२।

(५) वक्षस्थल में २५ विशेष अस्थियाँ हैं। मोवा में स्वरयन्त्र और ठोड़ी के बीच में एक अस्थि, और दोनों कानों में ६ छोटी छोटी अस्थियाँ हैं। इस प्रकार कुल मिलाकर २ ६ अस्थियाँ हैं।

वर्तमान अस्थि गणना में और प्राचीन गणना में बहुत कुछ अन्तर है। देखिये—

"त्रीणि सषष्टीन्यस्थिशतानि वेदवादिनो भाषन्ते। शल्यतन्त्रे तु त्रीण्येव शतानि। तेषां सविंशमस्थिशतं शाखासु सप्तदशोत्तरं शतं श्रोणीपार्श्वपृष्ठोदरोरःसु ग्रीवां प्रत्यूर्ध्वं त्रिषष्टिः, एवमस्थ्नां त्रीणि शतानि पूर्यन्ते ॥"

सुश्रुत शरीरस्थान अ० ५।१७

चरक और वाग्भट्ट में ३६० सुश्रुत और भावप्रकाश में ३ अस्थियाँ लिखी हैं। २०६ और ३६ या ३०० में बड़ा ही अन्तर है। ऐसा मालूम होता है कि प्राचीन विद्वानों ने जितनी कठोर वस्तुएँ शरीर में होती हैं, उन्हें अस्थि मान लिया है। उन्होंने कार्टलेज और अस्थि में कोई भेद नहीं माना। दाँतों को अस्थियों में गिना और नखों को भी अस्थि कहा है। ३० ४० वर्ष पहिले पाश्चात्य विद्वान भी दाँतों को अस्थियों में शुमार करते थे।

चित्र नं० २ मनुष्य शरीर की रक्त-वाहिनी शिराएं।

अब हम यहाँ एक चित्र ऐसा देते हैं, जिसमे शरीरस्थ नस नाड़ियाँ यकृत, गुर्दे रक्तवाहिनी नलियाँ, तन्तु और मांस-पेशियाँ भी दिखाई गई हैं। पाठक चित्रों को बहुत ध्यान पूर्वक देखें। सरसरी दृष्टि से देखने से काम नहीं चलेगा। देखिये चित्र नं० ३।

अभी तक नरशरीर के यहाँ दो चित्र दिये गये हैं, अब यहाँ पर एक चित्र पुरुष जननेन्द्रिय का दिया जाता है, जिसमे दिखाया गया है कि उपस्थेन्द्रिय का उदर से किस प्रकार सम्बन्ध है। गुर्दों से मूत्र-नलियाँ मूत्राशय में किस प्रकार आकर मिली हैं और उपस्थ का तथा मूत्राशय का सम्बन्ध किस प्रकार है। इस चित्र में लिङ्ग के ऊपर का चर्म हटाकर दिखाया गया है। देखिये चित्र नं० ४।

शरीरशास्त्र बड़ा ही गहन है। इस विषय पर संसार की सभी भाषाओं में सैकड़ों बड़े बड़े ग्रन्थ हैं। जिनका मूल्य हजारों लाखों रुपया है। किन्तु हिन्दी भाषा में इस विषय की पुस्तकें नगण्य हैं ऐसा कह दें तो अनुचित न होगा। इसमे लेखकों तथा प्रकाशकों का दोष नहीं है बल्कि पाठकों का है। क्योंकि लोगों का अभी इस ओर ध्यान नहीं गया है—यह उदासीनता हमारे लिये हानिकारक हो रही है।

यह जो कुछ भी, आप इस चित्र मे नरशरीर की रचना देख रहे हैं, उसकी रचना, वीर्य और रज द्वारा है और उन्हीं पर इसकी स्थिति भी है। आप चित्र नं०३ मे देखते हैं कि जो मोटे मोटे अङ्ग हैं, उनमें उनके लिये रक्त पहुँचाने योग्य, मोटी मोटी रक्तवाहिनी नाड़ियाँ हैं और जो जो अङ्ग पतले अथवा छोटे हैं, उनमें बारीक बारीक रक्तवाहिनी नाड़ियाँ हैं। ऐसे अङ्ग, जिनमें महीन महीन शिराएँ हैं वे निर्बल हैं :—जैसे हाथ की अँगुलियाँ, कान, आँख, नाक, उपस्थ, जिह्वा, पैर की अँगुलियाँ इत्यादि। जब कि शरीर निर्बल हो जाता है तो ये अङ्ग, सबसे पहिले निर्बल होते हैं। अर्थात् पतली नसें, इन्हें आवश्यकतानुसार खून नहीं पहुँचा सकतीं। मृत्यु समय भी पहिले पहिल हाथ पैरों की अंगुलियाँ, कान, जिह्वा, नेत्र, लिङ्ग आदि इन्द्रियाँ अपना काम छोड़ देती हैं।

उस समय हाथ पैर ठंडे पड़ जाते हैं सुनाई भी नहीं देता। जबान से बोला नहीं जाता। आँखें बन्द हो जाती हैं तथा भीतर धँस जाती हैं। मूत्र नहीं निकलता इत्यादि। सारांश यह है कि इस इन्द्रियों को सबल रखने के लिये, इस बात की आवश्यकता है कि शरीर को बलवान रखा जाय। शरीर में शुद्ध रक्त का संचार हो। परन्तु यह तभी हो सकता है जब कि वीर्य रक्षा हो और वीर्य-सम्बन्धी कोई भी बीमारी न हो।

हमारा विषय जननेन्द्रिय से सम्बन्ध रखता है, अतएव इस विषय पर हमें अच्छी प्रकार प्रकाश डालना चाहिये। बाह्य-जननेन्द्रिय पर विचार करने के पूर्व हमें अन्तरीय जननेन्द्रिय पर विचार करना चाहिये। अन्तरीय मूत्रवाहक संस्थान के मुख्य अङ्ग ये हैं—

१ वृक्क या गुर्दे (२)
२ मूत्र प्रणाली (२)
३ मूत्राशय (१)
४ मूत्रमार्ग (१)

जिस अङ्ग का काम मूत्र बनाने का है उसका नाम वृक्क या गुर्दा है। हमारे शरीर में दो वृक्क हैं। एक दाहिना दूसरा बायाँ। ये इन्द्रियाँ उदर में उसकी पिछली दीवार से लगी हुई रीढ़ के दाहिनी और बाईं ओर रहती हैं (देखिए चित्र नं० ९)। इनके सामने अन्त्र की गेंडुलियाँ पड़ी रहती हैं। हरेक गुर्दे के पीछे बारहवीं पसली रहती है। वृक्क का आकार लोबिये के बीज जैसा होता है। इसकी लम्बाई ४ इञ्च और चौड़ाई ५॥ इञ्च तथा मोटाई एक इञ्च होती है। वजन दो छटाँक से कुछ ही कम होता है। उसका रङ्ग बैंजनी होता है।

वृक्क के दो पृष्ठ होते हैं, एक सामने का दूसरा पीछे का दो किनारे होते हैं। एक रीढ़ के पास रहता है दूसरा उससे परे रहता है। दो सिरे होते हैं। दोनों पृष्ठ उभरे हुए होते हैं। रीढ़ की ओर का किनारा, लोबिये के काले निशानवाले किनारे की भाँति बीच में से दबा हुआ

चित्र न० ४

(नरवस्तिगह्वर)
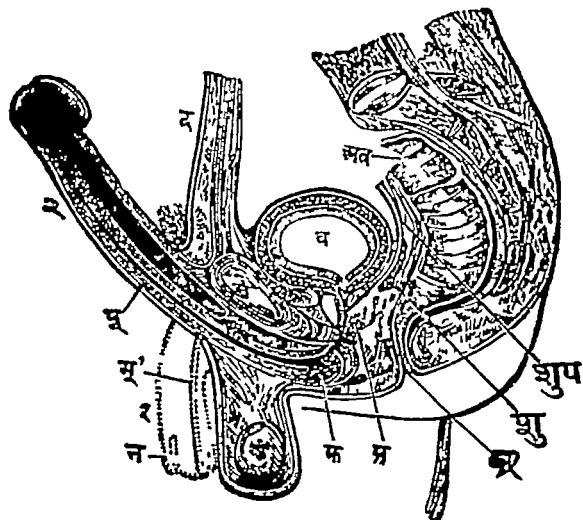
द = उदर की दीवार, व = वस्ति या मूत्राशय, शुप = शुक्रप्रणाली; शु = शुक्राशय, छ = मलद्वार, प्र = प्रोस्टेट, फ = मूत्रमार्ग का स्थूल भाग; अं = अंड, त = शिश्नाग्र त्वचा, पू = मूत्रमार्ग, मू = मूत्रमार्ग १ = शिश्न की शिथिलितावस्था, २ = शिश्न की दृढ़ावस्था (प्रहृष्ट शिश्न), स = विटप संधि (कटी हुई)।

चित्र न० ५ वक्ष, उदर मध्यस्थ, पेशी।
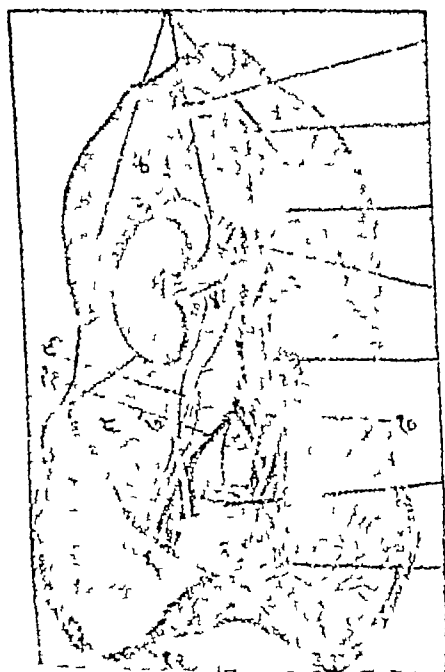
१—वृक्क, २—मूत्राशय ३—महाधमनी, ४—वक्ष उदर मध्यस्थ पेशी की कडरा, ५—वक्ष उदर मध्यस्थ पेशी, ६—उदर की अगली दीवार, ७—कटि-लम्बिनी पेशी, ८—श्रोणि पक्षिणी पेशी, ९—आदिकी धमनी, १०—महाधमनी का अन्त, ११—मूल श्रोणिगा धमनी, १२—उदर की दीवार।

होता है। दूसरा किनारा उभरा हुआ होता है और रीढ़ की ओर वाले किनारे से, अधिक मोटा और चौड़ा होता है और उसके ऊपर एक छोटा सा उप-वृक्क नामक अङ्ग रखा रहता है। जिस स्थान पर रीढ़ की ओर के किनारे में गढ्ढा होता है वहीं से वृक्क की धमनी भीतर घुसती है और शिरा बाहिर आती है, यहीं मूत्रप्रणाली का फूला हुआ प्रारम्भिक अंश उससे जुड़ा रहता है।

वृक्क के ऊपर सौत्रिक तन्तु से निर्म्मित एक झिल्ली चढ़ी रहती है, इसे वृक्ककोष कहते हैं। वृक्क के चारों ओर, विशेष कर उसके पीछे वसा रहती है।

वृक्क वास्तव मे अनेक पतली पतली नलियों का समूह है। ये नलियाँ लम्बी तो बहुत होती हैं, लेकिन चौड़ी बहुत कम। इन नलियों के अतिरिक्त उसमें धमनियाँ, शिराएँ, केशिका और बालसूत्र होते हैं। सब वस्तुएँ, कुछ सौत्रिकतन्तु द्वारा इकट्ठी रहती हैं। वृक्क के सबसे बाहिर के भाग में अनैच्छिक माँस की एक पतली तह होती है।

मूत्र प्रणालियाँ दो हैं (१) दाहिनी और (२) बाईं। ये नलियाँ स्वाधीन मांस और सौत्रिक तन्तु से निर्म्मित हैं। इनके भीतरी पृष्ठों-पर, श्लैष्मिक झिल्ली लगी होती है। प्रत्येक नली की लम्बाई १० से बारह इञ्च तक होती है। मूत्र प्रणाली के दो सिरे हैं, ऊपर का चौड़ा और फनल जैसा जो वृक्क से जुड़ा रहता है। नीचे का पतला जो वस्तिगह्वर में मूत्राशय से जुड़ा रहता है। वृक्क की मीनारों से मूत्र इस नली के चौड़े भाग में पहुँचता है, और उसमे बहता हुआ मूत्राशय में जाता है। मूत्रप्रणाली वही नली है, जिसमें पथरी के रोग में कभी कभी पथरी अटक जाती है। जिसके कारण रोगी को अत्यन्त पीड़ा होती है। (देखो चित्र न० ५)

मूत्राशय, वह थैली है जिसमे मूत्र गुर्दों से मूत्रप्रणालियों द्वारा आकर इकट्ठा हुआ करता है। यह अङ्ग, वस्तिगह्वर में विटप सन्धि (भगसन्धि) के पीछे रहता है। पुरुषों में उसके पीछे दो शुक्राशय

रहते हैं। और इनके पीछे बृहत् अन्त्र का अन्तिम भाग या मलाशय रहता है। स्त्रियों में मूत्राशय के पीछे गर्भाशय और गर्भाशय के पीछे मलाशय रहता है। जब मूत्राशय खाली होता है, या उसमें मूत्र थोड़ा होता है तो उसका आकार कुछ कुछ तिकोनिया सा होता है। जब वह मूत्र से भर जाता है, तब वह गोलाकार हो जाता है, और वस्तिगह्वर से ऊपर को निकल कर, पेट की अगली दीवार के पीछे आ लगता है।

स्त्री या पुरुष दोनों में मूत्राशय के सबसे नीचे के भाग से एक और नली का आरम्भ होता है, जिसे मूत्रमार्ग कहते हैं। पुरुष में इस नली की लम्बाई ७ या ८ इंच के लगभग होती है। प्रोस्टेट से आगे यह नली शिश्न के नीचे के भाग में रहती है। शिश्न की सुपारी में जो छेद होता है वह इसी नली का छिद्र है। इस छिद्र का नाम मूत्र-बहिर्द्वार है। इस नली में से ही वीर्य भी निकलता है। सूजाक में इस नली की श्लैष्मिक झिल्ली का प्रदाह हो जाता है।

स्त्रियों में मूत्रमार्ग की लम्बाई सिर्फ १॥ इंच ही होती है। इनके प्रोस्टेट ग्लाण्ड नहीं होता। इसका छिद्र योनि के छिद्र से भिन्न है और उससे १॥ इंच ऊपर होता है। (देखिये योनि चित्र नं० ६)

अब यहाँ यह प्रश्न होता है कि मूत्रबहिर्द्वार से मूत्र हर समय क्यों नहीं टपकता रहता ? इसका उत्तर यह है कि, जहाँ मूत्रमार्ग का आरम्भ होता है, वहाँ मूत्राशय की दीवार का मांस सिकुड़के छिद्र को सदैव बन्द रखता है। जब हम मूत्र त्यागना चाहते हैं, तब वह मांस ढीला पड़ जाता है और रास्ता खुल जाता है। मूत्राशय से निकल कर मूत्र, मूत्रमार्ग में पहुँचता है और बाहर निकलता है। कभी कभी रोगों के कारण मांस भली प्रकार नहीं सिकुड़ सकता तब मूत्र बूँद बूँद टपका करता है।

नीरोगी मनुष्य २४ घंटों में १। या १॥ सेर के लगभग मूत्र त्याग करता है। ग्रीष्म ऋतु में अधिक पसीना निकलने के कारण, और

चित्र नं ७ मूत्रेन्द्रिय और मूत्राशय

ऋतुओं की अपेक्षा मूत्र कम आता है। मूत्र का रंग गेहूँ की नाली के रंग से जरा गहरा होता है। रोगों में पेशाब का रंग बदल जाता है। ज्वरों मे गहरा पीला या लाली लिये होता है। उसका गुरुत्व १० १५ से १० २५ तक होता है। मूत्र मे एक विशेष प्रकार की गन्ध आया करती है। स्वस्थता मे ताजा मूत्र स्वच्छ होता है और उसकी प्रतिक्रिया अम्ल होती है। १॥ सेर मूत्र में कोई २३ छटाँक जल होता है, शेष १ छटांक या कुछ कम, वे रासायनिक पदार्थ होते हैं, जो उस जल में घुले रहते हैं। इस १ छटॉक मे से करीब ३ तोले के "यूरिया" (Urea) होता है, बाकी भाग में यूरिक अम्ल (Uric acid) अथवा अन्य कई प्रकार के अम्ल होते हैं। स्वस्थता मे मूत्र मे न तो प्रोटीन होती है और न शर्करा ही। जब मधुमेह नामक रोग हो जाता है, तब मूत्र में शर्करा निकलती है।

अब हम बाह्य जननेन्द्रिय के विषय में यहाँ विवेचना करेंगे। शिश्न इस शरीर में मैथुन करने का यन्त्र है। पुरुष वीर्य स्त्री-योनि मे इसी अङ्ग द्वारा पहुँचता है। इसी अङ्ग द्वारा मूत्र भी शरीर से बाहिर निकलता है। शिश्न की लम्बाई और मोटाई, सब पुरुषों में एक सी नहीं होती। शिथिलतावस्था में लिङ्ग की लम्बाई सामान्यतः ३ या ४ इच, और उसकी परिधि ३ इच के लगभग होती है। जब उत्तेजना होती है तब वह अधिक लम्बा और मोटा हो जाता है, और उसमें कठोरता आ जाती है। शिश्न के कठोर हो जाने को प्रहर्ष कहते हैं।

शिश्न का अगला भाग शंकाकार होता है, और उसको शिश्नमुण्ड, मणि, शिश्नाग्र या सुपारी भी कहते हैं (देखो चित्र ७ में १३)। सुपारी में एक छिद्र होता है जिसे मूत्र बहिर्द्वार कहते हैं। (चित्र ७ में १४) मूत्र और वीर्य इसी छिद्र से बाहर निकलते हैं। सुपारी की खाल ऊपर को हट जाती है, और फिर उसके ऊपर आ जाती है। इसे शिश्नाग्रत्वचा या घूँघट कहते हैं। मुसलमानों में इस खाल को कटा

बांधने का रिवाज है, जिसे खतना (सुन्नत) कहते हैं। कभी कभी यह चमड़ी तंग होती है और सहजही में ऊपर की ओर नहीं सरक सकती। जब यह बहुत तंग होती है, तो मैथुन करने में कुछ कठिनता होती है। बच्चे मूत्र त्यागते समय जोर लगाया करते हैं और कभी कभी दर्द के कारण रो भी देते हैं। ऐसी दशा में माता पिता को भूल नहीं करनी चाहिये। तुरन्त ही उसे कटा देनी चाहिये या अन्य किसी उपाय द्वारा ढीला करवा देना चाहिये।

लिंग सौत्रिकतन्तु और अनैच्छिक मांस से निर्मित तीन बेलनाकार दण्डों से बनता है। इनमें से दो दण्ड पास पास और समानान्तर शिश्न के ऊपर के भाग में रहते हैं, तीसरा दण्ड जो भीतर से खोखला होता है इन दोनों दण्डों के नीचे रहता है। जो नली इस नीचे वाले दण्डमें रहती है, उसे मूत्रमार्ग कहते हैं। (चित्र नं ७ से १२) ऊपर का प्रत्येक दण्डा शिश्नदण्डिका कहलाता है, और नीचेके दण्डको मूत्रदण्डिका कहते हैं।

शिश्नदण्डिकाओंके गोल होनेके कारण उनके बीचमें ऊपर और नीचे एक अन्तर रहता है। ऊपरके अन्तरमें शिश्नकी दो धमनियाँ एक शिरा और ० नाड़ियाँ रहती हैं। धमनी की चाल, लिंगको एक जगह दबाकर मालूमकी जा सकती है। नीचेका अन्तर गहरा होता है और यहां मूत्रदण्डिका रहती है।

तीनों दण्डोंके भीतर छोटे छोटे आशय या कोष्ठ होते हैं जो मैथुन के समय रक्तसे भर जाते हैं। जिस प्रकार कपड़ेका थैला, पानीसे खूब भर जाने पर दृढ़ हो जाता है; उसी तरह इन आशयोंके भीतर खून भर जानेसे लिंगमें मोटाई और कड़ापन आ जाता है। जब वीर्यपात हो चुकता है, तब आशयोंका खून शिराद्वारा लौट जाता है और बाकी नस की तरह लिंग भी मुलायम और शिथिल हो जाता है।

लिंगके नीचे एक थैली होती है, जिसे अंडकोष या वृषण कहते हैं। थैली बहुत पतली खाल की होती है, और उसपर बाल होते हैं।

चित्र नं० ८ अंड।

अं—शुक्र ग्रंथि।

उ = उपांड।

१ = उपांड शिर।

२ = उपांड शरीर।

३ = उपांड पुच्छ।

४ = नाल

शि = शिराएँ।

ध = धमनियाँ।

न = नाड़ियाँ।

श = शिरा व्यूह।

अडकोपोंकी खाल सिकुड़ और फैल सकती है। यदि आप ध्यान-पूर्वक अंडकोपको देखेंगे तो आपको उसमें सिकुड़नेकी लहर सी दिखाई पड़ेगी। शीतके कारण अंडकोप सिकुड़ जाते है, और गर्मीके कारण फैल जाते है। वृद्ध पुरुषोंके तथा वीर्यहीन पुरुषोंके अडकोप प्रायः ढीले लटके रहते है। इस चमड़ेकी थैलीमें दो अंडे हैं। इन अडोंकी लम्बाई १॥ से १॥। इंच, चौड़ाई १ इंच से कुछ कम होती है और वजन एक तोलेके लगभग होता है (देखो चित्र नं० ८)।

हम पीछे लिख आये हैं कि लिंगके अग्रभागमें मांस कुछ उठा हुआ होता है, और आगेकी ओर ढालू तथा नुकीला होता है। इसे सुपारी कहते हैं, क्योंकि इसका रूप सुपारी जैसा ही होता है। अधिकांश पुरुषोंकी यह सुपारी चमड़ेसे ढकी रहती है, और किसी किसी की सदा खुली भी रहती है। सुपारीको ढकने वाले इस चर्मको घूंघट कहते हैं। उत्तेजनाके वक्त यह घूंघट खुदबखुद आधेके लगभग सुपारीसे हट जाता है। घूंघटके अग्रभागके चर्मको यदि पीछे ढकेला जावे तो वह लगभग ३ इंचतक पहुँच जाता है। चमड़ेके, सुपारी पर ढके रहनेके कारण सुपारी पर एक प्रकारका सफेद बदबूदार मैल पैदा हो जाता है। यह मैल एक घण्टे ढके रहने पर भी पैदा हो जाता है। इसे नित्य सायं प्रातः दोनों समय, शुद्ध और शीतल जलसे धो डालना चाहिए। यदि यह शुद्ध नहीं किया जावे तो सुपारीका चमड़ा गल जाता है और उसपर फुन्सियें पैदा हो जाती हैं। सुपारीको यदि कभी कभी थोड़े नमकके पानीसे धो दिया जावे तो और भी अच्छा है। महीनेमें खोपरेका या शुद्ध तिल्लीका तेल भी सुपारी पर लगा देना चाहिये। स्मरण रखिये, दूसरे तेल जो सुगन्धित होते हैं, उनका प्रयोग करना हानिकारक है। क्योंकि वे मिट्टीके तेल (White oil) पर बने हुए होते हैं। मसाले आदिका तेल भी मत लगाओ। सरसों का तेल लगानेसे जलन होने लगती है। सारांश यह कि, खोपरा या

लिङ्गीका शुद्ध तेल ही लाभदायक होगा। जो लोग लिंगेन्द्रियके इस मैलको नित्य शुद्ध नहीं करते उन्हें अवश्य ही स्वप्नदोष हो जाता है।

कई पुरुषोंकी लिंगेन्द्रियके मुखका चमड़ा नहीं खुलता। वह सुपारी का इतनी मजबूती से घेर लेता है कि उसमें सिर्फ मूत्र आनेका एक बारीकसा छिद्र रह जाता है। ऐसे लोगोंको पेशाब करने में भी बड़ा वक्त लगता है, और कभी कभी चीसके साथ पेशाब होता है। यहीं उनके लोगोंके लिए आपरेशन कराना ही ठीक है। ऐसे लोगोंकी जननेन्द्रिय अच्छी तरह नहीं बढ़ने पाती छोटी रह जाती है, ऐसी हो जाती है और स्वप्नदोष तो बना बनाया है ही। ऐसे आदमियोंको विवाह नहीं करना चाहिए, क्योंकि चर्मके आच्छादित हो जानेसे वीर्य भली भाँति वीर्य गर्भाशय तक नहीं जा सकता। ऐसे पुरुषोंको नपुंसक मानना चाहिये।

अच्छी लिंगेन्द्रिय वही है, जो सीधी कुछ ऊपरको उठी हुई, न अधिक लम्बी और न अधिक छोटी; न अधिक पतली और न अधिक मोटी; कठोर, सुडौल, और जिसका घूंघट सहजही अच्छी तरह खुलता हो। अग्रभाग कुछ झुकीला हो और मूत्र मार्गका मुख चौड़ा न हो। जिनकी इन्द्रियमें कुछ दोष हों उन्हें शीघ्र ही औषधोपचार द्वारा दोष हटानेकी चेष्टा करनी चाहिए। परन्तु जिनकी लिंगेन्द्रिय छोटी और पतली हों उन्हें २ वर्षकी उमरके पूर्व ही, फिकर करनी चाहिये। औषधियों द्वारा इन्द्रिय अच्छी हो सकती है, बशर्ते कि किसी "नीम हकीम" या "ऊँट वैद्य" की औषध न की जावे। यह बहुत ही नाजुक मामला है, अतएव बड़े भारी विचारके बाद ही, अच्छे वैद्यसे औषध कराना चाहिये। यत्नसे अवश्य ही सफलता होगी। पाठक ऐसी औषधका नुस्खा यहाँ न पाकर दुःखित अनुभव करेंगे, किन्तु नुस्खे लिखकर, पुस्तकका कलेवर बढ़ाना, तथा विषय विरुद्ध लेजानी बढ़ाना ठीक नहीं है।

प्रायः देखा गया है कि लिंगेन्द्रियके दोष बाल्यावस्थामें ही पैदा

हो जाते हैं। हमारे देशके बालक छः सात वर्षकी उम्रतक प्रायः नंगे फिरते रहते हैं, तब समझदार माता पिता उनकी लिंगेन्द्रियका घूँघट खोलकर दूसरे तीसरे दिन धो दिया करते हैं। किन्तु जिन माँ बापको इस बातका ज्ञान ही नहीं है, वहाँ तो ईश्वर ही मालिक है। धोती बाँधना आनेके बाद तो बच्चोंकी लिंगेन्द्रिय धीरे धीरे बिगड़ने लगती है, क्योंकि उनके माता पिता इस विषयमें उन्हें कुछ भी हिदायतें नहीं देते। यदि छुटपनसे ही उन्हें इन्द्रियको धोकर साफ पाक रखने का ध्यान दिलाते रहें तो, फिर वे उम्र भर उसमें भूल नहीं करते। अथवा कुछ समझदार बालकोंको, वीर्यरक्षा सम्बन्धी और लिंगेन्द्रिय सम्बन्धी, थोड़ी बहुत जरूरी बातें किसी ढंग से समझादी जावें, तो सारा झगड़ा ही निपट जावे तथा स्वप्नदोष आदि रोग अपनी जड़ ही न जमाने पावें। माता पिताको इस विषय में लज्जा अथवा बेपरवाही नहीं करनी चाहिये। क्योंकि आरम्भिक थोड़ी सी भूल से आगे चलकर बड़े बड़े दुःख खड़े हो जाते हैं।

यदि इस प्रकार की स्वास्थ्य-सम्बन्धी छोटी छोटी बातों का बालकों को उनके गुरु-आध्यापकवर्ग, किसी बहाने या ढङ्ग से जिक्र करते रहा करें तो भी काम चल सकता है। किन्तु जितनी सुगमता से मा-बाप अपने बच्चों को उपदेश दे सकते हैं, उतना अध्यापक नहीं कर सकते। पाठशालाओं में, कम से कम प्रतिमास ऐसा एक दिन “शिक्षा विभाग” को मुकर्रर कर देना चाहिये कि, जिस दिन केवल बालकोपयोगी स्वास्थ्य, सफाई, विद्या, व्यायाम, प्रेम, इत्यादि विविध विषयों पर, उनके समझ में आने योग्य सीधीसादी भाषा में व्याख्यान हुआ करें। यदि स्वयम् गुरु ऐसी बातें अपने शिष्यों के सामने कहने में कुछ सङ्कोच करें, तो डाक्टर या वैद्य को अपनी पाठशाला में बुलाकर उनसे इस विषय पर विद्यार्थियों को उपदेश दिलाना चाहिये। इस प्रकार की शिक्षाप्रणाली से देश का बहुत कुछ भला हो सकता है। साथ ही हमारा नवयुवक समाज इस “स्वप्नदोष” नामक

भयङ्कर रोग से सर्वथा बच सकता है। इस अति आवश्यक बात की अवहेला होने से देश की यह दशा हो गई है। हमारे देश में, पाश्चात्य शिक्षा प्रणाली की उन्नति और पौरस्त्य ढङ्ग के ब्रह्मचर्याश्रम धारण पूर्वक विद्याभ्यास की प्रणाली का देश से अस्तमाव होना ही इस सारे दुःख की जड़ है।

वीर्य

जिस जगह वीर्य रहता है उसे वीर्याशय अथवा शुक्राशय कहते हैं। (देखो चित्र नं० ४ में शु)। ये दो थैलियाँ हैं जो वस्तिगह्वर में मूत्राशय के पिछले भाग से लगी रहती हैं। इनके पीछे मलाशय रहता है। शुक्राशय लम्बाई में कोई २।२ इंच होता है। यह सब मनुष्यों में एक ही परिमाण में नहीं पाया जाता। इसका ऊपर का सिरा मोटा होता है और नीचे का पतला और नुकीला भी होता है, थैली के मध्यभाग से शुक्रनाली लगी रहती है (देखो चित्र नं० ९)। शुक्रनाली का अन्त थैली के नीचे वाले नुकीले सिरे में होता है। जहाँ शुक्रनाली शुक्राशय से जुड़ती है वहीं से एक नलीका आरम्भ होता है (चित्र नं ९ में ४) इस नलीको वीर्यस्रोत कहते हैं। यह वीर्यस्रोत प्रोस्टेट ग्रन्थि के भीतर घुसकर मूत्रमार्ग में खुलता है। (देखो चित्र ७ में ५)

कामोत्तेजना से अथवा किसी रोग से जो एक सफेद रङ्ग का लसदार पदार्थ लिङ्गेन्द्रिय से निकलता है, उसे वीर्य कहते हैं। चिकने

चित्र नं० ९ (शुक्राशय)
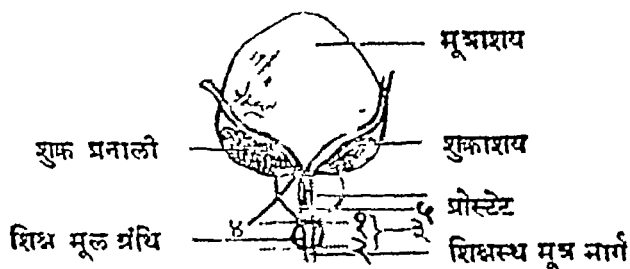
१, । २ = दो कलायें।

३ = कलाओं के बीच में रहने वाला मूत्रमार्ग का भाग।

४ = शुक्र स्रोत।

५ = प्रास्टेट में रहने वाला मूत्र मार्ग का भाग।

चित्र नं० १० (शुक्राणु)

श = शिर।

ग = ग्रीवा।

म = मध्य भाग।

प = पुच्छ।

अ = अन्तिम भाग।

स = सूत्र।

के समय, यह किञ्चित् उष्ण होता है, किन्तु थोड़ी ही देर में ठण्डा हो जाता है। इसमें एक प्रकार की दुर्गन्ध होती है, जो अपने ही ढंग की है। लकड़ी की राख में पानी डालकर मसलने से जो गन्ध आती है, उससे यह गन्ध बहुत कुछ मिलती जुलती होती है। रसायनशास्त्र के ज्ञाताओं का कहना है कि वीर्य मे तीन प्रतिशत 'आक्साइड आव परोटन' ४ भाग स्नेह, ५ भाग फास्फेट आव लाइम, क्लोराइड आव सोडियम, कुछ फास्फेट और कुछ फास्फरस है। तथा ८० से ९० भाग तक जल है। यह लिंगेन्द्रिय को रगड़ने या घिसने से बूँद बूँद करके टपकता है। यह पानी से-वजनदार-वस्तु है। निर्वल अथवा दूषित-वीर्य हलका होता है। एक बार में एक जवान तन्दुरुस्त पुरुष का, लगभग डेढ़ तोला वीर्य निकलता है। इसमें सारा भाग वीर्य नहीं होता, वीर्य तो लगभग आठ या नौ माशे होता है। शेष उसी रग का एक श्वेत पदार्थ होता है, जो प्रोस्टेट (Prostate) नामक ग्रंथियों मे पैदा होता है। अच्छे वीर्य को यदि पानी में डाला जावे, तो वह डूब जाता है। अच्छे वीर्य मे चेप अधिक होता है, गाढ़ा होता है और उससे कपड़े पर कलफ सा हो जाता है, अर्थात् सूख जाने पर कपड़े में करोपन आ जाता है। निकलने के थोड़ी देर बाद वीर्य का लेस कम हो जाता है, और सूख जाने पर, पीले या मट मैले रग की पपड़ी सी जम जाती है। शुक्र से भीगे हुए कपड़े को, आग पर तपाया जावे तो रग गहरा हो जाता है। मथे हुए दही के समान, गाढ़ा वीर्य ही उत्तम वीर्य माना गया है। स्वाद में यह कुछ कडुवा तथा तुराई लिये होता है। वीर्य, ग्वार पाठे के गूदे की तरह लेसदार पदार्थ है। पीला, भूरा, लाल, काला या नीले रग का वीर्य शुद्ध वीर्य नहीं है। लाल रग का वीर्य अपक्व होता है। यह बहु मैथुन का परिणाम होता है। पक्व वीर्य के अभाव में ही यह बलात् बाहिर निकाला जाता है। पीले रग का वीर्य बिलकुल निकम्मा और सन्तान पैदा करने के अयोग्य होता है। केवल सफेद रग का गाढ़ा वीर्य ही उत्तम है, अन्य

नहीं। सफेद रंग का और गाढ़ा वीर्य ही, नीरोगी बालक उत्पन्न कर सकता है। जिनको स्वप्नदोषादि रोग होते हैं, उनका वीर्य ठीक नहीं होता। स्वप्नदोष के रोगी का वीर्य पतला होता है, जिसमें सन्तानोत्पादक कृमि निर्बल होते हैं।

वीर्य को यदि खुर्दबीन, सूक्ष्म-दर्शक यन्त्र (Microscope) की सहायता से देखा जावे तो उसमें करोड़ों कीड़े देखे जा सकते हैं। कभी कभी एक समय के वीर्यपात में इन कीड़ों की संख्या २० करोड़ तक देखी गई है। नीरोगी तथा बलवान पुरुष के वीर्य में कीड़े बलवान तथा मोटे पाये जाते हैं, और दुबल के वीर्य में कम तथा निर्बल। यहाँ हम एक चित्र देते हैं जिसमें वीर्य के कीड़ों का रूप तथा गति बताई है। (देखो चित्र नं० १०)

डाक्टरों का कथन है कि वीर्य में अनेक दूसरे पदार्थ भी होते हैं। (Liquor semeni) लाइकरसेमेनिस जिसे वीर्य का जल कहते हैं। एक दूसरी वस्तु अण्डेके समान सफेद रंगकी होती है जिसे (Albumin) एलब्यूमिन कहते हैं, जिसे हम ओज कहते हैं। इसके अलावा ठोस परमाणु भी पाये जाते हैं जिनके दो भाग किये हैं (१) सेमिनल ग्रेन्यूल्स अर्थात् वीर्यके दाने और (२) स्परमेटोजुआ अर्थात् वीर्यजन्तु।

ये वीर्यके दाने इतने बारीक है कि जिनकी गोलाई [illegible] इंचके लगभग होती है। स्परमेटोजुआ अर्थात् वीर्यजन्तु दुमदार कीड़े होते हैं। ये सजीव होते हैं। जिस तरह मछलियाँ जलमें तैरती हैं, उसी तरह ये कीड़े भी सर्पकी तरह अपनी दुम हिलाते हुए वीर्यमें घुमते फिरते हैं। अच्छी बढ़िया खुर्दबीनसे यह दृश्य देखा जा सकता है। इन कीड़ोंकी गति सदा आगेकी तरफ होती है। पीछेकी ओर नहीं। यदि वीर्यकोषकी गर्मीके समान, किसी कांचकी शीशेमें वीर्य रख दिया जावे तो ये वीर्य जन्तु २४ घण्टे और कभी कभी तो ७२ घंटे तक जीवित रहते हैं। यही कारण है कि पिचकारी द्वारा भी गर्भ धारण कराया

जा सकता है। मरे हुए पुरुषके अण्डकोषोंमें ये जन्तु कभी कभी २४ घंटे तक जिन्दे रहते हैं, जब ये कीड़े मरजाते हैं तो इनकी दुम सीधी हो जाती है।

वीर्यजन्तु वीर्यके तरलमें तैरा करते हैं। निर्बल वीर्यजन्तु धीरे धीरे चलते हैं और बलवान शुक्रकीट बड़ी तेजीसे फिरते हैं। एक ही मनुष्यके शुक्रमे, कभी शुक्रकीट कम होते हैं और कभी ज्यादः तथा कभी कभी होते ही नहीं। जिन पुरुषोंके वीर्यमे वीर्यजन्तु कभी होते ही नहीं अर्थात् जिनकी शुक्रग्रंथियोंमें ये बनते ही नहीं, वे पुरुष सन्तानोत्पत्ति नहीं कर सकते, वे मैथुन करनेमे समर्थ भले ही हों। अनुमान है कि १ घन शतांशमीटर शुक्रमें ६ करोणोंसे ८ करोड़ तक वीर्य कीट रहते हैं। जितना शुक्र एक मैथुन क्रियामे निकलता है, उसमे इनकी सख्या १८००००००० से २२६००००००० तक होती है।

वीर्य में जन्तु हैं, यह बात अधिकांश मानी जाती है, किन्तु कई लोगोंका कहना है कि "वीर्यमे जन्तु नहीं हैं। केवल वीर्यके ठोस परमाणु गर्मीके कारण और वीर्यकी तेजीसे, खुर्दबीन द्वारा चलते हुए दिखाई देते हैं, वास्तवमें देखा जावे तो उनमे जीव नहीं है इत्यादि।" हमारी सम्मतिमें, वीर्यमे सजीव जन्तु हैं, जो स्त्रीके गर्भाशयमे पहुँचकर गर्भ धारण कराते हैं। देखा गया है कि घोड़े, कुत्ते, चूहे, बकरे बैल आदि प्राणियोंके वीर्यमें जन्तु अलग अलग शक्लके हैं। इससे स्पष्ट होता है कि जैसे बीजोंमें अंकुर रूपसे वृक्ष छुपा होता है, उसी तरह मनुष्यके वीर्यमें भी कीड़े हैं। हम वीर्यमे कीड़ोंका होना मानते हैं।

वीर्य कैसे बनता है? इसे हम सक्षिप्तमे यहाँ लिखेंगे। आयुर्वेदमें सात धातुएँ मानी गई हैं। १ रस २ रक्त ३ मांस ४ मेदा ५ अस्थि ६ मज्जा और ७ वीर्य। जो कुछ भी हम खाते हैं, वह प्रथम आमाशयमें जाकर पकता है और रस बन कर पक्वाशय (छोटी अँतड़ियों) में चला जाता है—वहाँ मलमूत्र अलग हो जाता है, और वहीं रस रक्तरूप में हो जाता है। इस रुधिर को जठराग्नि फिर पकाता है

और उसमें से पित्त मल अलग होकर, शुद्ध परमाणु मांस बन जाते हैं। जठराग्नि द्वारा मांस से मेदा (चर्बी) बनता है। जब मेदा जठराग्नि द्वारा पकता है, तब इससे अस्थि बनती है। इस मेदा का मल ही लिंगेन्द्रिय का सफेद मैल दाँत और जीभ पर का मैल तथा पसीना आदि है। अस्थि से जठराग्नि मज्जा बनाता है और मज्जा से वीर्य उत्पन्न होता है। जिस प्रकार किसी पदार्थ का यन्त्र द्वारा सार रूप थोड़ा सा इत्र बनता है उसी तरह हमारे भोजन का कई प्राकृतिक मशीनों में चढ़ने के बाद मलों को त्यागता हुआ सार रूप वीर्य बनता है।

यहाँ यह न समझ लेना चाहिये कि आज खाया और आज ही वीर्य बन गया। नहीं आज के भोजन का तीसवें दिन कहीं वीर्य तय्यार होगा। पाठक अब स्वयम् विचार लें कि, रात दिन कार्य में लगी रहकर जठराग्नि कितने परिश्रम से ३ दिन में एक दिन के खाये हुए पदार्थों का रस निकाल कर, उसमें से सार भाग लेती हुई और मलों को त्यागती हुई वीर्य बनाती है। जरा वीर्य की बहुमूल्यता को सोचिये। लोगों को यह न सोच लेना चाहिये कि आज सेर तीन पाव भोजन का कम से कम आज पाव या तीन छटाँक वीर्य बन जाता होगा। प्रत्येक धातु को पूर्ण रूप प्राप्त करने में लगभग ४॥ दिन लगते हैं। सारांश यह कि कहीं ८० बूँद शुद्ध खून से वीर्य की एक बूँद बनती है। दूध घृत आदि पौष्टिक पदार्थों के सेवन से वीर्य कुछ जल्दी और अधिक रूप में तय्यार होता है।

वीर्य बनने का क्रम निरन्तर जारी रहता है, अतएव अनेक लोगों को यह भ्रम होता है कि—"नित्य प्रति थोड़ा थोड़ा वीर्य बनता है, तो मा दो चार साल में आठ दस छटांक तो इकट्ठा हो ही जावेगा यदि उसे व्यय न किया जावे तो वह रहेगा कहाँ? स्वप्न में अथवा किसी दूसरी तरह निकलेगा ही! इत्यादि।" इसका उत्तर यह है कि वीर्य का जठराग्नि द्वारा पचना ही शरीर को दृढ़ता पुष्टि और वृद्धि

देता है। जो लोग वीर्य को पचने के पूर्व ही नष्ट कर देते हैं उनका शरीर अतिशय निर्बल, निस्तेज और निकम्मा हो जाता है। वीर्य से तेज उत्पन्न होता है, जो मनुष्य को ओजस्वी, बलवान् और कान्तिमान् बनाता है। जैसे दीपक में तेल जलता है, वैसे ही यह वीर्य रूपी तेल इस मानव शरीर रूपी दीपक में जलकर प्रकाश करता है। जिस तरह बिना तेल के सब साधनों के होते हुए भी, दीपक प्रकाश नहीं कर सकता, उसी तरह बिना वीर्य के शरीर भी प्रकाशित नहीं हो सकता। तात्पर्य यह कि वीर्य, शरीर में तेल की तरह जलता हुआ मस्तिष्क, बुद्धि, शरीर और मन को बलवान बनाता है, अतएव उसका खर्च होना जरूरी नहीं है। ऐसे मूर्खतायुक्त विचारों को एक दम अपने दिल से हटा देने चाहियें। व्यायाम अर्थात् परिश्रम से वीर्य शरीर में जजब होता है, और उसे सबल तथा पुरुषार्थी बनाता है। यदि जितना वीय बने, उसे निकाल दिया जावे तो फिर उसके स्थान पर मैथुन में मज्जा आदि दूसरी शरीरस्थ धातुएँ निकलने लगती हैं और कामी की कामना को पूर्ण करती हैं, लेकिन शरीर नष्ट हो जाता है।

अब यहाँ यह प्रश्न होता है कि "वीर्य किस अवस्था में बनने लगता है?" कुछ लोगों का कहना है कि वीर्य जवानी में ही बनता है, और कुछ लोगों का कहना है कि १२ वर्ष की उम्र से वीर्य बनना आरम्भ हो जाता है। परन्तु असली बात तो यह है कि जब से मनुष्य आहार करता है तभी से वीर्य बनता है, अर्थात् वीर्य जन्म से ही बनता है। और मृत्यु पर्यन्त बनता रहता है, बशर्ते कि पेट में भोजन पहुँचता रहे। अब दूसरा प्रश्न यह पैदा होता है कि "प्रायः बच्चों को वीर्य नहीं होता इसका क्या कारण है?" इसका उत्तर यह है कि—बालकों के हृदय में काम-विकार उत्पन्न नहीं होता, अतएव किसी प्रकार का जोश न होने से, वह शरीर में ही पचता है और उनके शरीर की दिनदूनी रातचौगुनी वृद्धि करता है, यदि ऐसा न हो तो उनके शरीर की वृद्धि भी न हो। स्मरण रहे, मानव शरीर की पूर्ण

वृद्धि २१ वर्ष की उम्र तक होती रहती है बशर्ते कि वीर्यरक्षा की गई हो और व्यायाम द्वारा वीर्य को शरीर में ही शोषण किया गया हो। इस उम्र के पूर्व ही जिनका वीर्यपात होने लग गया हो उनके शरीर की वृद्धि तो दूर रही बल्कि उल्टी घटती आरंभ हो जाती है। सुश्रुत ने इस विषय पर इस प्रकार समझाया है—

"यद्यपि पुष्प की कली कली में सुगन्ध मौजूद है, तथापि मालूम नहीं होती और विकसित तथा पक्व होने पर उसी में सुगन्ध आने लगती है। इसी प्रकार बालकों में वीर्य होता है, किंतु मालूम नहीं होता। वयस्क होने पर मालूम होने लगता है।"

कभी कभी तो इस वर्ष के बच्चों को भी वीर्य सा सफेद पदार्थ बीमारी आदि के कारण पेशाब के साथ या पाखाने के समय जोर करने पर, निकलता देखा गया है। यह वीर्य ही होता है। जो बालक इस उम्र में हस्तमैथुन आदि कुक्रिया द्वारा अपना वीर्य निकालने लगते हैं वे जल्दी ही मर जाते हैं। तेरह चौदह वर्ष के बालकों की लिंगेन्द्रिय में उत्तेजना होने लगती है, किन्तु वह समय वीर्यपात का नहीं है। अभी तो वीर्य जमा करने के लिये इस ग्यारह वर्ष बाकी हैं। अक्सर देखा जाता है कि हमारे देश के बच्चे आजकल तेरह चौदह वर्ष की उम्र से ही, कुसंगति में पड़कर वीर्यपात करने लग जाते हैं। यदि इस उम्र में बच गये तो १६ या १७ वर्ष की अवस्था में तो उन्हें जवानी का जोश चढ़ जाता है। इस समय वे अपने को नहीं सँभाल सकते और इधर उधर अपना मुँह काला करते हुए, वीर्य को जैसे बने तैसे निकालना शुरू कर देते हैं। ऐसी अपूर्व दशा में वीर्यपात आरंभ कर देने से ही लिंगेन्द्रिय निर्बल हो जाती है, वीर्य दूषित हो जाता है और स्वप्नदोष का श्रीगणेश हो जाता है।

बड़े ही आश्चर्य की बात तो यह है कि सन्तान उत्पन्न करने वाले माता पिताओं को भी यह पता नहीं है कि बच्चों का उचित पालन, देखभाल किस प्रकार होनी चाहिये? किन किन बातों की

हिदायतें देकर उन्हें पूर्णायु तथा बलिष्ठ बनाया जा सकता है ? बल्कि अनुचित आहार विहार द्वारा खुद अपने हाथों उनका नाश करते रहते हैं। ऐसे माता पिता, माता पिता कहलानेके कदापि अधिकारी नहीं हैं। स्पष्ट शब्दोंमें यों कहा जा सकता है कि आजकल स्त्री पुरुषों का समागम सुसन्तान पैदा करनेके लिये नहीं होता, बल्कि केवल अपनी कामेच्छा पूर्ण करनेके लिये होता है। यही कारण है कि माता-पिता को, अपने बच्चोंकी शारीरिक उन्नति और चरित्र सुधारकी कुछ परवाह नहीं रहती। इस लापरवाहीसे ही उनका जीवन बरबाद हो जाता है। यदि इन्हें अपने बच्चे प्यारे हों और हानि लाभका कुछ भी ज्ञान हो, तो २४ वर्षके पहिले अल्पायुमें अपने पुत्र पुत्रियोंके विवाह करके उन्हें रोगी बनाकर मौतके मुँहमें नहीं ढकेलते ! परन्तु अज्ञानी माता पिता बालविवाह की पैनी छुरी अपने बच्चोंके कण्ठपर स्वयं चला रहे हैं॥ इस बालविवाहकी बदौलत ही देशमें "स्वप्नदोष" की बीमारी वृद्धि पा रही है।

सबसे बड़ी भारी आवश्यकता तो देशको इस समय इस बातकी है कि पति पत्नी अधिक मैथुन न करके वीर्यरक्षा करते हुए ही सन्तान उत्पन्न करें। मनु जी कहते हैं :—

"निन्द्यास्वाष्टसु चान्यासु स्त्रियो रात्रिषु वर्जयन्।
ब्रह्मचार्येव भवति यत्र तत्राऽऽश्रमे वसन्॥"

अर्थात्—जो मनुष्य, विषम और निन्दित ६ रात्रियों को छोड़कर ऋतुगामी होता है, वह किसी भी आश्रम में क्यों न हो, ब्रह्मचारी होता है। स्मरण रहे, कि मासिकधर्मके १६ वें दिन बाद गर्भाशयका मुख बन्द हो जाता है, अतएव बादमें मैथुन करना केवल अपना जीवन नष्ट करना है। कुछ लोगोंका कहना है कि रजोधर्मके पूर्व भी गर्भका मुख खुल जाता है, किन्तु यह बात बहुसम्मत न होने से ठीक नहीं मालूम होती। नियम पूर्वक रहते हुए यदि सन्तान शीघ्र ही न हो तो कोई

चिन्ता नहीं—सन्तान अवश्य होगी बशर्ते कि स्त्री पुरुषका रज-वीर्य शुद्ध हो। यदि सन्तान देरसे हो तो वह दीर्घजीवी और होनहार होगी। अपनेसे कम उमरवालोंको सन्तान देखकर, दिलमें खेद न लाना चाहिए, क्योंकि उनका सन्तान सुख चिरस्थायी नहीं है। यदि चिरस्थायी भी है तो वह सुख नहीं बल्कि दुःख है। ब्रह्मचर्यधारणपूर्वक प्रकृतिके नियमोंको पालन करते हुए, अच्छी सन्तान पैदा करनेके लिए ही स्त्री समागम करना उचित है। अनेक बुरी सन्तान होने की अपेक्षा एक अच्छी सन्तानका होना उत्तम है, क्योंकि :—

"एकश्चन्द्रस्तमो हन्ति न च तारागणोऽपि च।"

यदि माता पिताको, किसी कोई वीर्य सम्बन्धी बीमारी हो जैसे स्वप्नदोष प्रमेह, इत्यादि तो उसे हटाकर ही सन्तान पैदा करनी चाहिए, अन्यथा सन्तान निकम्मी होगी और वही बीमारी उसे भी अवश्य होगी।

एक बात और भी है कि आजकल मा बाप अपनी सन्तान की वीर्य सम्बन्धी बीमारी का हाल जान लेने पर भी उसका औषधोपचार नहीं करते। प्रथम तो बालक, माता पिता के आगे ऐसी बीमारियों के कहने में सकुचाता है, और यदि जैसे तैसे हिम्मत बाँध कर कह भी दे तो मा-बाप ऐसी बात का इस कान से सुनकर उस कान से निकाल देते हैं। या यों कहिए कि अधिकांश लोगों को ऐसी बीमारियाँ देख कर, माता पिता उस रोग को तुच्छ समझते हैं। एक बार एक १५, १६ वर्ष की उम्र के लड़के ने बड़ी ही लज्जा और संकोच के साथ डरते हुए अपने पिता से कहा—"मुझे स्वप्नदोष होने लगा है।" यह सुनकर उसके बाप ने न तो कुछ ही प्रश्न किया और न कुछ उसे जवाब ही दिया—चुपचाप सुन लिया। पुत्र ने सोचा कि शायद संकोचवश पिताजी ने मौनावलम्बन किया है, परन्तु वह मौन सदा के लिये ही था। उन्होंने अपने पुत्र की इस बीमारी की कुछ भी

चिन्ता नहीं की। उस समय इस बालक को स्वप्नदोष का आरम्भ ही था—शायद एक या दो वार ही हुआ होगा। यदि पिता चाहता तो औषधोपचार द्वारा उसे हटा सकता था, परन्तु शायद यह सोच कर कि "यह रोग तो प्रायः सभी को होता है" या "मुझे भी तो है।" कुछ भी नहीं किया। अन्त में उसके शरीर में स्वप्नदोष ने खूब ही जड़ जमा ली, जिसे आज १२ वर्ष हो गये, सैकड़ों दवा करने पर भी नहीं हटा। सन्तान के सिर दर्द होने पर तो घर घर भिखमंगे का सा मुँह बनाये दुःख प्रकट करते हुए माता पिता औषधि की खोज में फिरते हैं, परन्तु स्वप्नदोष जैसे रोग की कुछ भी चिन्ता नहीं की।

कुछ लोगों का ही नहीं बल्कि कई वैद्य-डाक्टर और हकीमों का भी यह खयाल है कि "विवाह के बाद यह रोग स्वय हट जाता है।" "वीर्य पक या अधिक होने के कारण ही निकलता है, इससे कोई नुकसान नहीं।" इत्यादि। जिस प्रकार कन्या के ऋतुमती होने पर लोग उसे विवाह योग्य मान बैठते हैं, उसी प्रकार लोग लड़के का वीर्य स्वप्नदोष द्वारा निकलने पर उसे स्त्रीसंसर्ग के योग्य मानते होंगे॥ परन्तु यह भारी भूल है। स्त्रीरज दूषित वस्तु है जिसका निकलना जरूरी है, और न निकलना ही बीमारी माना गया है। किन्तु वीर्य के लिये यह बात नहीं है। वीर्य एक बहुमूल्य वस्तु है जिसका बिना निकाले निकलना बीमारी माना गया है।

विवाह के बाद स्वप्नदोष तो बन्द नहीं होता, बल्कि वह वीर्य जो दो चार दिन में स्वप्नदोष द्वारा निकलता था, उसे लोग स्त्री-प्रसङ्ग द्वारा निकाल देते हैं। यदि स्त्रीप्रसङ्ग द्वारा ही स्वप्नदोष हट जाता है तो लोगों को १५।२० दिन तक स्त्रीप्रसङ्ग से बचकर देख लेना चाहिये कि स्वप्नदोष हट गया या नहीं? इस परीक्षा मे आप पावेंगे कि स्वप्नदोष मौजूद है, और अधिक रूप में है।

इससे साबित होता है कि स्त्रीप्रसङ्ग स्वप्नदोष की दवा नहीं है, बल्कि कुपथ्य है। शरीर के जिस अङ्ग से परिश्रम लिया जावे और जब वह अयोग्य हो जावे, तब उसे विश्राम देना ही उस अङ्ग के लिये लाभप्रद है, न कि उससे अधिक श्रम लेना। ऐसी दशा में जब कि वीर्यपात हो रहा है तो अधिक वीर्यपात से कदापि लाभ नहीं हो सकता। वे लोग भूल करते हैं, जो स्वप्नदोष की दवा स्त्री-प्रसङ्ग बताते हैं। अच्छे से अच्छे बलवान पुरुष को भी जिसे यह रोग लग जाता है, उसे हफ्ते में या दस दिन में एक बार स्वप्नदोष हो ही जाता है। और निर्बल पुरुषों को तो कभी कभी एक ही रात्रि में २ या ३ बार तक स्वप्नदोष होता देखा गया है। कई महाशयों ने यहाँ तक भी कहा है कि जिस रात्रि में स्त्रीप्रसङ्ग किया, उसी रात्रि को स्त्रीप्रसङ्ग के बाद स्वप्नदोष भी हुआ। उन लोगों को, जो स्त्री-प्रसंग पर स्वप्नदोष के रुक जाने का झूठा भ्रम फैलाते हैं, ऊपर लिखी बातें जरा आँखें खोलकर ध्यान से पढ़नी चाहिये।

कुछ ऐसे लोग भी हैं, जिनका ख्याल है कि स्वप्नदोष बलवान लोगों को होता है, और यह वीर्य के अधिक होने की सूचना है। यह भी बड़ी गलत बात है। वास्तव में बात इसके विपरीत है। जिस प्रकार कुछ लोग, मुँह पर मुहाँसे और फुन्सियाँ देख कर "जवानी फूटी है" इत्यादि मान लेते हैं उसी तरह इसे भी समझना चाहिये। वास्तव में ये बीमारियाँ हैं जिनका इलाज कराना चाहिये। वीर्य के अधिक होने पर उसका ओज बनता है और शरीर में जज्ब होकर उसे पुष्ट करता है, न कि इधर उधर से निकलने लगता है। स्वप्नदोष प्रायः ९९ प्रतिशत लोगों को है तो क्या सभी बलवान पुरुष हैं? इत्यादि प्रश्नों द्वारा ऐसी बातें कहने वालों का मुँह बन्द किया जा सकता है। ये सब बातें मूर्खतापूर्ण हैं जिनके कारण ही इस रोग की लोग विशेष चिन्ता नहीं करते और इसका प्रावल्य देश में होता जा रहा है।

सारांश यह कि वीर्य एक बहुमूल्य वस्तु है, जिसका वर्षों मे एक बार निकालना ही शास्त्रानुमोदित है। फिर भला उसका स्वप्न-विकार द्वारा योंही बहते रहना क्या उदासीनता प्रकट करने की घात है ? वही व्यक्ति नीरोग है, जिसका वीर्य निकालने पर भी देर से निकलता है। "स्वप्नदोष" तो फिर सपने की बात है। झूठे दृश्यों को स्वप्न में देखकर जिनका वीर्य निकल जाता है, उनका तो ईश्वर ही रक्षक है।।

स्वप्न।

अब यहाँ स्वप्न के विषय में भी थोड़ा सा विचार करना आवश्यक है। जागृत अवस्था में किसी को भी स्वप्न नहीं दिखाई देते। इस विषय के ज्ञाताओं का यह भी कहना है कि स्वप्न गहरी नींद में नहीं आते, अर्थात् अर्द्धजागृत और अर्द्ध-सुप्त अवस्था में ही स्वप्न दिखाई देते हैं। जब आत्मा, अपना सम्बन्ध स्थूल शरीर से छोड़कर, सूक्ष्म शरीर में ही कार्य करता है उस समय आत्मा स्वप्न देखता है। प्रायः स्वप्न में मन के विचार ही दृश्य रूप में सामने आते हैं। प्रतिशत ९९ स्वप्न अपने विचारों के ही प्रतिबिम्ब होते हैं। जीवात्मा प्रतिदिन तीन दशाओं का अनुभव करता है। आगे हम एक कोष्ठक देते हैं जिससे सहज ही में इस बातको समझा जा सकता है।
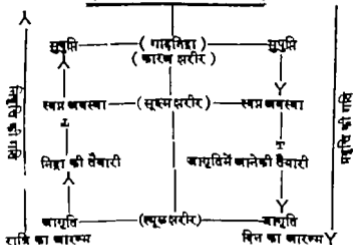
जीवात्मा जब तक स्थूल शरीर में कार्य करता है, तब तक जागृतावस्था है। जब शरीर थक जाता है, तब उसे आराम देने के लिये तथा नवीनशक्ति देने के लिये जीवात्मा सूक्ष्म शरीर में जाकर अपना मनोमयराज्य करने लगता है। यही स्वप्नावस्था है। जागृति से सुषुप्ति में जाने के समय यह बीच की अवस्था है। कोई ऐसा समझे कि मुझे स्वप्न आते ही नहीं यह बात झूठ है। स्वप्न तो आते हैं, किन्तु स्मरण-शक्ति की कमजोरी के कारण वे याद नहीं रहते। इस प्रकार सिद्ध भये हैं कि थके हुए शरीर को आराम देने के लिये जीवात्मा सूक्ष्म शरीर में जाकर मनोमयराज्य करता है। कुछ लोग कहेंगे कि "ऐसे आदमी, जो कुछ भी श्रम नहीं करते उन्हें नींद नहीं आनी चाहिये।" इसका उत्तर यह है कि बिना परिश्रम के तो कोई रह ही नहीं सकता, आखिर उठना बैठना चलना फिरना, खाना पीना, कार्य

तो करने ही पड़ते हैं। यदि हाथ पर हाथ रख के भी बैठा रहे तो भी मस्तिष्क मे विचारों की शृङ्खला चलती रहती है। यह प्रकृति का एक नियम है कि मनुष्य कभी बेकाम बैठ ही नहीं सकता। उसे कुछ न कुछ कार्य करना ही पड़ता है, चाहे वह शारीरिक हो अथवा मानसिक। इस बातको सभी लोग अच्छी तरह जानते हैं कि शारीरिक श्रम करने वालोंको गहिरी, और मानसिक श्रम करनेवालों को कम नींद आती है।

"निद्रा के समय जीवात्मा सूक्ष्म-शरीर में ठहरता हुआ कारण शरीर मे चला जाता है इसका प्रमाण क्या है?" सबसे पहिली और मोटी बात तो यह है, कि स्थूल शरीर शिथिल और अचेत हो जाता है। दूसरी बात विचारने योग्य यह है कि जब जीवात्मा इस स्थूल शरीर को छोड़कर, सूक्ष्म में जाकर मनोमय राज्य करता है, उस समय शरीर पर के फोड़े फुसी, घाव, ज्वर आदिका वह दुःख अनुभव नहीं करता। अब एक प्रश्न और हो सकता है कि जब जीवात्मा स्थूल शरीर में नहीं होता, तब छूने से या शब्द विशेष से वह क्यों जाग पड़ता है? उत्तर इसका यह है कि सूक्ष्म शरीर, स्थूल से अलग नहीं है। जिस प्रकार एक कोठरी के अन्दर दो कोठरियाँ और हैं—जब मनुष्य बाहिरी कोठरी में होता है तो सहज ही में सब कुछ बाहिरी बातें जानता रहता है, किन्तु जब वही दूसरी या तीसरी में चला जाता है तो उसे बाहिरी ज्ञान नहीं रहता, और किसी के बहुत पुकारने पर कुछ सुन लेता है, तब झट बाहिर आ जाता है। यही दशा जीवात्मा की भी है।

स्वप्न क्या है, यह कुछ निश्चय नहीं कहा जा सकता, किन्तु अभी तक तो यही माना गया है कि देखे हुए, सुने हुए, पढ़े हुए, विचारे हुए कामों का बारबार जीवात्मा, सूक्ष्म शरीर में रह कर अनुभव करता हुआ मनोमयराज्य करता है। परन्तु कभी कभी जीवात्मा ऐसी बातों का अनुभव भी करता है, जिनकी कल्पना तक भी कभी मैं नहीं

भी। ऐसे स्वप्न बरा विचारणीय होते हैं—निरर्थक नहीं होते । जो मनुष्य सत्यवादी, जितेन्द्रिय, धर्मात्मा परोपकारी और पवित्रात्मा होते हैं उन्हें सदा ऐसे ही स्वप्न आते हैं, जिनका कुछ न कुछ अर्थ अवश्य होता है। लोगों का यह आम ख्याल है कि स्वप्न की बातें मिथ्या होती हैं, लेकिन कभी कभी सत्य भी होती देखी जाती हैं। ऐसा शायद कई पाठकों का अनुभव भी होगा। जिन्होंने पुराण पढ़े या सुने हैं, उन्होंने स्वप्नों की अनेक कथायें पढ़ी सुनी होंगी जो प्रायः सच्चे ही हुये हैं। इस विषय पर अपनी स्वतन्त्र सम्मति देना अनधिकार चेष्टा है। मनुष्यों को स्वप्न नित्य ही आते हैं, किन्तु इस विषय पर आज तक कोई सर्वांग पूर्ण पुस्तक नहीं दिखाई दी। एक दो छोटी मोटी पुस्तकें हैं, परन्तु उनसे इस विषय से जिज्ञासुओं की तृप्ति नहीं होती। वेद और उपनिषदों में भी स्वप्न के विषय में अनेक मन्त्र देखे जाते हैं यह विषय मानस शास्त्र के विचारकों के मनन करने योग्य है। देखिये वेद में स्वप्न के विषय में कैसे वर्णन हैं। परमात्मा से प्रार्थना है:-

> "असमृद्धयाऽदुष्वप्न्या दुष्कृताच्छमलादुत ।
> दुर्हार्दश्चक्षुषो घोरात् तस्मान्नः पाह्यञ्जन ॥"
>
> अथर्व ४ । ९ । ६

अर्थात्—बुरे विचार, बुरे स्वप्न, दुराचार शान्तिनाशक कारण, दुष्ट हृदय और भयङ्कर नेत्रों के भाव से हमारी सब लोगों की रक्षा करो।

वेदमें स्वप्न को क्लीव (नपुंसक) माना है, अतएव स्वप्नों के कारण दुःखी या प्रसन्न होना अज्ञान है। नपुंसक रूप होने से स्वप्न किसी का कुछ भी नहीं बिगाड़ सकता। हम इसी पुस्तक में आगे "मानसिक-चिकित्सा" में वेद मन्त्रों द्वारा और भी प्रकाश डालेंगे।

'स्वप्न सत्य होते हैं या मिथ्या ?" इसके उत्तर में यही कहा जा सकता है कि, स्वप्न मिथ्या होते हैं। परन्तु स्वप्नदोष के रोगियों के

स्वप्न सिर्फ इतने ही सच्चे होते हैं कि, उनका वीर्य निकल जाता है बाकी सब मिथ्या ही होता है। शयन के पूर्व जिन विचारों को लेकर मनुष्य सोता है, वे ही विचार उसके स्वप्न होते हैं। जो आदमी कुविचारों को दिल मे रखकर सोता है, उसे अवश्य ही स्वप्नदोष होता है। यह कितने दुःख की बात है कि जब जीवात्मा स्थूल मे न होकर सूक्ष्म शरीर में होता है, और वीर्यपात होने का कोई साधन भी पास मे नहीं है, वह स्वप्न देख रहा है जो बिलकुल मिथ्या है, लेकिन उस समय स्वप्न में यदि वीर्यपात हुआ तो वह सत्य हो गया !! कितनी निर्बलता है ? इससे बढ़कर भयङ्करता दूसरी और क्या हो सकती है ?

स्वप्न-दोष के दोष

(१) धार्मिक-दोष।

दोष से धार्मिक दोष पैदा होता है। स्वप्न मे न जाने किस माता तुल्य, भगिनी तुल्य या पुत्री तुल्य परनारी के संसर्ग से वीर्यपात हुआ हो, अथवा सवर्ण या असवर्ण स्त्री के साथ भोग करने पर वीर्यपात हुआ हो, धार्मिक दृष्टि से यह बड़ा भारी पाप है। एक जगह हम पीछे लिख आये हैं कि एक बार के निकले हुए वीर्य में, करोड़ों मानव शरीर के जन्तु होते हैं जिनका अकारण ही बिना किसी उद्देश के नाश हो जाता है। कैसा भयंकर पाप है ? इसके अतिरिक्त स्वप्नदोष में निकला हुआ वीर्य, प्रायः वस्त्र पर या

शरीर पर ही गिरता है अतएव वह वस्त्र और शरीर दोनों ही अपवित्र हो जाते हैं। जिसकी शुद्धि बिना स्नान या पुण्य कार्य्य के नहीं होती। एक ऋषि ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि—"जिसे स्वप्न दोष हो गया हो उसे प्रातः काल कटिपर्यंत जलमें खड़े होकर १०० बार गायत्री मंत्र का जप करना चाहिये।" मनुजी कहते हैं—

"स्वप्ने सिक्त्वा ब्रह्मचारी द्विजः शुक्रमकामतः।
स्नात्वार्कमर्चयित्वा त्रिः पुनर्मामित्यृचं जपेत्॥"

अर्थात्—यदि ब्रह्मचारी को अनजाने स्वप्नदोष हो जावे तो स्नान करके सूर्य का पूजन करे और तीन बार 'पुनर्मां मैत्विन्द्रियं०।' इस ऋचा को बोले।

जिस प्रकार मृतक आदि का अशौच (सूतक) होता है और उसकी शुद्धि की जाती है, उसी प्रकार महर्षि मनुने इस स्वप्नदोष की भी अशौच में गणना करके उसकी शुद्धि लिखी है—

"निरस्य तु पुमाञ्छुक्रमुपस्पृश्यैव शुद्धयति"

अर्थात्—पुरुष का स्वप्न में वीर्य निकल जाने पर उसको स्नान करके अपनी शुद्धि करनी चाहिये।

(२) सामाजिक दोष।

प्रत्येक मनुष्य समाज का एक अंग है, उसका समाज से घनिष्ठ सम्बन्ध है। जिस प्रकार शरीर के प्रत्येक अवयव ठीक होने से शरीर की सुन्दरता-शोभा है; उसी तरह प्रत्येक मनुष्य के श्रेष्ठ होने से ही समाज उत्तम समझा जाता है। जिस समाज के मनुष्य अयोग्य हों वह समाज कदापि उन्नत तथा मान्य नहीं हो सकता। शरीर में मामूल व कुछ अंग है, लेकिन वह यदि रोग से खराब हो गया तो सारे शरीर की सुन्दरता को बदनाम कर देगा। इसी प्रकार रोगी मनुष्य समाज को भी बदनाम कर देता है। इसके अतिरिक्त वह रोग

एक व्यक्ति को नहीं बल्कि सभी लोगों में देखा जाता है, ऐसी दशा में सामाजिक उन्नति कदापि नहीं हो सकती। नीरोगी समाज के आगे स्वप्न दोष से पीड़ित समाज, ऐसा फीका जान पड़ता है जैसे सूर्य के प्रकाश में चन्द्रमा। अतएव यह एक बड़ा भारी सामाजिक दोष है। जिस व्यक्ति के शरीर को एक भयकर रोग ने घेर रखा हो, वह सामाजिक उन्नति क्या खाक कर सकता है ? जब कि उसका शरीर ही दोषपूर्ण है तो समाज के दोष हटाने की सामर्थ्य उसमे कहाँ से हो सकती है ? अपनी सामाजिक उन्नति चाहने वाले व्यक्ति को, सबसे पहिले अपने शरीर को नीरोग बनाना चाहिये, क्योंकि व्यक्ति समाज का एक अङ्ग है।

(३) मानसिक दोष।

स्वप्न दोष का, मन के साथ बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध है, यह बात इस पुस्तक में जहाँ तहाँ पाठकों के पढ़ने में आई होगी और आवेगी। स्वप्न-दोष ग्रस्त व्यक्ति का मन सदा कलुषित रहता है। यदि मन के विचार ही पवित्र हों तो यह बीमारी ही क्यों हो। यह रोग स्वप्न से सम्बन्ध रखता है, और स्वप्न प्रायः ९९ प्रतिशत मन के विचारों का ही दृश्य होता है। मनुष्य की परीक्षा उसके स्वप्नों से ही होती है। जिसे अच्छे स्वप्न आते हैं वह मनुष्य भला होता है, और जिसे बुरे स्वप्न आते हैं वह बुरा होता है। मानसिक संस्कारों के अनुकूल ही अच्छे या बुरे स्वप्न आते हैं। मन की शक्ति एक महान् शक्ति है—जिसका अनुमान लगाना भी कठिन है। इसीलिए मानसिक शक्ति ठीक और दोष रहित रखने के लिए वेद कहता है:—

"तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।"

अर्थात—"मन सदा शुभ सकल्प वाला ही हो।" मन को अशुभ विचारों से हटाना चाहिये। जीवनशक्ति द्वारा मन को अपने वश में

रखना चाहिये और मानसिक बुरे विचारों को दूर करना चाहिये। इससे मनुष्य निर्दोष, निष्पाप और यशस्वी बन सकता है।

मानव प्राणी विश्वास रूप है। जैसा विश्वास होता है, वह वैसा ही बन जाता है। परमात्मा, आत्मा धर्म और अपने पुरुषार्थ पर विश्वास रखने से समस्त मानसिक दोष मिट जाते हैं। विश्वास बड़ा भारी बल है, बशर्ते कि अन्ध-विश्वास न हो। अपने मानसिक विचारों को बलवान बनाना चाहिये। अच्छे विचार वाला मनुष्य कदापि पतित नहीं होता। शिव-संकल्प ही उन्नति का मुख्य साधन है। यह बात निर्विवाद सिद्ध है कि जिसके विचार हीन होते हैं वह हीनावस्था पाता है, और जिसके विचार उन्नत होते हैं वह धीरे धीरे उच्च बन जाता है।

"मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः।"

विचारों से ही स्वतन्त्रता और परतन्त्रता है। वीर्य-रक्षा के लिये मानसिक विचार ही मुख्य हैं। मन में यदि पवित्र विचार रहे तो वीर्य-रक्षा सहज बात है, और यदि मन में कुविचारों का प्राबल्य हुआ तो वीर्यरक्षा कदापि नहीं हो सकती। सारांश यह कि स्वप्नदोष से पीड़ित व्यक्ति में अनेक मानसिक दोष होते हैं। अतएव जिन्हें अपने मानसिक दोष दूर करना हो वे स्वप्नदोष को दूर करें और जिन्हें स्वप्नदोषको हटाना हो,वे अपने मानसिक दोषों को दूर हटावें। सद्विचारों को ही मन में लावें और "तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।" इस उपदेश को रात दिन याद रखें।

(४) शारीरिक-दोष।

शारीरिक दोष तो प्रकट ही हैं—जिनकी संख्या बताना कठिन है। हम यहाँ कुछ थोड़े से दोष गिनाने का प्रयत्न करते हैं। (१) शरीर का दिन प्रति दिन कमजोर होना (२) मुख की कान्ति और

सौन्दर्य्य का नष्ट होना। (३) विविध रोगों का शरीर में होना। (४) सन्तान न होना। (५) सन्तान का अल्पायु में मरना। (६) दिमाग कमजोर होना। (७) आँखों का भीतर धँसना और उनके चारों तरफ कालिमा होना। (८) निगाह कमजोर होना (९) कायरता और निरुत्साहता बढ़ना। (१०) मुख निस्तेज होना। (११) नाक बदसूरत होना और उसके नथुने चौड़े होना (१२) सूर्य का प्रकाश या और कोई अन्य तेज प्रकाश से सिर दर्द सा होना। (१३) धूप में निकलने की इच्छा न होना (१४) सिर भारी रहना (१५) थोड़ी देर बैठने पर पीठ के बाँस (रीढ) में जलन होना (१६) थोड़े से भागने पर या श्रम करने पर दम फूल जाना (१७) शरीर में चर्बी बढ़ जाना, मुटाई होना (१८) हाथ पैरोंकी नसों का, शीतकालमें फूली हुई दृष्टि आना (१९) शरीर दुर्बल होना (२०) चलने के वक्त पैरों का इच्छाविरुद्ध गिरना (२१) निद्रावस्था में, मुँह से खूब लार टपकना (२२) कानों में सन्नाटा होना (२३) आँखों के सामने अँधेरा हो जाना (२४) चक्कर आना (२५) अन्न खाया हुआ न पचना (२६) कब्ज होना (२७) हाथ पैरों का थोड़ी देर के लिए सुन्न हो जाना (सोना) (२८) बाँयटे आना (२९) छाती में जलन होना। (३०) साँस जल्दी जल्दी चलना। (३१) आँख, मुख, नाक, कान आदि में अधिक और बारम्बार श्लेष्मा होना (३२) बालों का कम उम्र में सफेद होना (३३) मुँह पर रूक्षता होना (३४) नाक पर तथा उसके आसपास चिकनाई आना (३५) अल्पायु बच्चे होना (३६) शीघ्र ही वीर्यपात होना (३७) भयभीत रहना (३८) उत्साहशून्य होना (३९) दीनता और हीनता होना (४०) क्रूर, शुष्क और चिड़-चिड़ा स्वभाव होना (४१) रात दिन उदासी और मुर्दादिली होना (४२) कामोत्तेजन अधिक होना (४३) चिन्तातुर रहना (४४) मलिन विचारों का चित्त में प्रादुर्भाव होना (४५) शृङ्गारप्राधान्य खेल तमाशे देखने की इच्छा तथा ऐसी ही पुस्तकों के पढ़ने की रुचि होना

(४६) कुसंग तथा एकान्तवास की इच्छा होना (४७) नशे की चीजों के सेवन की इच्छा होना (४८) मुख पर कीलें तथा झाईं होना (४९) आँखों के नीचे गालों पर काले दाग होना। (५०) इन्द्रिय में अधिक उत्तेजना किन्तु वास्तव में शिथिलता होना (५१) मूत्र के साथ वीर्य जाना (५२) पाखाने के समय जोर करने पर मूत्र-मार्ग द्वारा सफेद पानी सा निकलना (५३) मस्तिष्क सम्बन्धी कार्यों में अनिच्छा और दिमागी ताकत का कम होना (५४) भ्रम होना (५५) पागल होना (५६) अपस्मार मृगी तथा मूर्च्छा होना (५७) दो बार से अधिक दस्त होना तथा पतला होना (५८) संग्रहणी होना (५९) क्षय रोग होना (६०) बवासीर होना (६१) नींद न आना (६२) सुजाक की बीमारी होना (६३) अति क्षुधा लगना तथा भोजन कर लेने पर भी खाने की इच्छा होना (६४) आँतों का निर्बल होना (६५) शरीर की गर्मी घट जाना (६) नाड़ी की चाल तथा दिल की धड़कने में शिथिलता होना (६७) सात्विक भोजन से घृणा और चटपटे पदार्थों से प्रेम होना (६८) खाँसी, कुकर खाँसी और दम की बीमारी होना (६९) शरीर के सन्धिस्थानों में शिथिलता आना (७०) हाथ पाँवों में कम्प होना (७१) आँखों का रंग पीला तथा मटमैला होना (७२) क्रोध या हर्ष के समय हाथ पाँवों का थर्राना (७३) अकारण ही अथवा थोड़ी गर्मी से ही शरीर में पसीना आना (७४) पसीना अति दुर्गन्ध युक्त होना (७५) प्रत्येक ऋतु की तेजी सहने में असमर्थ होना (७६) अधिक देर तक खड़े रहने की ताकत न होना (७७) शरीर में टेढ़ापन आना जैसे गरदन या रीढ़ का झुक जाना (७८) अंडकोषों का बढ़ना और लटक जाना। (७९) दाँतों के मसूड़ों का सूजना और दाँतों में निर्बलता आना (८०) मुँह में से बदबू आना (८१) अकारण ही निगाह कम होना (८२) कानों से कम सुनाई पड़ना (८३) छोटी उम्र में ही दाँतों का हिलना और गिर जाना (८४) केशों का तथा रोमों का झड़ना (८५) रतौंध होना (८६) आवाज

की मधुरता नष्ट होना (८७) गालों का पिचक जाना और उनकी सुर्खी नष्ट होना (८८) कनपटी के मांस का सूख जाना (८९) आधा-सीसी नामक सिरकी बीमारी होना (९०) नाखूनों का सफेद रंग होना (९१) ठहर ठहर कर शब्द न बोल सकना (९२) कुछ कुछ तुतलाना (९३) थोड़ा बोलने पर ही मुंह सूख जाना (९४) थोड़ी देर निकम्मे बैठने पर ऊंघ आना (९५) खून बिगड़ जाना (९६) बार बार मूत्र आना (९७) मूत्र का रग बदला हुआ होना (९८) पेट अकारण ही गुड़ गुड़ाना (९९) मूत्राशय निर्बल होना (१००) चमड़े में झुर्रियाँ पड़ना—इत्यादि।

ऐसे अनेक शारीरिक दोष हो जाते है। इसका यह मतलब नहीं है कि जिनमें उक्त-दोष हों उन्हें ही स्वप्न दोष है। नहीं, ये दोष तो थोड़े, उदाहरणार्थ गिनाये हैं। यहाँ यह भी न समझ लेना चाहिये कि किसी व्यक्ति में यदि उक्त शारीरिक दोष हैं तो वे स्वप्नदोष के कारण ही हैं। नहीं, उक्त दोष अन्य कारणों से भी हो जाते हैं। जैसे "बालों का सफेद होना, कमजोर होना, मुहँ की कांति नष्ट होना" ये दोष चिंता के कारण भी होते हैं। चिन्ता से भी मनुष्य में ये दोष हो जाते हैं। यह बात भी नहीं है कि स्वप्नदोष ग्रस्त व्यक्ति में उक्त सभी दोष होने चाहियें—नहीं, इनमें से इने गिने ही दोष होते हैं। इस विषय में मनुष्य को अपनी बुद्धि से काम लेना चाहिये।

स्वप्न दोष के कारण।

---

(१) भोजन सम्बन्धी भूलें

भोजन ही शरीर का आधार है। भोजन के बिना यह शरीर अधिक दिन तक नहीं टिक सकता। जीवन का सारा दारोमदार भोजन पर ही है। प्रत्येक प्राणी भोजन प्राप्ति की चिन्ता में निमग्न है। समस्त चिन्ताओं में यह सबसे पहिली चिन्ता है। जैसा जिसका भोजन होता है, वैसा ही उसका स्वास्थ्य और स्वभाव भी होता है। अतएव भोजन कैसा हो, इस बातका ध्यान प्रत्येक मनुष्य को रखना चाहिये। भोजन का अर्थ केवल पेट भरना मात्र नहीं है, बल्कि शरीर को सबल स्वस्थ और चिरस्थायी रखना भी है। अधिकांश देखा जाता है कि भोजन के संबंध में इस बात का लोगों को ध्यान ही नहीं आता; यही कारण है कि "स्वप्नदोष" की बीमारी खूब ही उन्नति कर रही है।

भोजन सदैव ताजा ही करना चाहिये। इस बातका भी ध्यान रखना चाहिये कि आटा वगैरा खाद्य सामग्री मिली न हो। उसमें किसी प्रकार की दुर्गंध न आती हो। अन्न जिसका आटा बनाया गया है वह पुष्ट और घुना सड़ा न हो—इत्यादि। सड़े गले, बासी पदार्थ कभी सेवन नहीं करने चाहियें। जो लोग लोभके कारण बासी तथा सड़े पदार्थों को खाते हैं वे भारी भूल करते हैं—ऐसे लोगों को प्रायः भयङ्कर रोग हो जाते हैं, जिनमें औषध खर्च तथा वैद्य-डाक्टरों की फीस से, उस लोभ का सारा बदला अच्छी तरह चुक जाता है। चौबीस घण्टे से अधिक समय के बाद भोजन (रोटी, दाल भात, साग, पूरी,

हलुवा इत्यादि पदार्थ खराव हो जाता है, मनुजी विगड़े हुए तथा वासी अन्न को न खाने की आज्ञा देते हैं:—

"शुक्तं पर्युषितं चैव शूद्रस्योच्छिष्टमेव च।"

विगड़े हुए भोजन से, आमाशय, खराव हो जाता है जो कि वीर्य का उद्गमस्थान है। हलवाइयों की दूकानों पर प्रायः खाने में आते हैं। सड़े फल, वासी मिठाई, वदवूदार घी मे वनाई हुई पूरियाँ प्रायः हलवाइयों के यहाँ नसीब होती हैं, इसलिये रेलवे वाजार से भोजन सामग्री खरीदने मे विशेष सावधानी रखनी चाहिए।

भोजन आत्मरक्षा का एक मुख्य साधन है। अच्छे शीघ्र पचने वाले पौष्टिक भोजन को यथापरिमाण सेवन करने का यथाशक्ति यत्न करना प्रत्येक मनुष्य का परम धर्म है। भोजन स्वच्छस्थान मे, स्वच्छ पात्रों मे, वहुत स्वच्छता के साथ रखना और तय्यार करना चाहिये। मैला कपड़ा, मैले हाथ, धूल-मिट्टी, गन्दाजल इत्यादि भोजन की वस्तुओं को छूने न पावें। दाल, शाक, दही इत्यादि जहाँ तक हो सके चम्मच द्वारा ही परोसे जावें। वासी भोजन की अपेक्षा ताजा भोजन सव तरह अच्छा होता है। भोजन को ऐसी जगह, और इस प्रकार रखें, कि उसमें धूल मिट्टी वगैरः न गिरें। गन्दी हवा उस पर असर न करे और मक्खी चींटी तथा कीड़े मकोड़े उस पर न वेठें और न उसको खावें। मक्खी को भोजन पर क्षण भर के लिये भी नहीं वैठने देना चाहिये। यह प्राणी हैजा, पेचिश, अतिसार, क्षय आदि अनेक रोगों को फैलाने वाला है। हलवाइयों की, वे मिठाइयाँ जो खुले स्थानोंमें रखी रहती हैं और जिन पर सड़क की धूल दिन भर गिरती रहती है तथा जिन पर सैकड़ों मक्खियाँ और वर्रे भिन-भिनाया करती हैं—भूल कर भी नहीं खानी चाहियें।

जो भोजन देखने और सूँघने मे प्रिय, एवम् खाने में स्वादिष्ठ हो वह अच्छी तरह पचता है। जिस भोजन को देखने और सूँघने से घृणा हो उसे कदापि नहीं खाना चाहिये। भोजन करते समय, या

पहिले और पीछे किसी प्रकार का रंज और फिक्र करना ठीक नहीं—इससे अजीर्ण रोग हो जाता है। भोजन ऐसी जगह करना चाहिये, जहाँ पर कूड़ा कर्कट और दुर्गन्ध वाली चीजें या धुआ वगैरह न हो। भोजन के पीछे या पहले अधिक शारीरिक और मानसिक श्रम नहीं करना चाहिए। भोजन करते ही भागना कूदना तेज चाल चलना या अध्ययन करना बहुत हानि कारक है। पाठशालाओं तथा स्कूलों का समय ऐसा होना चाहिए कि जिसमें विद्यार्थियों को भोजन करते ही, अध्ययन न करना पड़े। दूरी से पहुँचने के कारण दण्ड पाने के भय से बहुत से विद्यार्थियों को जल्दी जल्दी अधपका भोजन निगल कर अथवा छोड़ कर चलने तथा रास्ते में पुस्तक पर पाठ याद करते हुवे जाने की अत्यन्त हानि कारक आदत पड़ जाती है। बालकों के माता-पिता स्कूलों का समय नियत करने वाले अध्यापक और सरकार स्कूलों के अधिष्ठाता और आज कल की शिक्षाप्रणाली इस बुरी आदत और उससे होने वाली हानियों के लिए जिम्मेवार है। भारत वर्ष जैसे गर्म देश में पठन पाठन का समय दोपहर से पहिले होना चाहिए। जाड़े की मौसिम में यदि आवश्यकता हो तो दो पहर से पहिले और पीछे दोनों समय थोड़ी थोड़ी पढ़ाई हो सकती है। भोजन करते ही पाठशाला में जाने से विद्यार्थियों को अनेक रोग हो जाते हैं।

अनेक व्यक्ति रात्रि के समय ६-१ और ११-१२ बजे तक भी भोजन करते हैं। कई लोग कामवश ऐसा करते हैं; किन्तु अधिकांश व्यर्थ ही गप्पों में खेल तमाशों में ताश चौपड़ में और गाने बजाने में लगे रहने के कारण रात में देर से भोजन करने के अभ्यासी हो गये हैं। शयन के २-३ घण्टे पहिले भोजन से निपट जाना चाहिये। भोजन करके सो जाना अत्यन्त हानिकारक है। जो लोग देर से भोजन करते हैं उन्हें भोजन के पश्चात् तत्काल ही मैथुन करने का मौका मिल जाता है। भोजन करने के बाद तत्काल मैथुन करने से मंदाग्नि संग्रहणी अतिसार और वीर्य सम्बन्धी अनेक रोग हो जाते हैं। यह

बात स्मरण रखनी चाहिये कि, भोजन में और मैथुन में ३ से ६ घण्टे तक का अन्तर होना चाहिये । भोजन विषयक सावधानी रखने से मनुष्य मरण पर्यन्त रोगी नहीं हो सकता, क्योंकि जितने भी रोग पैदा होते हैं, सब भोजन की वेपरवाही से ही होते हैं ।

(२) तेज मसाले ।

हम पीछे कह आये हैं कि स्वभाव और स्वास्थ्य का भोजन से घनिष्ठ सम्बन्ध है । आजकल लोग प्रायः तेज मसालों का सेवन अधिक करते हैं । लाल मिर्चें, अधिक नमक, गरम मसाले, लहसुन, प्याज, गुड़, तेल, खटाई आदि के अधिक सेवन से स्वप्नदोष होने लगता है । ग्रामीण लोग और खास करके मालव देशवासी मिर्चें बहुत खाते हैं । लाल मिर्चों का सेवन वीर्य के लिये अत्यन्त हानिकारक है । इसके बदले काली मिर्चें काम में लाई जा सकती हैं । लहसुन प्याज की निन्दा तो धर्म शास्त्रों में भी है—

छत्राकं विड्वराहञ्च, लशुनं ग्रामकुक्कुटम् ।
पलाण्डुं गृञ्जनं चैव मत्या जग्ध्वा पतेद् द्विजः ॥

तेल मसाले आदि पदार्थ, उत्तेजक तथा वीर्य को पतला करने वाले हैं, अतएव जिन्हें स्वप्नदोष से बचना हो उन्हें लालमिर्चें आदि तीक्ष्ण पदार्थों का सेवन नहीं करना चाहिये ।

(३) कच्चा दूध ।

प्रातःकाल या सायंकाल के समय कच्चे दूध में शक्कर डाल कर प्रायः लोग पी लिया करते हैं । इससे स्वप्नदोष हो जाता है । यद्यपि धारोष्ण दूध की वैद्यकग्रन्थों में अत्यन्त प्रशंसा है, तथापि आजकल वह उपयोगी नहीं है । क्योंकि जिस समय के ग्रन्थ लिखे गये थे, उस समय हमारे देश में दुधारू पशुओं का पालन उचित रीति से होता

था। आजकल तो गोपालन का ढङ्ग बिलकुल बिगड़ गया है। इसी कारण उनका दूध गुणहीन हो गया। वर्तमान में लोग सिर्फ दूध खींचने के लिये ही गोपालन करते हैं। दुबली पतली, दुखी, बूढ़ी, रोगी, भूखी कैसी भी गाय-भैंस हो उन्हें तो दूध से मतलब है। दुधारू पशु आजकल प्रायः सड़ा पुराना खराब घास पुरीष, छीछ आदि खाते हैं, और मनुष्य का मूत्र तथा नदी पोखरों का अत्यन्त मैला पानी पीकर अपनी प्यास बुझाते देखे जाते हैं। भला ऐसे ढोरों का दूध पीकर, कौन नीरोग रह सकता है ?

यदि उचित रीति से पशुपालन हो तो उनका दूध कदापि रोग-कारक नहीं हो सकता। ग्वाले तथा हलवाई के घर का दूध सदा निकम्मा होता है। घर दूध पीने से कोई रोग नहीं होता बशर्ते कि दुधारू पशु को पुष्टिकारक उत्तम भोजन यथा समय लवण स्वच्छ जल और साफ हवा मिलती हो। वह सूर्यप्रकाश में अधिकांश घूमता फिरता हो। गौ को स्नान कराया जाता हो। पवित्रपात्रों में पवित्रतापूर्वक दुही जाती हो। बत्स के थूथन पर थनों को धोकर प्रथम धार भूमि पर छोड़ कर दूध निकाला जाता हो। जब तक उक्त रीति से पशुपालन न हो कच्चा दूध कदापि सेवन नहीं करना चाहिए। हाँ, दूध से ड्योढ़ा पानी और यथोचित गन्ने की ढेली डाल कर "लस्सी" बना कर कभी कभी सेवन करने से कोई हानि नहीं होगी। स्मरण रहे भेड़ बकरी ऊंटनी, गधी आदि पशुओं के दूध से भैंस का दूध उत्तम होता है, और भैंस के दूध की अपेक्षा अधिक उत्तम और गुणदायक गौ का दूध होता है।

दूध सेवन करनेके पहिले नीचे लिखी बातों पर विचार कर लेना चाहिये—

(१) क्या दुधारू पशु मोटा ताजा नीरोगी, तन्दुरुस्त और अच्छी खुराक तथा निर्मल जल पीने वाला है ?

(२) ग्वाले लोग पवित्रता पर ध्यान देते हैं या नहीं ? उनके

दूध रखने के पात्र पवित्र हैं या नहीं ? ग्वाले अपने शरीर और वस्त्रों को साफ रखते हैं या नहीं ?

(३) दूकानों पर दूध बेचने का ढङ्ग कैसा है ? और वहाँ दूध किस स्थान पर रखा जाता है। उसमें बाजार की धूल और मक्खियाँ तो नहीं गिरतीं ?

(४) दूध ताजा है या बासी ? उसमें पानी तो नहीं मिलाया गया है ? यदि पानी मिलाया है तो वह गन्दा तो नहीं था ?

(५) दुधारू पशु के थन पवित्र रखे जाते हैं या नहीं ? और जिस वस्त्र से दूध छाना जाता है, वह मैला तो नहीं है ?

दूध को कीटाणु बहुत जल्दी बिगाड़ देते हैं, इसलिये दूध के विषय में बहुत ही सावधानी की जरूरत है। आजकल दूध हमें तन्दुरुस्ती के बजाय रोग प्रदान कर रहा है। इसमें पशुओं का दोष नहीं, यह तो हमारी ही असावधानी का परिणाम है। जब तक शुद्ध दूध का प्रबन्ध न हो तब तक बादाम, छुहारे, मुनक्का, अंजीर आदि सूखे मेवो से तथा अंगूर, अनार, सेव, सन्तरे आदि फलों को उसकी जगह काम में लिया जावे तो अच्छा हो।

(४) मादक पदार्थ।

नशा करने से स्वप्नदोष निश्चित है। मादकद्रव्य एक प्रकार के विष हैं। यदि उनकी मात्रा अधिक हो जावे तो, प्राणी की मृत्यु भी हो जाती है। जो लोग नशेबाज हैं, अगर वे उनका दोष छुपाने के लिये नशे की चीजों की प्रशंसा भी करें, तो उसपर ध्यान नहीं देना चाहिये। भङ्ग पीनेवाला गाँजे की, गाँजा पीनेवाला अफीम की, और अफीम खानेवाला गाँजे भाँग और शराब की, तथा शराबी अन्य नशों की निन्दा करता पाया जाता है। किन्तु उसके कहने से यह न समझ लेना चाहिये कि जिसकी नशे की वह मुक्तकण्ठ से प्रशंसा के पुल बाँध रहा है, वह वास्तव में अमृत है। मादक द्रव्यों मे शराब, अफीम,

गाँजा, भाङ्ग चण्डू, चरस, मदक, कोकेन, तमाखू, काफी और चा इत्यादि हैं। कई लोग तो नागरपान के बीड़े तक को मादकवस्तु मानते हैं, लेकिन यह ठीक नहीं है। प्रायः नीच-वर्ण के लोग मदिरा और उच्च वर्ण के लोग गाँजा भाङ्ग, तमाखू, चा अफीम आदि खाते पीते हैं। हमारे देश के पाखण्डी—साधुसमाज ने गाँजे और भाङ्ग का सारे देश में प्रचार करके, हमारे नवयुवकों के स्वास्थ्य और धन का सत्यानाश कर दिया। विदेशीराज्य के सहयोग से तमाखू चा और काफी आदि ने सुरसा-रूप होकर भारत को अपने मुँह में रख लिया। न तो आज कोई इन नशों से बचा है और न स्वप्नदोष आदि वीर्य विकार से ही कोई बचा है।

तमाखू जिसका घर घर प्रचार है, बड़ा ही सत्यानाशी पदार्थ है। दिखने में इसके अवगुण एक दम नहीं मालूम होते, किन्तु धीरे धीरे यह अपने प्रेमियों का जीवन चूस खाली कर देता है। तमाखू में १९ विष हैं—(१) निकोटिन (Nikotine) (२) पाइरीडीन बेसेस (Pyridine bases) (३) अमोनिया (Ammonia) (४) मेथलेमाइन (Methylamine) (५) प्रूसिक एसिड (Prussic Acid) (६) कार्बनमोनोक्साइड (Carbonmonoxide) (७) सल्फरेटेड हाइड्रोजन (Sulphuretted Hydrogen) (८) कारबोलिक एसिड (Carbolic Acid) (९) मार्शगैस (Marshgas) (१०) फरफ्यूरल (Furfural) (११) ल्यूटीडिनस (Lutidinen) (१२) कॉलीडिन (Collidine) (१३) पारवोलिन (Parvoline) (१४) कोरीडीन (Caridine) (१५) रूबीडिन (Rubidine) (१६) वीरीडाइन (Viridine) (१७) पायरोल (Pyrrol) (१८) फार्मेल्डिहाइड (Formaldehyde) और (१९) एक्रोलिन (Acrolein).

इसमें निकोटिन, प्रूसिक एसिड कार्बन मोनोक्साइड, और पाइरीडिन इतने भयानक विष हैं कि बहुत थोड़ी मात्रा में भी शरीर में पहुँचकर सारे शरीर को विषाक्त और जर्जरित कर देते हैं। वे विष

शरीर मे अनेक रोग तो उत्पन्न करते ही हैं, साथ ही शरीर की रोगों से मुकाबला करने की ताकत भी नष्ट कर देते हैं।

तमाखू को अधिकांश लोग खाते, पीते, और सूँघते हैं । इससे यह तो माना नहीं जा सकता कि, इसमें अवगुण नहीं हैं या फायदेमन्द चीज है। तमाखूके पानी की कुछ बूँदे अगर विषधर सर्प के मुख में डाल दी जावें, तो वह भी मर जाता है। इसके इतने अधिक प्रचार का एक मात्र कारण अविद्या अज्ञान और अनुकरण है। अमरीका आदि सभ्य तथा उन्नत देशों ने, तमाखू आदि मादक पदार्थों की हानियों को जान कर उन्हें छोड़ना आरंभ कर दिया है। वहाँ पर जहाँ तहाँ "मादक द्रव्यनिवारिणी" सभाएँ कायम हो गई हैं, और मादक पदार्थों को शत्रु की तरह त्यागने लगे हैं। परंतु भारतवर्ष की दशा ही विचित्र है! यहाँ तो "मादक द्रव्यप्रचारिणी" संस्थाओं का संगठन हो रहा है!! प्रत्येक गाँव में एक न एक अखाड़ा ऐसा अवश्य है, जहाँ सुबह शाम नशे वाजों का जमघट्ट रहता है । अगर आप ध्यान पूर्वक देखेंगे तो उस सस्था का संस्थापक कोई पण्डा पुजारी अथवा साधु वेशधारी धूर्त्त मनुष्य ही होगा !!

अफीम और भङ्ग के प्रेमी तो प्रायः कह देते हैं कि, यह तो औषधियों में डाली जाती है। हम भी इसी बात को मानते हैं कि "ये पदार्थ औषध रूप में ही प्रयोग होने चाहिये, न कि नित्य रोटी पानी की तरह अकारण व्यवहार में लाई जावें" देखा जावे तो सखिया (सोमल खार) नमक महाविष भी औषधियों में युक्ति पूर्वक मिलाया जाता है, परन्तु उसे योंही कच्चा कोई भी नहीं खाता । और यदि खा भी लें, तो फिर इस लोक से विदा भी हो जाता है । योगिराज श्री शङ्कर के नाम को बट्टा लगाते हुए, लोग नशे की वस्तुओं का सेवन करते रहते हैं, परतु यह बात किसी भी इतिहास ग्रन्थ में नहीं पाई जाती कि वे भाँग गाँजा तमाखू, अफीम वगैरः खाते पीते थे । समुद्र मथन के समय उन्होंने एक घड़ा हालाहल का पिया था । ऐसा पुराणों में लिखा है। जो लोग

उन योगिराज महापुरुष की बराबरी करना चाहें, उन्हें चाहिये कि कम से कम एक छटाँक कोई सा तेज विष तो अवश्य पी लेवें। वरना महादेव जी के नाम को व्यर्थ का कलंक लगाना मूर्खता है। नशा करना शिवजी की भक्ति नहीं कही जा सकती भक्ति तो कुछ और ही बात है।

अज्ञानी माता-पिता बालकों को उनकी शैशवावस्था में प्रायः अफीम खिलाया करते हैं। बड़ा होने पर बालकों की अनिच्छा होते हुए भी, मीठी भंग बड़े प्रेम से पिलाते हैं। या, काफी तो कभी उन्हें मार पीट कर भी पिला दिया करते हैं। परन्तु उन्हें यह नहीं मालूम कि, अपने बच्चों को अपने हाथों विष दे रहे हैं। मादक द्रव्यों के प्रभाव से स्वप्नलोक ने खूब ही उन्नति की, इसलिए हमें भी इस विषय पर लिखने की आवश्यकता बोध हुई। नशे से आमाशय की क्या दशा हो जाती है यह चित्र नं ११ और १२ देखने से मालूम हो जायगा। शराब आदि नशे से आमाशय का रंग सुर्ख हो कर उस पर दाने से उठ आते हैं। नौजवानो! अगर तुम तेजस्वी स्वस्थ और बलवान बनना चाहते हो तो, इन वस्तुओं के पास भूल कर भी मत जाओ—उत्सवों और त्योहारों पर भी इन चीजों को मत छूओ, और नशेबाज पुरुषों के पास एक क्षण भी मत बैठो। उनके प्रति दिल में घृणा रखो और यदि वे वृद्ध तथा मान्य भी हों तो भी उनकी संगति में मत रहो। नशेबाज को भक्त और धर्मात्मा कदापि न समझो।

माता-पिताओं से प्रार्थना है कि "अपने बच्चों को मादक पदार्थों से बचावें। यदि बच्चे कुसङ्गति में पड़ कर छिपे नशा करते हों तो उनकी पूरी पूरी देखरेख रखें।" नशेबाज मनुष्य की सूरत छिपी नहीं रहती—सहज ही अन्दाज लगाया जा सकता है। इस समय देशहित की दृष्टि से, मादक द्रव्यों का प्रचार बहुत ही बुरा है—इसे रोकने के लिये देश के बच्चे बच्चे को खड़ा हो जाना चाहिये। सरकार को चाहिए कि नशे की रोक थाम का कानून बना कर इसका खात्मा कर दे।
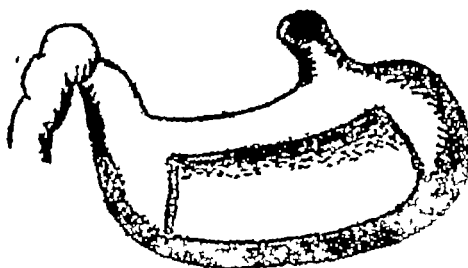
चित्र नं० ११

स्वस्थ आमाशय

चित्र नं० १२

नशेबाज का आमाशय ।

(५) अधिक मिठाई खाना ।

शक्कर को अधिक परिमाण में सेवन नहीं करना चाहिये। मिठाई भी बहुत नहीं खानी चाहिये। अधिक और बाजारू मिठाई खाने वाले को, स्वप्नदोष अनिवार्य है। प्रत्येक वस्तुके सेवन का परिमाण है—परिमाण से अधिक खानेवाले सदा दुःख ही भोगते हैं। अमृत भी यदि परिमाण से अधिक पी लिया जावे तो, विष हो जाता है और विष भी यदि परिमाण से क्रियापूर्वक खाया जावे तो अमृत हो सकता है। अधिक शक्कर विष का काम करती है। शर्करा, एक दिन में अधिक से अधिक दस बारह तोले एक जवान मनुष्य के लिये काफी है, इससे अधिक हानिप्रद है। अधिक मिठाई के सेवन से अँतड़ियाँ निर्बल हो जाती हैं—अग्निमांद्य हो जाता है और पेट में कीड़े पड़ कर, अनेक बीमारी के कारण होते हैं। बहुधा लोग बच्चों को प्रेम के कारण अधिक मिठाई खिलाते हैं, यही प्रेम कभी कभी उनकी जान तक ले लेता है। धनिक लोगों के बालक कमजोर होने का एक कारण यह भी है कि, वे रात दिन अपने बालकों को मिठाइयाँ खिलाते रहते हैं। विलायती मिठाई के नाम से, बाजारों में जो शक्कर की रंगबिरंगी खुशबूदार टिकलियाँ और गोलियाँ बिकती हैं, उन्हें बच्चों को मत खाने दो, यह मीठा विष है। हमारे देशके बहुत से बच्चे उन्हीं के कारण रोगी हो जाते हैं।

बाजारू मिठाइयाँ तन्दुरुस्ती के लिये कदापि फायदे की चीज नहीं हैं। क्योंकि हलवाई उन्हें बेपरवाही से तैयार करते हैं, तथा म्यूनिसिपेल्टियाँ उस ओर विशेष ध्यान नहीं देतीं। हलवाई लोग शक्कर के मैल को शुद्ध करते समय कीड़ी, चींटे, बर्र, ततैये, मक्खी आदि सबों को उबाल डालते हैं। कभी कभी तो बहुत दिन रखे रहने पर, शक्कर के मैल में कीड़े तक पड़ जाते हैं, जिन्हें उबाल कर मिठाई बना लेते हैं। आप स्वयम् अनुमान लगालें कि ऐसी मिठाई खाने

नाओं की तन्दुरुस्ती कैसी होगी? इसके अतिरिक्त बाजारू मिठाइयों पर रास्ते की धूल उड़कर गिरती रहती है, और गन्दी जगहों की मक्खियाँ उनपर बैठकर हजारों रोगों के कीड़े उनपर छोड़ जाती हैं। यही कारण है कि बाजारू मिठाइयों के खाने वालों का स्वास्थ्य मिठाई न खाने वाले हमारे ग्रामीण भाइयों के स्वास्थ्य से बिल्कुल खराब होता है। अतएव जिन्हें स्वप्नदोष से बचना हो वे बाजारू और बहुत शक्करवाली मिठाइयाँ कभी न खावें। मिष्ठान्न खाने की इच्छा हो तो अपने घरमें ही तय्यार कर लो या वैसे ही रोटी, भात दूध दही, मक्खन, आदि के साथ देसी शक्कर खालिया करो। नहीं तो मीठा मेवा जैसे छुहारे, किशमिश मुनक्का अंजीर, पिंडखजूर आदि अथवा मीठे फल जो ऋतु के अनुसार मिलते हों खालिया करो। लेकिन बाजारू मिठाइयाँ कदापि मत खाओ।

(६) कब्ज

सारे डाक्टर और हकीम एक स्वर से यही चिल्लाते हैं कि सारे रोगों की उत्पत्ति पेट से ही है। जिसका पेट साफ है उसकी तबियत भी साफ है और जिसके पेट में गड़बड़ है उसकी तबियत भी गड़बड़ ही है। अतएव स्वप्नदोष उन्हें ही होता है जिन्हें पेट में कब्ज की शिकायत रहती है। स्वप्नदोष के बीमारों को सबसे पहिले, कब्ज दूर करने की चेष्टा करनी चाहिये। कब्ज के हटाने के लिये जुलाब मत लो न इश्तहारी दवाइयाँ तथा नमक सुलेमानी ही फाँको। भोजन को खूब चबाकर खाओ और अधिक न खाओ। ३ या ४ छोटी हरें और चवन्नी भर काला नमक पीसकर हफ्ते या दो हफ्ते में अथवा जब कभी कब्ज की शिकायत हो, रात को सोते समय ठण्डे या गरम पानी के साथ ले लिया करो। अथवा त्रिफला (हरें बहेड़ा आँवला) आधा तोला नित्य सोते वक्त जल के साथ ले लेना चाहिये। सुबह पाखाना जाने के पूर्व ठण्डे या गरम पानी में थोड़ा सा सेंधा नमक

डालकर तीन चार दिन पी लेने से भी कब्ज़ छूट जाती है। जो लोग रात्रि के अन्तिम प्रहर में, अथवा बिछौनों से उठते ही पाव या डेढ़ पाव शीतल जल नित्य पी लेते हैं, उन्हें उम्रभर पेटकी कोई शिकायत ही नहीं होती। निराहारव्रत भी कब्ज़ को दूर करता है। व्रत में मिठाइयाँ और शर्वत अँतड़ियों को निर्बल बनाते हैं तथा कब्ज करते हैं। व्रत के दिन प्यास लगे तब पानी में सिर्फ थोड़ा सा निम्बू का रस निचोड़कर पीते रहना चाहिये। यदि 'एनिमा' लगाया जावे तो और भी उत्तम है (एनिमा, गुदाइन्द्रिय द्वारा पेट में पानी पहुंचाता है, और अँतड़ियों को शुद्ध कर देता है इसमे डाक्टरों की आवश्यकता नहीं है। सिर्फ रबर की नलिका जो अंग्रेजी दवा बेचनेवालों के यहाँ मिलती है अपने पास रखना चाहिये। यदि क्रिया न आती हो तो किसी डाक्टर से पूछ लो, अथवा किसी के लगाते हुए या अपने ही एकबार एनिमा लगवा कर सीख लो)। इसके अतिरिक्त अँतड़ियों के व्यायाम द्वारा पेट शुद्ध रखने का विशेष ध्यान रखो। स्नान करते समय किसी बर्तन से जल में बैठ कर, धीरे धीरे अपने पेट तथा पेडू को रगड़ो। ऐसा आठ दस मिनट नित्य करने से भी कब्ज नहीं होगी।

सीधे लेट जाइये, अथवा खड़े हो जाइये, या पद्मासन लगा कर सीधे बैठ जाइये। बाद से नासिका द्वारा पेट में साँस को बाहिर निकाल कर, अपने पेट को भीतर की तरफ खींच कर पीठ से लगाइये। ऐसा नित्य पाँच या छः बार करने से पेट में कब्ज की बीमारी कदापि नहीं हो सकती। इसे योगक्रिया में "उड्डियान बन्ध" कहते हैं।

(७) रातदिन लिंगस्पर्श

अक्सर देखा गया है कि लोग, रात दिन अपनी धोती या पजामे में अपना हाथ डाले रहते हैं, और अपनी लिंगेन्द्रिय को मसला करते हैं, यह बहुत ही बुरी आदत है। या तो खुजाल के कारण या कामोत्तेजना के कारण लोग ऐसा करते हैं। यह समाज में हँसी करानेवाली

तथा पेशाब बाहिर करने वाली आदत होती है। यदि सुजाक के कारण ऐसा करना पड़ता है, तो सुजाकी को हटाने का शीघ्र ही इलाज करना चाहिए। सुजाक प्रायः इन्द्रिय पर के सफेद मैल को साफ न करने से होती है, अतएव उसे हमेशा धो डालना चाहिये। यदि वैसे ही सुजाने की आदत पड़ गई हो तो थोड़ा ध्यान रखने से सहज में छूट सकती है। रात दिन इन्द्रिय को स्पर्श करते रहने से उसमें व्यर्थ ही उत्तेजना होती है, और व्यर्थ उत्तेजना में वीर्य पतला पड़ जाता है, जो स्वप्न दोष का कारण होता है।

"एक मनुष्य एक सेठ के यहाँ नौकर रहा। वह उसकी कन्या पर बहुत ही आसक्त हो गया, लेकिन नौकर होने के कारण अपनी इच्छा पूर्ण न कर सका। मानसिक विकार का फल यह हुआ कि, उसका वीर्य पतला हो गया और पेशाब तथा स्वप्न दोष के जरिये निकलने लग गया। अब उसका विवाह हो गया है, लेकिन वह स्त्री के अयोग्य है।" इसी तरह "एक महाशय को एक अस्पताल में एक नर्स के साथ कई दिन तक साथ साथ सोने का मौका मिला लेकिन सम्भोग न हो सका। परिणाम यह हुआ कि वह नपुंसक हो गया।" ये दोनों सच बात सत्य हैं, कल्पित कथा के किस्से नहीं हैं।

अतएव लिंगेन्द्रिय को स्पर्श की उत्तेजना से सदा बचाने का ध्यान रखना चाहिये। लिंगेन्द्रिय को छू कर या स्पर्श के विचारों से कदापि उत्तेजित नहीं करना चाहिये नहीं तो स्वप्नदाष अनिवार्य हो जावेगा।

(८) लिंगेन्द्रिय की अशुद्धता

जो लोग अपनी उपस्थेन्द्रिय को शुद्ध नहीं रखते उन्हें स्वप्नदोष होने लगता है। अतएव प्रत्येक पुरुष को चाहिये कि वह सायं प्रातः दोनों समय अपनी लिंगेन्द्रिय के मुँह पर का चमड़ा (सुँपट) हटा कर, सुपारी पर जो सफेद मैल जमा हो उसे ठंडे पानी से धोकर साफ करता रहे। धोने में लापरवाही नहीं करनी चाहिये। अच्छी तरह ध्यान

पूर्वक साफ करना चाहिये, ताकि कहीं भी मैल न रहने पावे। पाखाने के समय अथवा एकांत स्नान के समय अच्छी तरह सफाई की जा सकती है। परन्तु वे लोग जो तीन छटाँक या पाव भर पानी लेकर पाखाने जाते हैं, दोनों इन्द्रियों को धो कर साफ नहीं कर सकते। इसलिये कम से कम एक सेर जल ले कर, जो शुद्ध और शीतल हो, पाखाने जाना चाहिये।

लिंगेन्द्रिय के आसपास लगभग सोलह सत्रह वर्ष की उम्र में बाल उग आते हैं। इन्हें साफ न करने से, इनकी जड़ों मे मैल जम जाता है और जमजुएँ (चमेजूँ) तक पैदा हो जाती हैं। इनसे खुजली पैदा होती है, और खुजलाने से कामोत्तेजन होता है, जो ठीक नहीं है। इसके अतिरिक्त अण्डकोष आदि पर मैल जमा रहने के कारण वीर्य में उष्णता बढ़ जाती है और वीर्य दूषित होकर स्वप्रदोष होने लगता है। इसलिये इस बात का सदा ध्यान रखना चाहिये कि अधिक बढे बाल वहां कभी नहीं होने पावें। प्राय. कई शौकीन भाई, अपने मुँह के बाल तो नित्य मुँडवाते हैं, लेकिन वहाँ के बाल महीनों तक साफ नहीं करते। लिंगेन्द्रिय के आसपास के बाल, यदि आठवें या पन्द्रहवें दिन उस्तरे से साफ कर दिये जावें, तो बड़ी ही उत्तम बात है, नहीं तो हर महीने अवश्य साफ करना चाहिये। ऐसी जगहों पर, बाल उड़ाने का साबुन इस्तेमाल नहीं करना चाहिये।

स्नान के समय अक्सर देखा गया है कि, लोग लिंगेन्द्रिय को अच्छी तरह स्नान नहीं कराते। धोती या पाजामे मे थोड़ा सा पानी डाल कर स्नान क्रिया को समाप्त कर देते हैं—यह ठीक नहीं है। यही लज्जा या बेपरवाही स्वप्रदोष का एक कारण है। लिङ्ग भी इस शरीर का एक अङ्ग है, उसे अवहेला की दृष्टि से देखना एक बड़ी भारी गलती है। यथावश्यक लज्जा ही इसके लिये ठीक है—व्यर्थ ही लज्जावश इसकी सफाई न करना अनुचित है। स्नान करते समय, विपुल जल से लिंगेन्द्रिय को अच्छी तरह चारों ओर से साफ करो।

रातों में या अण्डकोषों पर मैल मत जमने दो। स्नान करने के बाद, जब आप अपना शरीर किसी वस्त्र से पोंछें उस समय राल तथा इन्द्रिय को भी अच्छी तरह पोंछ डालो।

(६) स्नान की बेपरवाही।

जो लोग गरम जल से स्नान करने के आदी हैं उन्हें स्वप्नदोष हो जाता है, इसलिये जिन्हें नीरोग रहने की इच्छा हो उन्हें चाहिए कि प्रत्येक ऋतु में शीतल जल से ही स्नान करें। गरम पानी से नहाने में अपना बड़प्पन मत समझो, बल्कि उसे अनेक बीमारियों का मित्र समझो। जो लोग नित्य शीतोदक से स्नान करते हैं उन्हें वैद्य या डाक्टरों के घर बहुत कम जाना पड़ता है। स्वप्नदोष वाले को,गर्म पानी से भूलकर भी नहीं नहाना चाहिये। किसी बीमारी के कारण, निर्बलता के समय यदि गर्मजल से स्नान किया जावे तो कोई हानि नहीं। तन्दुरुस्त व्यक्ति को गर्म जलका स्नान विषतुल्य समझना चाहिये। गर्म-जल से स्नान करनेवालों के मायः कन्यायें अधिक उत्पन्न होती हैं। सिरपर गरम पानी डालने से आँखें कमजोर हो जाती हैं। देखा जाता है कि, स्नान के विषय में लोग बहुत ही बेपरवाही करते हैं। यदि स्नान करने की रीति उचित हो तो मनुष्य को कोई रोग ही नहीं हो सकता। स्नान के लिये इन बातों का ध्यान रखना चाहिये—पानी अत्यन्त स्वच्छ छना हुआ और ताजा हो, विपुल हो, शीतल हो सुगन्धित हो और मीठा हो। स्नान के समय शरीर के प्रत्येक अङ्ग को किसी गीले वस्त्र से रगड़ रगड़कर, अच्छी तरह साफ साफ करना चाहिए। स्नान के बाद किसी मोटे कपड़े से रगड़ कर शरीर पोंछा जावे। भोजन के बाद तुरन्त ही स्नान नहीं करना चाहिये और न स्नान के बाद, तुरन्त ही भोजन करना चाहिये—ऐसा करने से जठराग्नि मन्द हो जाती है। स्नान और भोजन में कम से कम तीन घण्टे का फर्क होना चाहिये। दोपहरी में या धूप पड़ जाने पर स्नान करना उतना फायदे मन्द नहीं है, जितना कि सूर्योदय से पूर्व या सूर्योदय के समय।

स्नान को "जल चिकित्सा" समझना चाहिये। स्नान के समय थोड़ी सी सावधानी रखने से ही कई रोग, और मुख्यतः चर्मरोग बिना औषध के ही दूर हो जाते हैं। स्नान यदि उचित क्रिया से किया जावे तो "स्वप्नदोष" बहुत कम हो जाता है। लोगों को नदी, तालाव, झरने, बावली, पोखर आदि जलाशयों में ही स्नान करना चाहिये। देखिये महर्षि मनु कहते हैं—

नदीषु देवखातेषु तडागेषु सरःसु च।
स्नानं समाचरेन्नित्यं गर्तप्रस्रवणेषु च॥

स्वप्नदोष के रोगी को नित्य कमर भर पानी में रहकर स्नान करना चाहिये। इससे स्वप्नदोष बहुत कुछ कम हो जाता है। पानी में घुसकर केवल शरीर भिगोकर, वाहिर निकल आने से कुछ भी लाभ नहीं होता, बल्कि १० या १५ मिनिट तक पानी में रह कर अच्छी तरह स्नान करना चाहिये। नदी, तालाव, या बावली का पानी निर्मल होना चाहिये, नहीं तो उल्टी हानि होने की सम्भावना है। बहुत से लोग स्नान को धर्म समझते हैं, इसीलिये जैसे बने तैसे एक दो मिनिट में सेर आध सेर पानी से अपना बदन चुपड़ लेते हैं परन्तु यह ठीक नहीं है। पवित्रता धर्म का एक अङ्ग है सही, किन्तु पवित्रता होनी चाहिये। ऐसे "काकस्नान" से तो उल्टी अपवित्रता—अधर्म होता है। वेद भी उत्तम जलसे रोगों को दूर करने की आज्ञा देता है—

"अरिप्रा आपोअपरिप्रमस्मात। प्रास्मदेनो दुरितं सुप्रतीकाः प्रदुष्वप्न्ये प्रमलं वहंतु॥"

अथर्व वेद १०।५।२४

अर्थात्—निर्दोष जल हमारे (रिप्रंअप) दोष दूर करे तथा (एनः) पाप मल और बुरे स्वप्न के कारणों को दूर करे। भावार्थ यह कि

शुद्ध जल से अच्छी प्रकार स्नान करने पर शारीरिक मल तथा स्वप्न-दोष दूर हो जाता है।

(१०) लिंगेन्द्रिय को गर्मी पहुँचाना

लिंगेन्द्रिय को गर्मी कभी नहीं पहुँचानी चाहिये। किसी रोग विशेष के समय रोग निवारणार्थ गर्म जल से धोने तथा सेंक करने में कोई हानि नहीं लेकिन व्यर्थ ही गर्मी नहीं पहुँचाना चाहिये। आग के आगे पैरों के बल या टाँगें फैला कर नहीं बैठना चाहिये। इससे वीर्याशय तथा अण्डकोषों को गर्मी पहुँचती है, जिससे उनमें हरकत पैदा हो कर वीर्य में तरलता उत्पन्न हो जाती है। यदि सर्दी के मौसिम में अग्नि से तापना हो तो पद्मासन (आल्थी पाल्थी) से बैठकर तपने से लिंगेन्द्रिय को गर्मी नहीं पहुँचेगी। देखा गया है कि लोग अक्सर मोटे कपड़े का लँगोट बाँधते हैं, यह अनुचित है। इससे भी गर्मी बढ़ती है। इसलिये लँगोट महीन और मुलायम कपड़े का ही बाँधे रहना चाहिये। स्वप्न दोष के रोगियों को रातदिन लँगोट नहीं बाँधे रहना चाहिये केवल सोते समय ही रक्खें तो अच्छा है। अनेक लोग धोती की चोटी पछरी (लाँग) बना कर लिंगेन्द्रिय को खूब खींचतान कर बाँध रखते हैं, धोती बाँधने का यह ढंग अत्यन्त बुरा है। धोती इस ढंग से बाँधना चाहिये कि लिंगेन्द्रिय को गर्मी नहीं पहुँचे और वहाँ आवश्यक हवा पहुँचती रहे।

(११) हस्तमथुन

हस्तमैथुन तो स्वप्न दोष की जड़ है। हस्तमैथुन को हस्तक्रिया मुष्टिमैथुन, हाथ रस कुटेव हेन्डप्राक्टिस (Hand practice) भी कहते हैं। लिंगेन्द्रिय को अपने हाथ की मुट्ठी में लेकर घिसना रगड़ना हिलाना और वीर्य निकाल देना, हस्तमैथुन कहा जाता है। इस मैथुन ने हमारे देश को धूल में मिला दिया। इस विषय पर एक

स्वतंत्र पुस्तक, बच्चों और नवयुवकों के लिए अलगही लिखी जानी चाहिये। जिस तरह नशेबाजों से नशे का छूटना कठिन है उसी तरह हस्तमैथुन के अभ्यासियों से, इसका छूटना मुश्किल हो जाता है। इस बुरे अभ्यास से भयकर से भयकर रोग हो जाते हैं, जिनके कारण शरीर जीर्ण शीर्ण हो कर शीघ्र ही नष्ट हो जाता है। पागलखानों में ऐसे पागलों की सख्या अधिक पाई जाती है जो हस्तक्रिया के अभ्यासी रह रहे हैं। हस्तमैथुन से मनुष्य, नामर्द अवश्य हो जाता है। स्त्री के काम का नहीं रहता। इस बुरी आदत के चगुल से जो बचा है, वह बड़ा ही भाग्यशाली और धन्य है। आजकल तो छोटे छोटे बच्चों तक को इस दुर्व्यसन में सलग्न देखा जाता है। कुसगति के कारण नासमझ बच्चे हस्तक्रिया करने लगते हैं। उन्हें कुछ अपने भले बुरे का ज्ञान तो होता ही नहीं—वे अपरिपक्व बुद्धि वाले बच्चे, इन्द्रियघर्षण में आनन्द होता देख कर बारम्बार इसे करने लगते हैं, और अपना भावी जीवन पूर्ण अधकारमय कर लेते हैं। मूर्ख लोग बालकों को यह कह कर हस्तक्रिया का उपदेश देते हैं कि—"इससे लिंगेन्द्रिय बढ़ती है" लेकिन यह खयाल भयकर बेवकूफी है। इससे इंद्रियका बढ़ना तो दूर रहा, बल्कि, इतनी खराबियाँ पैदा हो जाती हैं कि, जिनकी कुछ गिनती ही नहीं। इन्द्रिय की वृद्धि रुक जाती है, टेढ़ापन आ जाता है, मूत्रनलिका का छेद चौड़ा हो जाता है, इत्यादि। शीघ्रपतन, स्वप्नदोष, प्रमेह, सुजाक, ध्वजभंग, आदि भयकर रोग हो जाते हैं। मृगी, अपस्मार, मूर्च्छा, क्षय, उसे आ दबाते हैं—यहाँ तक कि अल्पायु में ही इसका अभ्यासी मर जाता है। हमारे देश के फी सैकड़ा ९० बालक और नवयुवक इस दुष्क्रिया में रत हैं। स्कूल और बोर्डिंग में तो शायद ही कोई विद्यार्थी बचता हो। पाखाना जाते समय प्रायः हस्तक्रिया करने का मौका मिलता है। कभी कभी तो अपनी स्त्री के होते हुए भी, लोग हस्तमैथुन द्वारा, अपना वीर्यपात करते देखे गये हैं!!! छोटे छोटे बच्चे जब इस क्रिया को आरभ करते हैं तो इन्द्रिय

को हजारों बार घिसने पर भी यद्यपि उनका वीर्य नहीं निकलता, तथापि इंद्रिय टेढ़ी और निकम्मी हो जाती है। लेकिन जब वीर्यपात शुरू हो जाता है तो कुछ दिन में दस बारह बार के घिसने से ही वीर्य निकल जाता है। अन्त में वह दशा यहाँ तक देखी गई है कि, कामोत्तेजन हुआ, और वीर्यपात हो गया! यह नामर्दी नहीं तो क्या है? यह मौत की निशानी नहीं तो क्या है?

प्यारे बालको और नवयुवको! इस सत्यानाशी आदतसे अपने को बचाओ। यह आदत तुम्हें मिट्टी में मिलाने वाली है। इस क्रिया के लिये तुम लोग अपनी लिंगेन्द्रिय को छुओ भी मत। यदि कोई नीच इसके लिये तुम्हें कहे भी तो उसकी चिकनी चुपड़ी बातों पर ध्यान न दो। याद रखो नहीं तो इस दुनिया से तुम्हारा नामोनिशान मिट जावेगा बर्बाद हो जाओगे। इस बुरी आदत से स्वयम् बचो और अन्य लोगोंको समझा कर बचाओ तुम्हें बड़ा भारी पुण्य होगा।

(१२) गुद-मैथुन।

गुद-मैथुन भी स्वप्नदोष का उत्पादक है। गुद-मैथुन को पुरुष-मैथुन और लौंडेबाजी भी कहते हैं। यह हस्त-मैथुन का भाई-बन्धु है। इसके अभ्यासी को स्वप्नदोष की बीमारी हो जाती है। मुख कान्ति-शून्य शरीर दुर्बल, और बुद्धि क्षीण हो जाती है। गुद-मैथुन करने वाले पुरुषको, लिंगेन्द्रिय सम्बन्धी अनेक रोग हो जाते हैं। क्योंकि यह अप्राकृतिक कार्य है। परमात्मा ने गुदा इन्द्रिय की रचना मैथुन के लिये नहीं की है, जो इस प्राकृतिक नियम का उल्लंघन करते हैं, वे अवश्य ही अपने किये का फल पाते हैं।

जिसके साथ यह मैथुन किया जाता है उसे भी हानि होती है। क्योंकि प्रकृति ने गुदा और लिङ्ग का सम्बन्ध रखा है। जिसकी गुदा इन्द्रिय अधिक मैथुन कराने से शिथिल हो जाती है, उसे स्वप्नदोष तथा क्षीणपतन रोग हो जाता है। पुरुष को चाहिये कि अपनी गुदा

इन्द्रिय की सङ्कोचनशक्तिको अच्छी वलवान रखे। अधिक और अनेक लोगों से मैथुन कराने वाले की गुदा-इन्द्रिय ढीली पड़ जाती है, जो शीघ्रपतन का कारण होता है। जो लोग गुद-मैथुन कराने के अभ्यासी हो जाते हैं, और जिसने कहा उसी से हो कर लेते हैं, वे वड़ी ही भूल करते हैं। दिन में कई वार कई पुरुषों से मैथुन कराने वाले का जीवन नष्ट हो जाता है, यह एक आदतसी पड़ जाती है। हमारे देश के कई मर्द, वेश्याओं की तरह यह धन्धा करते हैं और हमारे वहुतेरे भाई उनके साथ अपना मुँह काला करते हैं। गुद-मैथुन कराने की आदत बचपन से ही पड़ जाती है। वचपन में कुसङ्गति के कारण अथवा पैसे, मिठाई आदि के लोभ में फँस कर, पुरुष इसके आदी हो जाते हैं। जिनके माँ वाप आरम्भ में अपने वच्चों को चटोरे वना देते हैं, और वाद में ग़रीवी आ जाने या अन्य किसी कारण से उन्हें खाने खरचने को नहीं देते, वे वच्चे प्रायः गुद-मैथुन कराने के अभ्यासी हो जाते हैं। माँ-वापों को उचित है कि अपने वच्चों पर वारीक नजर से इस वात की देखभाल जरूर रखा करें।

माता-पिताओं को चाहिये कि वहुत ही सावधानी से अपने वालकों का पालन करें। व्यर्थ वच्चों को दवाने और डाटने से कभी कभी उलटा फल हो जाता है। आजकल नासमझ माँ-वाप अपने वालकों को सुसङ्गति में वैठा देखकर वड़े ही रुष्ट होते हैं, और कुसङ्गति में देख कर कुछ भी नहीं कहते, यह उनकी भारी भूल है। सुसंगति और कुसगति की पूर्ण विवेचना करने के पश्चात् ही अपने वालको को कुछ कहना सुनना चाहिये। सुसङ्गति के विरोधी कुछ वदमाशों के कहने से ही, अपने वच्चों को तङ्ग नहीं करना चाहिये। सज्जन, विद्वान, साधु-स्वभाव, देश-भक्त आदि व्यक्तियों से पाप कर्म वहुत ही कम होते हैं—साथ ही ऐसे महाशयों के विरोधी भी अधिकांश होते हैं—जो रात दिन उनके विरुद्ध, कार्य करने में तथा उनको वदनाम करने में कुछ उठा नहीं रखते। ऐसे निन्दकों की निन्दा पर हमारे वच्चों को,

नवयुवकों को तथा उनके माता-पिताओं को कुछ भी ख्याल नहीं करना चाहिये । क्योंकि दुष्टों का स्वभाव ही, सज्जनों की निन्दा में अपना जीवन व्यतीत करने का होता है । अक्सर देखा गया कि गँजेड़ी भँगेड़ी शराबी वगैरः नशेबाज व्यक्ति दूसरों की निन्दा करते रहते हैं, समझदार मनुष्यों का कर्तव्य है, कि उनकी बातों पर विश्वास न लावें ।

(१३) बहुमैथुन

अधिक स्त्री-प्रसंग से भी स्वप्नदोष हो जाता है । आजकल लोगोंने स्त्री को अपने ऐशो-आराम का साधन मान लिया है, किन्तु यह भूल है । स्त्री जाति के साथ यह अन्याय है और अत्याचार है। सन्तान प्राप्ति की इच्छा से ही स्त्री-प्रसंग होना चाहिये—न कि क्षणिक आनन्द लूटने की इसे मशीन बना डालनी चाहिये । हम पीछे लिख आये हैं कि, दो वर्ष में एक बार स्त्री-प्रसंग (वीर्यपात) करना ही शास्त्र-सम्मत है, बशर्ते कि एक बार के प्रसंग में ही गर्भस्थापन हो गया हो।

एक मनुष्य ने एक बड़े विख्यात वैद्यराज से प्रश्न किया कि "स्त्री प्रसंग कितने दिन में एक बार होना चाहिये ?"

वैद्य ने कहा—दो वर्ष में एक बार ।

मनुष्य—यदि इतने समय तक कोई न रह सके तब ?

वैद्य—वर्ष भर में एक बार कर सकता है।

मनुष्य—यदि कोई इतना भी नहीं रुक सके तब ?

वैद्य—उसे छः महिने में एक बार करना चाहिये ।

मनुष्य—छः महीने भी न ठहर सके तो ?

वैद्य—वह तीन महीने में एक बार स्त्रीप्रसंग कर सकता है ।

मनुष्य—इससे कम कितने दिनों में ?

वैद्य—प्रति मास भी।

मनुष्य—इससे कम ?

वैद्यः—हर पन्द्रहवें दिन।

मनुष्यः—इससे कम ?

वैद्यः—(ठण्डी साँस लेकर) इससे कम हफ्ते में एक बार।

मनुष्यः—इससे कम ?

वैद्यः—(झुँझलाकर) हफ्ते में दो बार स्त्री प्रसङ्ग कर सकता है, लेकिन तन्दुरुस्त और बलवान नहीं रह सकता।

मनुष्यः—इससे कम कितने दिनमे।

वैद्यः—(क्रोध पूर्वक) इससे कम, वह जी चाहे तब काला मुँह करे, लेकिन अपना कफ़न भी तैयार रखे।

आजकल अनेक लोग नित्य स्त्री-प्रसङ्ग करते हैं। बहुतेरे तो एक रात्रि में कई बार झख मारते हैं। ऐसे मनुष्यों के, वीर्य की जगह खून निकलता है, और उन्हें वीर्यपात का आनन्द सा आ जाता है। ऐसे लोगों की मृत्यु अनिवार्य है। अधिक मैथुन से वीर्य गाढ़ा नहीं होने पाता और पतला रह कर स्वप्नदोष होने लगता है। साथ ही स्त्री की आदत भी खराब हो जाती है। क्योंकि उसे भी नित्य मैथुन की इच्छा होती है—यदि पति कुछ दिनोंके लिये कहीं चला जाता है, तो वह पर पुरुष गमन करने लगती है।

जो स्त्री पुरुष एक ही बिछौनेमें सोते हैं उन्हें स्वप्नदोष ही क्या ऐसे बहुत से शारीरिक दोप हो जाते हैं। एक बिछौनेमें स्त्री के साथ नित्य सोना, मानों अपनी मृत्यु से लिपट कर सोना है। इसलिये स्त्री-पुरुषों को चाहिये कि, एक दूसरे की दीर्घायु के लिये अलग अलग बिछौनोंमें सोया करें। जो स्त्री, अपने पतिके साथ नित्य एक बिछौनेमें सोने के लिये उसे विवश करती है वह मानों खुद विधवा होने की इच्छा करती है—यही बात पुरुषके लिये भी है। जगद्वन्दनीय महात्मा गान्धी ने "ब्रह्मचर्य" लेख में लिखा है कि "स्त्री पुरुष अलग अलग बिछौने ही न रखें; बल्कि अलग अलग कमरों में सोवें।"

महात्माजी का यह वाक्य हमारे बच्चों तथा विवाहित नवयुवकों को अपने हृदय में अच्छी तरह लिख लेना चाहिये।

आजकल हमारे मासमझ मूर्ख मा-बाप विवाह के बाद अपने बच्चों को उनकी स्त्री के साथ एक बिछौने में सोनेके लिये विवश करते हैं। कुछ मूर्ख औरतें भी, उन समझदार लोगों को जो अपनी स्त्रियों से अलग बिछौनोंमें सोते हैं उन्हें, कोसती हैं—उन्हें नामर्द बताती हैं, और परस्त्रीगामी कहकर उन्हें लज्जित करने में कोई कसर उठा नहीं रखती। उसकी पत्नी को भड़काकर उसे व्यभिचार के मार्ग पर ले जाती हैं। ऐसे मूर्ख माता पिता तथा स्त्री-पुरुषों को अपनी ऐसी आदतें छोड़ देनी चाहिये।

साथ ही हम हमारे विवाहित भाई बहनों से भी प्रार्थना करते हैं कि ऐसे मूर्ख स्त्रीपुरुषों की व्यंगोक्तियों पर कुछ भी ध्यान न दावें और अलग अलग बिछौनोंमें तथा कमरों में सोकर अपनी तथा अपने वंश की उन्नति में हाथ बटावें।

(१४) बीमारी में कुपथ्य।

बीमारी की दशा में पथ्य जितना लाभदायक है उतनी दवा नहीं है। दवा कितनी भी गुणप्रद खाई जावे यदि रोगी पथ्य से नहीं रहता तो रोग हरगिज नहीं हटेगा बल्कि दिनबदिन बढ़ेगा ही। यदि रोगी पथ्य से रहे, और भले ही दवा न भी ले तो आराम हो जाता है। सारांश यह कि दवा तो केवल साधन है, जिसका साध्य पथ्य है। जो लोग रोग में कुपथ्य कर बैठते हैं, वे उस मौजूदा रोग से अलग कोई नया रोग अपने हाथों अपने शरीर में पैदा कर लेते हैं। बीमारी में किये कुपथ्य का वीर्य पर बहुत ही शीघ्र प्रभाव होता है, जिसके कारण स्वप्नदोष प्रभृति कई वीर्यविकार उत्पन्न हो जाते हैं। जिनका शरीर किसी रोग विशेष से अत्यन्त निर्बल हो गया हो उन्हें कुपथ्य कदापि नहीं करना चाहिये—नहीं तो स्वप्नदोष अवश्य पल्ले बँध जावेगा।

(१५) बहु भोजन ।

भोजन पर ही इस शरीर की स्थिति है। जैसा भोजन होगा, वैसा ही शरीर और स्वभाव भी होगा। इस बात को अधिक साफ करने की कोई आवश्यकता नहीं है, क्योंकि यह बात सभी लोग जानते हैं। सात्विक भोजन सतोगुणी और तामसिक भोजन तमोगुणी स्वभाव बना देता है। मासभोजी क्रूर और निर्दय तथा शाक भोजी शान्त और सदय होते हैं यह सब जानते हैं। अतएव भोजन के विषय मे बड़ी ही सावधानी अपेक्षित है। इस विषय पर हम पहिले लिख आये हैं।

बहुभोजन से निश्चय ही स्वप्नदोष हो जाता है। अधिकांश लोगों का ऐसा ख्याल है कि, जितना अधिक भोजन किया जावेगा उतना ही बल बढ़ेगा। यह एक भारी भूल है। कभी कभी तो बहु-भोजन से मृत्यु तक होती देखी गई है। यह बात एक मानी हुई है कि घृत से भौतिक अग्नि प्रज्ज्वलित होता है, किन्तु यदि अग्नि की हैसियत से अधिक घृत एक ही बार मे उसपर छोड़ दिया जावे, तो वह बुझ जावेगा। इसी प्रकार बहुभोजन जठराग्नि को बुझा देता है। हमेशा, भोजन परिमाण में ही करना चाहिये। मनुष्य को अपने दैनिक भोजन का अन्दाज बाँध लेना चाहिये, और उससे अधिक कभी नहीं खाना चाहिये।

भोजन करते समय एक बात और ध्यान मे रखनी चाहिये कि—भोजन को दाँतों से खूब चबाकर खाया जावे। एक ग्रास को कम से कम तीस बार चबाना चाहिये। बहुत से पदार्थ ऐसे भी होते हैं जिन्हें तीस से भी अधिक, और बहुत से ऐसे होते हैं जिन्हें तीस बार से भी कम चबाना पड़ता है। तात्पर्य यह कि, दाँतों का काम आँतों से नहीं लेना चाहिये। खूब चबा कर खाने से भोजन शीघ्र ही पचता है, और शरीर पुष्ट हो कर बल बढ़ता है। स्वप्नदोष के बीमारों को खूब चबा कर खाना चाहिये, और कभी ठूँस ठूँस कर

नहीं खाना चाहिये। दिन में नियत समय पर सिर्फ दो बार भोजन करना चाहिये बारम्बार नहीं खाना चाहिये। स्वप्नदोष ग्रस्त मनुष्य यदि सायंकाल को भोजन न किया करें तो उन्हें बहुत कुछ लाभ, कुछ दिनों में ही नजर आवेगा।

(१६) गुरुपाक भोजन

सायंकाल को या रात में गुरुपाक अर्थात् देर से हजम होने वाला भोजन नहीं करना चाहिये। अक्सर देखा गया है कि दाल चावल, रोटी आदि लघुपाक भोजन को लोग प्रातःकाल खाते हैं तथा पूरी शाक प्रभृति गुरुपाक पदार्थ को रात्रि के भोजन में रखते हैं। यह भारी भूल है। कौन सी वस्तु लघुपाक है और कौन सी गुरुपाक इसका वर्णन हम आगे करेंगे। सबसे बड़ी आवश्यकता तो इस बात की है कि, प्रत्येक व्यक्ति अपनी प्रकृति के अनुसार अनुभव द्वारा लघुपाक और गुरुपाक वस्तुओं का निश्चय कर ले। क्योंकि जो वस्तु कफ प्रकृति वाले को हितकर है, वही वस्तु कभी कभी पित्तप्रकृति वाले को नुकसान करती है। अतएव यह बात अपने अपने तजुर्बे पर ही रखनी चाहिये।

हाँ यह बात हमारे पाठकों को ध्यान में रखना जरूरी है कि "अन्न को जितनी अधिक दुर्दशा की जावेगी वह उतना ही अधिक गुरुपाक बन जावेगा।" जैसे चना—इसे यदि जैसा का तैसा भाड़ में भून कर खाया जावे तो लघुपाक होगा। अब इसी भुने हुए चने का छिलका अलग करके खाया जावे तो वह दाल छिलके युक्त भुने चने से कुछ गुरुपाक होगी। यदि बेसन (चने का चूर्ण) की रोटियाँ खाई जावें तो वह और भी गुरुपाक होगी। यदि बेसन को घी में भून कर शक्कर की चाशनी मिला कर कोई मिठाई बनाई जावे तो वह विशेष गुरुपाक होगी। इसी तरह गेहूँ की भी बात है। आटा जल्दी हजम होता है, तो मैदा उससे देर में पचता है; और यही मैदा अगर विशेष

क्रिया द्वारा घी वगैरः में भूना जावे और शक्कर वगैरः मिलाकर कोई मिठाई बनाली जावे तो अत्यधिक गुरुपाक हो जावेगा। सारांश यह कि, अन्न की जितनी कूटा छानी वगैरः क्रियाएँ की जावेंगी, वह उतना ही गुरुपाक बनता जावेगा। गुरुपाक तथा लघुपाक पहिचानने का यह सीधा तरीका है।

भोजन की असावधानी ही स्वप्नदोष उत्पन्न करती है। अतिभोजन से धातु विकार हो जाता है, यह बात हम पीछे कह आये हैं। अपने पेट के चार भाग करो। इसमें से दो भाग अन्न के, एक भाग जल के लिये, और एक भाग वायु के लिये रखो। दिन में सिर्फ दो बार ही भोजन करो। रात दिन मुँह चलाते रहने में अपना बड़प्पन मत समझो, बल्कि याद रखो, यह बड़प्पन एक न एक दिन ले डूबेगा। भोजन के समय भोज्य पदार्थ अधिक नहीं होने चाहियें—जितने कम हों उतना ही अच्छा।

मनुष्य के पेट मे भोजन का जो भाग हजम नहीं होता वह ऑव बन जाता है, और वह धातुस्थान मे विकार उत्पन्न कर देता है। भोजन सदा स्निग्ध, लघु, सादा, रसयुक्त, मधुर और प्रिय होना चाहिये। गेहूँ, चॉवल, चना, बाजरा, ज्वारी, साल, जौ, अरहर, मूँग, दूध, दधि, घृत, मक्खन, शक्कर, सेंधानमक, कालीमिर्च, आलू, शकरकन्द, उत्तम ताजा रसयुक्तफल, इत्यादि सब सात्विकभोजन में है। गर्म मसाले, लालमिर्च, प्याज, काँदे, शलजम, मांस, चर्बी, तेल, ये सब निकृष्ट भोजन में माने जाते हैं। बहुत दिनों के बने और सड़े पदार्थ, तथा मद्य मांसादि अत्यन्त बुरे और त्याज्य पदार्थ है। कन्द, मूल, फल और दूध अच्छी चीजें हैं। गेहूँ का दलिया, चाँवल मूँग की खिचड़ी, थूली, साबूदाने की खीर यदि रात्रि का भोजन रखा जावे तो, बड़ी ही अच्छी बात हो। चौबीस घण्टे में, एक समय भोजन करना स्वास्थ्य के लिये बहुत ही फायदेमन्द है। आवश्यकता पड़ने पर, दूसरे वक्त दूध पी लिया जावे तो कोई हानि नहीं। कहा भी है—

"एकाहारी सदा व्रती एकनारी सदा यती ॥"

भोजन के पश्चात्, आप यदि किसी तरह का शारीरिक या मानसिक श्रम नहीं चाहिये। भोजन करके तुरन्त ही सो रहना बहुत ही बुरा है। एक समय गरुड़ ने धन्वन्तरि से पूछा—"कोऽरुक् कोऽरुक् कोऽरुक्?" अर्थात् नीरोग कौन है? इसका उत्तर धन्वन्तरि ने जो दिया वह स्वास्थ्य रक्षा की कुंजी है। उन्होंने कहा—

"जीर्णे हितमितभोजी—
चंक्रमणचारी वामशायी—
विहमराम सोऽरुक् सोऽरुक् सोऽरुक् ॥"

अर्थात्—खाया हुआ भोजन पच जाने पर, हितकारी और उचित परिमाण में खानेवाला तथा सौ कदम धीरे धीरे टहलने एवं बाईं करवट थोड़ी देर लेटने वाला व्यक्ति हे गरुड़ स्वस्थ और नीरोग है। उक्त नियमों के पालन करनेवाले को स्वप्नदोष क्या कोई भी शारीरिक दोष उत्पन्न नहीं हो सकता। हमारे विचार से स्वप्नदोष के रोगी को भोजन के बीच में जल पीना ठीक नहीं। भोजन करने के पन्द्रह २ मिनिट पूर्व जल पी लेने से भोजन करते समय जल पीने की आवश्यकता नहीं होती। भोजन के आधे घण्टे बाद जल पीना चाहिये। यह आदत धीरे २ डाली जा सकती है। नित्य एक ही समय पर भोजन करना चाहिये। सुबह दस ग्यारह बजे और रात्रि को सात आठ बजे ये दोनों समय प्रायः प्रत्येक मनुष्य के लिये ठीक हैं। चलते फिरते अथवा लेटकर भोजन करना अनुचित है। भोजन करने के पहिले हाथों को, नाखूनों को, मुखको दाँतों को तथा पैरों को खूब साफ कर लेना चाहिये। खास करके नाखूनों की सफाई का खूब ध्यान रखो। भोजन के पहिले और बाद में साबुन लगाकर हाथ धो डाले जावें तो और भी अच्छा है। भोजन के बाद भी मुँह, नाक,

दाँत, जीभ, हाथ वगैरः खूब साफ करो। शौच से आकर तुरन्त ही भोजन मत करो।

(१७) जलविषयक सावधानी

पीने के योग्य जल वही समझना चाहिये जो स्वादु, शीतल, स्वच्छ, निर्गन्ध, हलका, और सूर्य प्रकाश मे रहता हो। जल यथा-वश्यक पीना चाहिये, इच्छा से अधिक या कम मत पीओ। जलको हमेशा साफ मोटे कपडे से ही छानकर पीना चाहिये। मनुजी ने कहा है कि :—

"वस्त्रपूतं जलं पिवेत"

सोडा, लेमन, वर्फ, मदिरा आदि पेय स्वास्थ्य के लिये हानिकारक है अतएव इन कृत्रिम पदार्थों से अपनी तृषा शान्त न करो। रोग विशेष मे चिकित्सक के कहने पर शर्वत, सोडा आदि पेय-पदार्थ अन्दाज से सेवन करने में कोई हानि नहीं है। पानी धीरे धीरे शान्ति पूर्वक पीना चाहिये। लेट कर या खड़े होकर पानी मत पीओ। २४ घण्टे मे चार-पांच सेर पानी काफी होता है। गर्मी के मौसिम में इससे अधिक पी सकते हैं। सोते समय और शय्या से उठते समय इच्छानुसार पानी अवश्य पी लेना चाहिये। सूर्योदय के पूर्व जल पीना चाहिये, इसे "उप -पान" कहते हैं। इस समय जलपान करना, अमृत-पान करने के तुल्य है। अकारण ही गर्म पानी नहीं पीना चाहिये। पीने के लिये ताँबे के पात्र में पानी भर कर रखना अच्छा है। रेतीली नदियों का स्वच्छ जल पाचक होता है। वर्षा ऋतु के नये जल को गर्म कर के और फिर शीतल होने पर पीना चाहिये। तीन हाँडियाँ ऊपर नीचे रखी जावें जिन मे सब से ऊपर वाली में लकड़ी का कोयला, मध्य की हाँड़ी में वालू रेती, और सब से नीचे की के मुँह पर कपडा बाँध कर, सब से ऊपरकी में पानी भर दो। नीचे की हण्डी को छोड़कर, शेष दोनों के पदे मे ऐसा छेद कर दो

जिसमें से बूँद बूँद पानी टपकता रहे। इस क्रिया द्वारा नीचे की हंडी में का छना हुआ पानी बड़ा ही गुणदायक होता है। पेशाब करके पानी कभी नहीं पीना चाहिये, बल्कि प्यास हो तो पहले पी लेना उचित है। इस प्रकार खान पान में थोड़ी सी सावधानी रखने से ही स्वप्नदोष नष्ट हो जाता है।

(१८) मुलायम बिछौना।

सभी लोग मुलायम गुदगुदे बिछौनों में सोना पसन्द करते हैं। विलासिता के कीचड़ में फँसे हुए, या अमीरी के मज़े में उन्मत्त लोग रात दिन गद्दोंपर पड़े रहने में अपनी बड़ी शान समझते हैं किन्तु यह भूल है। ऐसे लोगों को स्वप्नदोष अवश्य पकड़ लेता है। क्योंकि कोमल मृदु स्पर्श तथा गुदगुदी वस्तु कामोद्दीपक होती है। अतएव स्वप्नदोष से बचने की इच्छा रखने वाले व्यक्ति को चाहिये कि मृदु-स्पर्श बिछौनों पर कदापि न सोवें। मा-बापों को चाहिये कि अपने कुमार-अवस्था बालकों को गुदगुदे बिछौनों में न सुलावें। उन्हें बचपन ही से कठोर शय्या पर सोने की आदत डाल दें। बच्चों! जब तक तुम्हारी उम्र विवाह के योग्य न हो जावे, तब तक मुलायम शय्या पर मत सोओ। चटाई, दरी या कम्बल वगैरा ही बिछा कर सोना उत्तम है। गद्दे ऐश्वर्य के सूचक हैं, किन्तु उनका यथासमय ही उपयोग होना चाहिये।

धनवानों के बच्चे माखन ठाकुर की तरह गद्दों पर औंधे लेटे पड़े रहते हैं जिससे उनका शरीर रोगी और निर्बल हो जाता है। गद्दों पर या वैसे भी कभी औंधे (पट) नहीं सोना चाहिये। इससे तन्दुरुस्ती खराब हो जाती है—स्वप्नदोष होने लगता है। औंधे सोना सभ्यता के विरुद्ध भी है। औंधे सोने से जिंनेन्द्रिय भूमि को लग कर उत्तेजित होती है, और सहज ही में स्वप्न दोष की भूमिका बन जाती है। याद रहे, मुलायम गद्दों पर औंधे मत सोओ।

(१६) स्त्रियों का सहवास तथा कुविचार

रातदिन स्त्रियों में उनके साथ रहना बड़ा ही बुरा है । पराई औरतों के साथ रहने में, तथा वार्त्तालाप करने मे अपना गौरव मत समझो, बल्कि हीनता समझो । उनके साथा एकान्त वास कभी न करो । आप अपने को भले ही जितेन्द्रिय समझें, किन्तु परस्त्री के साथ एकान्त में कदापि न रहो । धर्मशास्त्र तो यहाँ तक कहते हैं कि जवान पुरुष "एकान्त में अपनी माता के साथ भी न रहे ।" यदि ऐसा मौका भी आ जावे कि स्त्रियों से बोलना ही पड़े तो शान्ति और लज्जा पूर्वक नीची दृष्टि करके उनसे बातचीत करनी चाहिये । चञ्चलता, हँसी, दिल्लगी, तथा घूर कर देखना, परस्त्री के साथ नहीं होना चाहिये । अपनी पत्नी को छोड़ कर अन्य स्त्रियों के लिए अपने मन मे पवित्र विचार होने चाहिये । छोटी उम्र की स्त्री को पुत्री, बराबर वाली को बहिन और बड़ी उम्र वाली को माता दृष्टि से देखना चाहिये—

"मातृवत् परदारेषु यः पश्यति स जितेन्द्रियः ।"

औरतों में रातदिन रहने वाले, या उनके विचारों में तल्लीन रहने वाले पुरुष प्रायः जनानी आदत के देखे जाते हैं । उनकी चाल ढाल, पहिनावा रहन सहन आदि सभी बातों मे नजाकत पैदा हो जाती है । यह बात मर्दों के लिए अनुचित है । लोगों को चाहिए कि स्त्रियों में न रहें और न उनके लिए पत्नीभाव ही अपने मन में लावें । बुरी दृष्टि से औरतों की तरफ कभी नहीं देखना चाहिये—यह बड़ा भारी पाप है । स्त्री जाति, इस मानवजाति की जन्मदात्री है । अपनी पत्नी के अतिरिक्त, परनारी पर कुदृष्टि करना, मानों अपनी माता को पाप दृष्टि से देखना है । अतएव स्त्री जाति के विषय मे, सर्वदा मातृभाव धारण करना चाहिये । नेत्रों को व्यर्थ ही पाप कार्य मे मत लगाओ और अपने मन को नीच विचारों से कदापि कलुषित न होने दो । वेद कहता है—

"मद्र पयेमासमिर्यत्रा॥" (ऋग्वेद)

परनारी को पापदृष्टि से देखना हमारे ऋषियों ने दृष्टि-मैथुन कहा है। अतएव इस पाप से सदा बचना चाहिए। रात दिन स्त्री विषयक विचार करने तथा साथ रहने से वीर्य बिगड़ स्थानच्युत हो जाता है और स्वप्नदोष होने लगता है।

हम पीछे कह आए हैं कि स्वप्न प्रायः मन के विचारों का ही प्रतिबिम्ब होता है। स्त्री विषयक विचार मन में होने से रात्रि को स्वप्न में भी स्त्रियाँ ही दृष्टि आती हैं, और "स्वप्न दोष" आरम्भ हो जाता है। इसलिये मन को सदा ऐसे विचारों से बचाना चाहिए। स्वप्नदोष की सबसे उत्तम औषध यही है कि स्त्रियों के लिए मन में सदा पवित्र विचार रखे जावें।

(२०) मलमूत्र के वेग को रोकना।

मल मूत्र के वेग को रोकने से वीर्य्य दूषित हो जाता है। इससे स्वप्नदोष और पीनस नामक रोग हो जाता है। अतएव जब कभी मल-मूत्र त्यागने की इच्छा हो तब तुरंत ही बिना आलस्य के आवश्यक कार्य को छोड़ कर भी त्यागना चाहिये। चौबीस घंटे में पाखाने सिर्फ दो बार ही जाना चाहिये। एक कहावत भी है—

"एक वक्त-योगी। दो वक्त-भोगी। और तीन वक्त-रोगी।"

एक बार पाखाने जाना ठीक नहीं है। भोजन के बाद पाखाना जाना बीमारी है। और जगा कर मल निकालना ठीक नहीं है। ऐसा करने से वीर्याशय निर्बल हो जाता है। पतला और बहुत सख्त मल का होना बुरा है। पाखाने में बहुत देर लगाना भी ठीक नहीं है, और न जाकर चले आना भी ठीक है। इस प्रकार सिलसिले से अधिक मल त्यागने में नहीं लगाना चाहिये। मल, शीघ्र ही साँप की तरह बाहिर निकलना उत्तम है। मलोत्सर्ग के समय गुदा से किसी प्रकार

का शब्द नहीं होना चाहिये। पेशाब करते वक्त पाखाने की हाजत होना या पादना ठीक नहीं। मल त्यागनेके बाद लिंग और गुदा को पवित्र मिट्टी लगाकर, शीतल जल से अच्छी प्रकार धोकर, मल रहित करना चाहिये। कागज, पत्थर या थोड़े से पानी से दोनों इन्द्रियों को शुद्ध करने वालों को अर्श (बवासीर) और स्वप्नदोष हो जाता है। देखिये मनुभगवान् आज्ञा देते हैं—

"एका लिंगे गुदे तिस्रस्तथैकत्र करे दश ।
उभयोः सप्त दातव्या मृदः शुद्धिमभीप्सता ॥"

अर्थात्—शौच के बाद एक बार लिंग को, तीन बार गुदा को, बाएँ हाथ को दस बार, और दोनों हाथों को सात बार मिट्टी लगा कर धोना चाहिये। देखिये कैसा अच्छा सर्व-रोग-नाशक नुस्खा है। लेकिन खेद कि, लोग इसे केवल पाखण्ड या धार्मिक ढकोसला मानने लगे हैं। लोगों को चाहिये कि इस नुस्खे को आजमा देखें।

जिस प्रकार मुसलमानों को मिट्टी के ढेले या पत्थर से इस्तजा करने की धार्मिक आज्ञा उसी प्रकार हिन्दुओं मे भी पेशाब के बाद मूत्रेन्द्रिय को जल से धोनेका विधान है। यह इतना अच्छा नियम है कि, जिन्हें स्वप्नदोष नहीं है उन्हें भविष्य में भी नहीं होगा। और जिन्हें है, उन्हें कुछ महीनों ऐसा करने से लाभ होगा। जो चाहें अनुभव करके देख सकते हैं।

(२१) लिपट कर सोना।

लिपट कर सोने से कामोत्तेजन होता है। स्त्री के साथ सोने से ही कामोत्तेजन होता हो सो नहीं, बल्कि समवयस्क पुरुषों अथवा अपने मित्रों के साथ,एक बिछौने में लिपट कर सोने से भी कामोत्तेजन होता है। अनेक युवकों अथवा समवयस्कों की मित्रता प्रायः ऐसे अनुचित कार्यों के लिये ही होती देखी गई है। लिपट कर सोने से एक

दूसरे के गुप्त अंग बिलकुल पास पास हो जाते हैं। किसी को भी अपनी जिनेन्द्रिय नहीं छूने देना चाहिये। जिनेन्द्रिय का स्पर्श की उत्तेजना देने से उसकी असली शक्ति जाती रहती है। वीर्य पतला होकर स्वप्नदोष होने लगता है। इसलिये स्त्री-मित्र अथवा पुरुष-मित्र के साथ एक बिछौने में लिपट कर कदापि नहीं सोना चाहिये।

हमने अक्सर देखा है कि, मूर्ख माता पिता अपने बच्चों को एक ही शय्या में सुलाते हैं। कभी कभी तो यहाँ तक देखा गया है कि, पिता अपने पुत्र पुत्रियों सहित तथा अपनी भार्या सहित एक ही ओढ़ने बिछौने में बड़ा ही आनन्द मनाते हुए सोते हैं! यह बात बिलकुल बुरी है—इससे स्वास्थ्य को इतना बड़ा धक्का लगता है कि उमरभर उससे आदमी नहीं सँभल सकता। अतएव ज्योंही बच्चों को कुछ समझ आ जावे त्योंही उन्हें अलग अलग सुलाने का प्रबन्ध करना चाहिये। बहुत से लोग अपने बालकों को भूत प्रेतादि के भय से अथवा प्रेम के कारण अलग सुलाना ठीक नहीं समझते किन्तु उनका यह प्रेम अथवा भय उस बच्चे के जीवन को नष्ट कर देता है। स्मरण रहे एक बिछौने में दो आदमी कभी मत सोओ! इससे सिवाय हानि के और कोई काम नहीं है।

(२२) बुरे साहित्य का मनन।

ऐसी बातों को जो देखी न जा सकें और सुनी न जा सकें, उन्हें पढ़कर जाना जा सकता है। जितना गहरा प्रभाव मन पर स्वाध्याय का होता है उतना देखने या सुनने का नहीं होता। सुसाहित्य के पढ़नेवाले सदाचारी और कुसाहित्य के प्रेमी दुराचारी देखे गये हैं। अतएव पढ़े लिखे लोगों का भूलकर भी बुरे साहित्य को नहीं पढ़ना चाहिये। खास करके शृङ्गार और विलासितापूर्ण पुस्तकों को तो कभी नहीं पढ़ना चाहिये। ये मनुष्य को कुमार्गपर ले जाती हैं। आजकल जितने भी उपन्यास बाजारों में बिकते हैं, वे प्रायः गन्दे शृङ्गार रस

पूर्ण और हमारे पाठकों को विलासिता का सबक सिखानेवाले हैं। इसके अतिरिक्त कथाओं मे रासक्रीड़ा, चीरहरण, आदि की कथाएँ भी अज्ञानी मनुष्यों पर अपना बुरा प्रभाव डालती हैं। उसकी उच्चता पर विचार करनेवाले स्वयम् भागवत के कथक्कड़ जी भी नहीं होते तो भला श्रोतागण कैसे उसके गूढ़ाशय को समझ सकते हैं? अतएव, मनुष्य को चाहिये कि, सर्वदा वेदादि धार्मिक पुस्तकों का स्वाध्याय करे। इसके अतिरिक्त वीररस-प्राधान्य, वाल्मीकि रामायण, महाभारत प्रभृति, ऐसे उत्तम इतिहास ग्रन्थ हैं जिन्हें पढ़ने से उपन्यासों से भी विशेष आनन्द आता है। महापुरुषों के जीवन चरित्र मनुष्यों को महान् बनाते हैं। उत्तम सामाजिक अथवा राजनीतिक साहित्य भी मनुष्य के चरित्र को बलवान् बनाता है। अतएव जब कभी पुस्तक पढ़नेकी इच्छा हो तब सद्ग्रथों का ही मनन करना चाहिए। आज तो हिन्दी भाषा मे भी उच्चकोटिका साहित्य मिलता है, पाठक उसे खरीद कर लाभ उठा सकते हैं।

बाजार मे कोकशास्त्रों के नाम से जो अनेक पुस्तकें बिकती हैं, वे प्रायः हमारे देश के बच्चों तथा नवयुवकों को कुमार्ग पर ले जानेवाली हैं। कई पुस्तकें जैसे "बहारऐशहिन्दी" "काश्मीरी कोकशास्त्र" इत्यादि, हिन्दी-साहित्य को कलंकित कर रही हैं। इनमे नग्न स्त्री पुरुषों के मैथुन चित्र दिये हैं, जिन्हें हमारे नवयुवक बड़े ही चाव से खरीदते और पढ़ते हैं। ऐसी पुस्तकों का एकदम बहिष्कार होना चाहिये। यद्यपि सरकार ने ऐसी पुस्तकों के प्रकाशकों पर दण्ड रखा है, फिर भी ऐसी पुस्तकें नवयुवकों के हाथों में प्रायः देखी ही जाती हैं।

जिस प्रकार पढ़ने का चित्त पर प्रभाव पड़ता है, उसी तरह दृश्य का भी चित्त पर असर होता है, यह बात हम पीछे कह आये हैं अतएव मनुष्य को चाहिये कि बुरे दृश्यों को भी न देखें। नग्न पुरुष या स्त्री को न देखें, अथवा उसके गुप्त अङ्गों को देखने की

चेष्टा न करें। पशु और पक्षी प्रायः सड़कों पर या खुले स्थानों में ही मैथुन करते हैं, अतएव यदि ये मैथुन करते देख पड़ें तो तुरन्त उस ओर से अपनी दृष्टि तथा चित्तवृत्ति हटा कर, दूसरी ओर लगा दो। घर में खूबसूरत औरतों के चित्र मत रखो। घर में लगे चित्रों को देख कर ही उसमें रहनेवाले गृहपति के स्वभाव का बुद्धिमान लोग अन्दाजा कर लेते हैं, अतएव औरतों के चित्र अपने कमरों में न रखो। बहुत से शिक्षित और गँवार आदमी अपने कमरों में स्त्री-पुरुष के मैथुन चित्र बड़े ही शौक के साथ रखते हैं, यह मूर्खता है। क्योंकि ऐसे चित्रों के देखने से मनुष्य विलासिता के गहरे गड्ढे में गिर कर अपना जीवन नष्ट कर लेता है।

कभी कभी पुत्र-पुत्रियों को अपने माता-पिता को मैथुन करते हुए देखने का मौका मिल जाता है। ऐसे लोग जो भेड़ बकरियों की भाँति एक ही घर में घुस कर सोते हैं, उनके बच्चे कभी कभी रात्रि में निद्रा भङ्ग होने पर जब अपने मा-बाप को मैथुन करते देखते हैं, तो वे दम साध कर चुपचाप उस दृश्य को देखते रहते हैं क्योंकि उनके लिये यह बात एकदम नई और अद्भुत होती है। बालकों में अनुकरण करने का एक स्वाभाविक गुण होता है। इस उम्र में वे जिज्ञासु होते हैं, उनकी बुद्धि अपरिपक्व है अतएव दूसरे दिन ही वे भी छुप छिप कर अपने माता पिता से सीखे हुए नये पाठ का अभ्यास आरम्भ कर देते हैं। इसका इतना भयंकर परिणाम होता है कि, वे उम्र भर के लिए बरबाद हो जाते हैं। इस लिए माता-पिताओं को उचित है कि वे अपने बच्चों को अलग अलग सुलावें और सपत्नीक दूसरे कमरे में सोवें। यदि अपने बच्चों को रात भर सूना छोड़ना ठीक नहीं समझते अथवा जगह की कमी हो तो कमसे कम मैथुन ऐसी जगह करें जहाँ जाग जाने पर बच्चे न देख सकें। इस प्रकार होशियारी से पाली पोसी हुई सन्तान, और सँभल कर चलने वाले बच्चे तथा नवयुवक वीर्य सम्बन्धी बीमारी के चङ्गुल में कदापि नहीं फँस सकते।

(२३) दिन को सोना और बहुत सोना।

मनुष्य को वक्त पर ही सोना चाहिये। महापुरुषों का कहना है कि, रात दिन के २४ घण्टों को चार जगह बाँटो। जिनमें से ६ घंटे ईश्वर स्मरण के ६ घंटे कमाने-खाने के ६ घंटे नींद के और ६ घंटे अन्य विविध कार्यों के, यथा खेलना, व्यायाम करना, लोगों से वार्तालाप करना इत्यादि। यदि ६ घंटे नींद मे कम पड़ते हों तो ७ या अधिक से अधिक ८ घण्टे सोना चाहिये। रात्रि ही ईश्वर ने सोने के लिये बनाई है। सिवाय निशाचरों के अथवा दुष्टों के, प्राणीमात्र रात्रि में ही सोते हैं। अन्धेरा निद्रा के लिये उपयुक्त है, अतएव रात्रि ही सोने के लिये ठीक है। जो लोग प्रकृति-नियम तोड़ कर दिन को सोते हैं या रातभर जाग कर दिन भर खर्राटे भरते हैं वे अल्पायु रोगी तथा हतवीर्य हो जाते हैं। स्वप्नदोष के रोगी को अधिक नहीं सोना चाहिये। एक गहरी नींद आनेके पश्चात् ज्यों ही निद्रा-भङ्ग हो त्यों ही तत्काल उठ बैठना चाहिये और कार्य मे लग जाना चाहिये। १० घण्टों की हलकी नींद से, दो तीन घण्टे की गहरी नींद अच्छी होती है। गहरी नींद मे स्वप्न नहीं दिखाई पड़ते, इसलिये स्वप्नदोष के रोगिया को अकृत्रिम गहरी नींद लेने का खूब ध्यान रखना चाहिये। सोने के लिये सब से उत्तम समय रात्रि के दस बजे का है। यदि दस बजे सो कर ४ बजे प्रातः काल उठा जावे तो इससे बढ़ कर कोई औषध इस मानव शरीर के लिये, त्रिलोक मे भी नहीं है। अनुभव करके देख लेना चाहिये। रात को दस बजे बाद नहीं जागना चाहिये। दिन को सूर्य की किरणें मनुष्य की निद्रा मे विघ्न डालती हैं, कफ की वृद्धि करती है, अतएव दिन मे कदापि नहीं सोना चाहिये। अनेक लोगों को भोजन करके सोने की आदत है, यह बुरी बात है। आयुर्वेद ने अत्यन्त आवश्यकता आ पड़ने पर, गर्मी के मौसिम में एक घण्टा भर दिन में सोने की आज्ञा दी है। सारांश यह कि दिन में सोना उचित नहीं है।

अधिक सोना भी बुरा है; यह बात हम जगह जगह लिख आये हैं। सूर्योदय के पश्चात् नहीं सोना चाहिये क्योंकि सूर्योदय के बाद तक सोने वाले के शरीर में कफ की वृद्धि हो जाती है। इसलिये महर्षि मनु ने इस कफ वृद्धि के निवारणार्थ व्रत बताया है। उन्होंने कहा है कि—

"यदि सोते सोते सूर्योदय हो जावे तो दिन भर भोजन न करे।"

क्या ही अच्छा नियम है! इसमें इस अपराध का दण्ड भी है और औषध भी है। अतएव जिन्हें स्वप्नदोष से बचना हो, उन्हें चाहिये कि दिन में कदापि न सोवें रात्रि में भी अधिक न सोवें और सूर्योदय के पश्चात् भी न सोवें। नीतिकारों ने भी कहा है कि—

"सूर्योदये चास्तमने शयाने विमुञ्चति श्रीर्यदिचक्रपाणिः।"

अर्थात्— 'सूर्योदय और सूर्यास्त के समय सोते रहने वाले व्यक्ति को लक्ष्मी भी त्याग देती है, फिर भले ही वह स्वयं विष्णु भगवान ही क्यों न हों।" दिन का सोना स्वास्थ्य का नाश करने के साथ ही धन सम्पत्ति का नाश भी करता है।

(२४) नाटक सिनेमा वेश्या-नृत्य आदि

कुदृश्य त्याग पर हम पीछे बहुत कुछ लिख आये हैं। वेद आज्ञा देता है कि "भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः..." अर्थात् अपने नेत्रों को सदा अच्छा दृश्य देखने वाले ही बनाओ। जो भी नाटक और सिनेमा गन्दे देखने जाते हैं, उन्हें दो हानियाँ होती हैं। एक तो यह कि निद्रा समय पर नहीं ले सकते, और दूसरे यह कि वहाँ से कुवासनाओं को अपने मन में लेकर लौटते हैं। आजकल कुछ नाटक कम्पनियों को छोड़ कर सभी हमारे देश को विलासिता का

पाठ सिखा कर, उन्हें शृंगार-रस का प्रेमी बना देती हैं। ऐक्टरों के सुसज्जित करने का कम्पनियों को अधिक ध्यान रहता है। इसके अतिरिक्त कई बड़ी बड़ी कम्पनियों में वेश्याएँ एक्ट्रेस रखी जाती हैं, जिनके चंगुल में नाटकों के कारण ही हमारे कई गाँठ के पूरे नवयुवक फँस जाते हैं। यही हाल सिनेमा का भी है। जितनी भी फिल्में हैं प्रायः सब स्त्री-पुरुषों के प्रेम से भरी होती हैं। भला ऐसे दृश्यों को देख कर जिसमें औरतों के नाज नखरे के दृश्यों तथा आलिंगन-चुम्बन का प्राधान्य हो मनुष्य अपना चरित्र कब तक ठीक रख सकता है?

इसी प्रकार, वेश्यानृत्य भी हमारे नवयुवकों के लिये बड़ा ही घातक है। देश के सेवको! आप लोग वेश्यानृत्य से बिलकुल दूर रहें। क्योंकि वे व्यभिचार की खुली दूकानें हैं। उनके पास जाकर खड़े होना, बड़े ही शर्म की बात है। यदि गायन पर ही मुग्ध हैं तो, पुरुष गायकों के गायन सुनो। उनके निंद्यकार्य के सामने, गायन की इज्जत कर के वेश्याओं की प्रतिष्ठा मत बढ़ाओ। क़साई की दुकान पर मांस के पास ही यदि मिठाई बिकती हो तो मांस न खाने वाला व्यक्ति, उस मिठाई को खरीदने के लिए कदापि तैयार नहीं होगा। हाँ, मांसभोजी अवश्य वहाँ से लेगा। यही बात वेश्या के विषय में समझिये।

शृंगार-रस प्रधान नाटक, और सिनेमा तथा वेश्यानृत्य आदि देखना स्वप्नदोष को आमन्त्रित करना है।

(२५) कुवार्त्तालाप।

आज कल नवयुवकों में यह बात देखी जाती है कि, जहाँ कहीं दो समवयस्क फुरसत में बैठे कि, परस्त्री विषयक चर्चा आरम्भ हो जाती है, ऐसे लोग महानीच हैं—इनका मन इतना कलुषित होता है कि, जिसकी कुछ हद नहीं। ये लोग भले से भले घर की बहिन बेटियों का सतीत्व नष्ट करने का विचार लाकर रातदिन मानसिक पाप किया करते हैं। इस पाप का इन्हें फल भी शीघ्र ही मिल जाता है। इन

लोगों की दृष्टि, रास्ते चलने वाली बहिन बेटियों पर लगी रहती है। इन लोगों का आत्मा भी निर्बल और कलुषित हो जाता है। आत्मा की निर्बलता ही सब रोगों का मूल कारण है अतएव परस्त्री के लिये सदा पवित्र विचारों को ही मन में धारण करो और उनके संबंध में कभी गन्दे विचार या अपवित्र भावनाएँ दिल में न आने दो।

(२६) एकान्त में गुप्तेन्द्रिय का स्पर्श।

कामी पुरुष प्रायः एकान्त में अपनी लिंगेन्द्रिय को बारम्बार स्पर्श करके उत्तेजित करते हैं, और वीर्यपात नहीं किया तो उसको इस दशा तक तो अवश्य ही पहुँचा देते हैं कि यदि थोड़ी देर और घर्षण किया जावे तो वीर्य भी निकल जावे। ऐसा भी प्रायः हमेशा एकान्त में तथा बिछौनों में मिलता है। ऐसा करना स्वप्नदोष को निमन्त्रण देना है।

जब कभी कामोत्तेजन हो जाता है तो लोग एकान्त स्थान पाकर उसे रगड़ने अथवा मसलने लगते हैं। इन्द्रिय के साथ इस प्रकार की जबरदस्ती ठीक नहीं। यदि कामोत्तेजन हो तो उसके निवारणार्थ उसे मत छुओ बल्कि अपनी विचारधारा को किसी दूसरी तरफ मोड़ दो या कोई अच्छी पुस्तक पढ़ने लग जाओ कामोत्तेजन स्वयं मिट जावेगा। यदि दौड़ने का सुविधा हो तो कम से कम आध मील की दौड़ाई करो। फौरन ही कामविकार काफूर हो जावेगा। स्मरण रहे, लिंगेन्द्रिय का किसी भी दशा में मर्दन या घर्षण मत करो।

(२७) मानसिक कुवासनाएँ।

मनुष्य विश्वासरूप है। जैसा जिसका विश्वास होता है वह वैसा ही बन जाता है। ईश्वर पर, अपनी आत्म शक्ति पर, धर्म और अपने पुरुषार्थ पर विश्वास रखना चाहिये। इससे बहुत बड़ा लाभ होता है। स्मरण रहे, विश्वास हो किन्तु अन्ध विश्वास कदापि न हो।

अपने मन में सदा अच्छी वासनाएँ-विचार रखो। वेद कहता है:-

"तन्मे मनः शिव-संकल्पमस्तु।"

शिव-संकल्प अर्थात् शुभ विचार ही मन मे रखने चाहियें। सुविचारी मनुष्य की कभी अवनति नहीं होती। हीन विचारों से हीनावस्था हो जाती है। यह बात स्वयं सिद्ध है कि जैसे विचार मनुष्य भी वैसा ही बन जावेगा। कहा भी है:—

"मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः।"

वीयरक्षा के लिये, मानसिक विचारों का पवित्र होना जितना आवश्यक है, उतना अन्य बातों का नहीं। अर्थात् उच्च ध्येय, उच्च आदर्श, पवित्र भाव और धार्मिकता की जागृति सदा मन मे होनी चाहिये। मन यदि पवित्र विचारवाला हुआ तो वीर्यरक्षा सहज बात है—और यदि मन में हीन विचार हुए तो वीर्यरक्षा अत्यन्त कठिन है। स्वप्नदोप के रोगियों को इससे बढ़ कर कोई दवा नहीं कि "वे अपने विचारों को सदा पवित्र रखें।"

अपने विचारों पर अधिकार रखिये और मन में दृढ़ आत्म-विश्वास रखिये कि:—

"मैं उच्च विचारों को धारण करता हुआ अवश्य स्वप्न-दोष को नष्ट करूँगा।"

एक दिन आप देखेंगे कि, धीरे धीरे स्वप्नदोप की बीमारी बिल-कुल हट गई है। सदा उच्च विचारों के ग्रन्थों से, उच्च पुरुषों की संगति से, और ईश्वर स्मरण से, मनुष्य के विचार उच्च हो जाते हैं, और मन से कुवासनाएँ एकदम दूर हो जाती हैं।

(२८) हिजड़ों के साथ हँसी-दिल्लगी।

पुंसत्वहीन बिना दाढ़ी मूँछों वाले मर्द को नपुंसक कहते हैं। प्रायः नपुसक लोग ही दाढ़ी मूँछ मुँड़ा कर रखते हैं, और सिर पर

औरतों की तरह जूड़ा बांधते हैं। आधा वेष उनका मर्दाना और आधा जनाना होता है। इनके हाव भाव और वृत्ति वेश्या के समान होती हैं। छोटे छोटे गाँवों में लोग इन्हें नचाते हैं, और इनका गाना सुनते हैं। इन हिजड़ों ने भी हमारे कई नवयुवकों को बरबाद कर दिया है। ऐसे लोगों के साथ हँसी मजाक, वार्तालाप या संग साथ नहीं करना चाहिये। महाभारत के प्रसिद्ध योद्धा भीष्म पितामह अपने बल विक्रम में इतने प्रसिद्ध क्यों थे ? इसका एकमात्र कारण, उनकी वीर्य रक्षा था। साथ ही उनकी इतनी दृढ़ प्रतिज्ञा थी कि "स्त्रीपर, स्त्री-नाम धारी पर, नपुंसक पर, अथवा ऐसे पुरुष पर जो पूर्व जन्म में स्त्री रहा हो—हथियार नहीं उठाते थे यही नहीं बल्कि उन्हें देख कर मुख फेर लेते थे।" इसी कारण उस महापुरुष ने १८० वर्ष की दीर्घायु प्राप्त की। और फिर भी अन्त में अपनी इच्छापूर्वक * शिखण्डी द्वारा मरे, यह बात महाभारत के पाठकों को भली प्रकार विदित है। इस से स्पष्ट है कि वीर्यरक्षा तथा पूर्णायु चाहने वाले व्यक्ति को ऐसे लोगों का मुह भी नहीं देखना चाहिये। इनसे एकान्त में बातचीत करना बिल्कुल बुरा है। इसी प्रकार चित्त में बुरे विचार को लेकर किशोर वयस्क बच्चों के साथ कभी एकान्त वास न करो। यदि भ्रातृ-विचार अथवा शुभ विचार मन में हों तो एकान्त वास में कोई हानि नहीं। बच्चों के शरीर को अकारण ही स्पर्श मत करो। उनके गालों का स्पर्श मत करो। बालकों के मुलायम गाल पर सौन्दर्य कान्ति और तेज स्वाभाविक होता है—लोग उनके सौन्दर्य पर मोहित हो जाते हैं। खूबसूरत और साफ सुथरे बच्चों को देख कर चित्त को आनन्द होना स्वाभाविक है, किन्तु उनके प्रति मन में बुरे भावों का उदय बड़ी बुरी बात है।

सारांश यह कि नपुंसकों और लड़कों के साथ एकान्त में गन्दी चर्चा नहीं करनी चाहिये और न इनसे हँसी मजाक या फोश बातें

---

* शिखण्डी पूर्वजन्म में स्त्री रहा था।

ही करनी चाहिए। रात दिन ऐसी सङ्गति मे रह कर मनुष्य स्वप्नदोष तक ही नहीं पहुँचता, बल्कि वह स्वयम् भी नपुंसक हो जाता है।

(२६) चिन्ता, भय, शोक इत्यादि ।

हम पीछे लिख आये है कि मन ही इस मानव शरीर के सुख-दुःख का कारण है, जिनका मन निर्बल है वे स्वय भी निर्बल हैं, और जिनका मन बलवान है उनका आत्मा भी शक्ति सम्पन्न है। वे उन्नात्मा, महात्मा हैं।

शारीरिक समस्त अवयवो को सचालन करनेवाली इन्द्रियॉ हैं, और इन सब इन्द्रियों का अधिपति "मन" है। अर्थात् शरीर को सुन्दर बलवान और नीरोग रखने के लिये मन को प्रसन्न और तुष्ट रखना चाहिये। इसके विपरीत जिनका मन चिन्ता, शोक, भय आदि से व्याकुल रहता है वे कदापि स्वस्थ और दीर्घायु नहीं हो सकते। चिन्ता, भय और शोक इस मानव शरीर के परम शत्रु हैं। मनुष्य को उचित है कि, इन शत्रुओं से अपनी रक्षा करे, और अपने मन को सदा आनन्दित रखे। सुख और दुःख कोई वस्तु नहीं है। ये तो मन की वृत्ति पर अवलम्बित हैं। देखा जाता है, एक मनुष्य यथेच्छ आवश्यकीय उपभोग सामग्रियों के होते हुए भी अपने को दुःखी मानता है, तो दूसरा निर्जन बन में वृक्ष की छाया के नीचे कद-मूल भोजन न मिलने पर भी परमानन्द का अनुभव कर रहा है। तात्पर्य यह कि दुःख और सुख केवल मनोवृत्ति मात्र है। चाहे सुखी रहिये चाहे दुःखी रहिये, यह आप के हाथ मे है। दुःखों की परवाह न कीजिये और सुख में फूल न जाइये, इसी अभ्यास से आप अपने मन पर अपना पूर्ण अधिकार जमा सकते हैं। चिन्ता शोक भय आदि शरीर को रोगी ही नहीं बना देते, बल्कि शरीर को नष्ट कर देते हैं। किसी कवि ने कहा है:—

"चिताचिन्ताद्वयोर्मध्ये बिन्दुमात्र विशेषकम् ।
चिता दहति निर्जीवं चिन्ता दहति जीवितम् ॥"

यह चिन्ता काष्ठ की चिता से भी भयङ्कर है। क्योंकि चिता तो मृत देह को भस्म करती है किन्तु यह चिन्ता जीवित शरीर को ही जला देती है! चिन्ता का प्रभाव वीर्य पर बहुत ही शीघ्र होता है, इसलिये चिन्ता से हमेशा दूर रहना चाहिये! चिन्ता में निमग्न रहने वाले मनुष्य का वीर्य अवश्य दूषित हो जाता है अतएव प्रसन्न रहने का प्रयत्न करो और चिन्ता शोक, दुःख भय क्रोध आदि से बचो।

(३०) ऐशो-आराम।

वीर्यरक्षा के लिये जिस तरह मन की पवित्रता आवश्यक है, उसी तरह शरीर और वाणी की भी पवित्रता होनी अपेक्षित है। कायिक, वाचिक और मानसिक त्रिविध पवित्रता से ही वीर्यरक्षा हो सकती है। मनुष्य को सदैव अपना रहन-सहन सीधा सादा रखना चाहिये। खाने पीने में कपड़े लत्ते में और ऐशो आराम में जिनकी प्रवृत्ति होती है, वे स्वप्नदोष से कदापि नहीं बच सकते। रहन सहन का चित्त पर बड़ा गहरा प्रभाव होता है, या यों भी कहा जा सकता है कि जैसा चित्त होता है वैसी ही रहन सहन होती है। अपने शरीर का सुसज्जित रखनेका रात दिन ध्यान रखना इत्र फुलेल अञ्जन मञ्जन, महीन भड़कदार मुलायम कपड़ों से शरीर को सुसज्जित करना चरित्र-भ्रष्टता के चिह्न है। मृदुस्पर्श बारीक और बहुमूल्य वस्त्र जैसे रेशम मखमल प्रभृति कामोद्दीपक हैं, अतएव हमेशा मोटे गाढ़े सीधे सादे स्वच्छ पवित्र और सभ्योचित वस्त्रों को ही धारण करना चाहिये। यदि अपने हाथ के सूत द्वारा बुने हुए वस्त्र हों तो और भी उत्तम हो। इसी प्रकार

भोजन पौष्टिक, पवित्र और स्वच्छ हो, लेकिन चटपटा न हो। सबसे अच्छा भोजन दाल, रोटी चावल, शाक, दूध दही, शक्कर घृत वगैरः है। जिनके मन, वचन, और कर्म मे सादगी है वे ही महापुरुष हैं। सीधा सादा जीवन विताना और ऐशोआराम से दूर रहना ही स्वप्न-दोष से बचने का सुगम उपाय है।

(३१) जागरण।

उस परमात्मा ने काम करने को दिन, और आराम करने के लिये रात बनाई है। जो लोग रात्रि मे समय पर नहीं सोते उन्हें स्वप्नदोष धर दबाता है। नाटक, सिनेमा, खेल-तमाशे वगैरः मे कई दिनों तक लोग रातरात भर जागते रहते हैं, यह बहुत ही बुरा है। कई लोग रात को बहुत रात गये तक ताश, शतरञ्ज, चौपड़, वगैरः खेलते रहते हैं—यह भी अनुचित है। लिखने पढ़ने वाले यदि दावा करें कि "हम लोग यदि शान्त रजनी में अपना मस्तिष्क कार्य करें, तो अनुचित नहीं" लेकिन यह भी अनुचित है। दस बजे बाद तो मनुष्य को जागना सदा दुःखदायी है। इसलिये मनुष्य को चाहिए कि हजारों आवश्यक कार्यों को त्याग कर, नित्य समय पर सो जाया करें। और नित्य ठीक समय पर उठ जाया करें। सारांश यह कि जिन्हें वीर्यरक्षा करनी हो उन्हें जागरण हानिप्रद है।

(३२) उपवास।

अजीर्ण से शरीर मे अनेक विकार उत्पन्न होते हैं। अन्य विकार तो धीरे धीरे होते रहते हैं, किन्तु सबसे पहिले धातु विकार शुरू हो जाता है। अजीर्ण नाश करने का सर्वोत्तम उपाय उपवास है। जो लोग अजीर्ण होने पर हिंगाष्टक, सुलेमानीनमक, लवणभास्कर, सिरका आदि पीते या फाँकते हैं, वे बडी ही भूल करते हैं। अजीर्ण के लिये विना पैसे कौड़ी की, विना दौड़ भाग की दवा एकमात्र "उपवास" है।

औषधि से तो हानि भी हो जाती है—वीर्यदोष उत्पन्न हो सकते हैं, किन्तु विधिवत् उपवास से सिवाय लाभ के हानि तो हो ही नहीं सकती। उपवास से केवल शरीर ही पवित्र होता है इतना ही नहीं, बल्कि मन भी पवित्र हो जाता है। उपवास में कुट्टू, राजगिरा, सिंघाड़ आदि के बने पदार्थ कलाकन्द, पेड़े बर्फी आदि विविध वस्तुओं को पेट में भर लेने का नाम उपवास नहीं है। ऐसे उपवास से सिवाय नुकसान के कभी फायदा नहीं हो सकता। उपवास का मतलब यह है कि कुछ भी न खाया जाये। आवश्यकता पड़ने पर, शुद्ध निर्मल जल यथावश्यक पीना चाहिये। उसमें यदि थोड़ा सा निम्बू का रस निचोड़ लिया जावे तो और भी उत्तम हो। उपवास में शक्कर का पानी पीने से हानि होती है। उचित रीति से उपवास करने पर स्वप्नदोष रुक जाता है। यदि अन्न खाये बिना रहना असम्भव हो तो फलों का रस थोड़ा सा लेना चाहिए। अंगूर मौसम्बी, नारङ्गी आदि रस युक्त फलों का सेवन किया जा सकता है। कुपथ्य को मिटा कर, विधिपूर्वक उपवास करने से स्वप्नदोष रुक जाता है। स्वप्नदोष के लिए उपवास जितना लाभप्रद है, उतना और कोई उपाय नहीं है। उपवास के पश्चात् रसदार फल दूध, दलिया, खिचड़ी पूड़ी इत्यादि अल्प मात्रा में खाना चाहिये।

(३३) ठलुए रहना।

ठलुए से यह मतलब नहीं कि बेरोजगार बने रहना। ठलुए रहना, अर्थात् निकम्मे बैठे रहना। मनुष्य को चाहिये कि सबेरे शय्या त्यागने से शय्या पर जाने तक, कुछ न कुछ काम अवश्य करता रहे। प्रायः लोग शिकायत करते हैं कि, "जब कुछ काम ही नहीं होता है तो ठाले बैठना ही पड़ता है" किन्तु यह केवल बहाना है। काम बहुत है, और करने वाले चाहिए। यदि कुछ भी काम न हो तो

सद्ग्रंथों का स्वाध्याय करना चाहिये । नहीं तो एक कवि ने ठाले बैठने वालों के लिए ही इस पद्य की रचना की है:—

"ठाला न बैठ कुछ किया कर
काम न हो तो पाजामा उधेड़ कर सिया कर ।"

कैसा अच्छा काम है ? अब तो लोगों को "काम नहीं है" ऐसा कहने का मोका ही नहीं रह जाता ! जो लोग ठाले होते हैं उन्हें पचीसों उत्पात सूझ पड़ते हैं, और जो कार्य मे सलग्न रहते हैं उन्हें कुछ भी नहीं सूझता । बड़े घरों के मनुष्य इस ठाले रहने के कारण ही, कुमार्ग-गामी हो जाते हैं । ठाले रहने वाले नवयुवकों को कामोत्तेजन विशेष होता है, जो बहुत ही बुरी बात है । एक जवान मनुष्य को ठाले रहने पर, मन में सदा ऐसे ही विचार उठा करते हैं, जो कामेत्तेजक हों अथवा—कुमार्ग पर ले जाने वाले हों । ठाले रहने पर जिनके हृदय में सद्विचारों का उदय होता हो, ऐसे मनुष्य प्रति सहस्र २।४ ही होते हैं, वे धन्य हैं । सारांश यह कि जिन्हें वीर्य-विकार—स्वप्न-दोष से बचना हो वे कभी भी ठाले न रहें—किसी न किसी कार्य मे लगे रहा करें ।

(३४) अशुद्ध वायु में निवास ।

अन्न और जल से विशेष आवश्यक यदि कोई चीज है तो प्राण धारी के लिये वायु है ? अन्न-जल बिना मनुष्य दिनों तक जीवित रह सकता है, किन्तु वायु बिना तो चंद मिनिट भी प्राण धारण नहीं कर सकता । मनुष्य प्रायः अन्न जल की शुद्धि की तरफ जितना ध्यान देते देखे गये हैं, उतना वायु की तरफ नहीं । वायु अमृत है । शुद्ध-वायु (१) शुद्ध-जल (२) शुद्ध-भूमि (३) शुद्ध-प्रकाश (४) और (५) शुद्ध-अन्न ये "पचामृत" कहलाते हैं । जो नित्य इन पंचामृतों का पान करता है, वही आरोग्य और दीर्घायु पाता है । आजकल बहुत खोजने पर, शुद्ध वायु जगल में ही प्राप्त हो सकता है । हमारे पूर्वजों ने

जंगलों में रह कर ही इंद्रिय संयम द्वारा बड़ी बड़ी वर्षे पाई थीं। बस्तियों में तो शुद्ध वायु का पता नहीं। बड़े नगरों की दशा तो और भी खराब है। शहर के भीतर गटरें तो बदबू देती ही हैं, लेकिन बाहिर निकलने पर भी दूर तक विष्ठा, मूत्र गोबर कचरा-कूड़ा बसता हुआ या सड़ता हुआ मिलता है। जितनी कम आबादी का गाँव होगा उतनी ही वहाँ की हवा शुद्ध होगी। बशर्ते कि गाँव के पास ही कूड़ा कचरा खाद गोबर इत्यादि न फेंका जाता हो और वहीं लोग पाखाने न जाते हों।

जो लोग बिजली के पंखों में शुद्ध वायु माने बैठे हैं वे गलती पर हैं। कृत्रिम वायु स्वास्थ्य-वर्द्धक कदापि हो ही नहीं सकता। रेलों में भी शुद्ध वायु प्राप्त नहीं होता। यद्यपि वे जंगल में से बड़ी तेजी के साथ गुजरती हैं, तथापि अमस्वित एंजिन का धुआँ हरेक गाड़ी के भीतर का पाखाना, अपनी दुर्गन्ध से यात्री को शुद्ध वायु से वंचित रखता है। यदि एंजिन का धुआँ और पाखाने आदि की दुर्गन्ध न भी हो तो, रेल के यात्रियों के शरीर और मुँह की बदबू और तमाखू पीने की धुआँ से सारा डिब्बा खचाखच भरा रहता है। कई भलेमानस तो कपड़ा ओढ़ कर तमाखू पीते हैं, जिससे दम घुटने लगता है।

शुद्ध वायु के प्रेमियों को जलाशयों के किनारे गाँव से दूर जंगल में पर्वतों पर अधिक भ्रमण करना चाहिये। घर को साफ रखना चाहिये और बिना रोक-टोक के वायु इधर से उधर निकल जावे ऐसी खिड़कियाँ झरोखे गवाक्ष व्याक्षमाम वगैरः रहने चाहिये। मनुष्य को नित्य ७-८ मील तक, शुद्ध वायु सेवन के लिये जाना चाहिये। नई रोशनी के लोग संध्या समय वायु सेवन के नाम पर थोड़ी दूर गाँव से बाहिर तो जाते हैं, लेकिन सूर्योदय के पूर्व या सूर्योदय के समय वायु सेवन के लिये दूर तक जंगल में जावें तो अत्यन्त शुद्ध वायु प्राप्त होता है। प्रातःकाल वायु सेवन करने वालों को प्रचुर प्राणवायु प्राप्त होता है, जिससे शरीर में ब्रह्मचर्य आरोग्य

आनन्द, पवित्रता, प्रसन्नता, वल, तेज, सामर्थ्य, कांति, आदि की उत्तरोत्तर वृद्धि होती है। स्वप्नदोष होने का मौका ही नहीं आता। इसके विरुद्ध जो दूषित वायु मे अपना जीवन पूर्ण करते हैं उनके स्वास्थ्य को स्वयं धन्वन्तरि भी नहीं सुधार सकते।

(३५) हमेशा छाया में रहना।

स्वास्थ्य के लिये सूर्य का प्रकाश-(धूप) बड़ा ही आवश्यक है। जो मनुष्य घूप मे नहीं रहता अथवा जिस घर मे धूप नहीं जाती, वह घर सदा दूषित ही रहता है। सूर्य प्रकाश मनुष्य को आरोग्यप्रद है। जो मनुष्य धूप का, उचित रीति से व्यवहार करते हैं, वे दीर्घायु पाते हैं। ऐसे लोग, जो धूप मे रहना बुरा समझते हैं, वे रोगी हो जाते हैं। वहुत से लोग ऐसे भी हैं, जिनका शरीर सूर्य प्रकाश मे वहुत ही कम रहता है। कुछ लोग तो अपनी नजाकत को इतने हद दर्जे तक पहुँचा देते हैं कि शीत काल मे भी छाता लगाये विना घर से चार कदम भी बाहर नहीं निकलते। कुछ लोग इसे अमीरी समझते हैं, लेकिन ऐसे वड़प्पन मे उनकी उम्र छोटेपन को प्राप्त हो जाती है। प्रकृति ने जो कुछ भी शीत घाम वगरः वनाया है, वह हम लोगों के लिए हानिप्रद कदापि नहीं हो सकता। भारत का धूप, भारतवासियों के लिये नाशकारी कदापि नहीं हो सकता। हमारा शरीर, हमारे देश का जल वायु सहने योग्य ही प्रकृति ने निर्माण किया है। अतएव धूप से कदापि नहीं डरना चाहिये। धूप स्वास्थ्य, दीर्घायु सुन्दरता,वुद्धि,वल,तेज आदि देने वाला है। वेद म लिखा है—

"यदि जाग्रद यदि स्वप्ने एनांसि चकृमा वयम्।
सूर्यो मा तस्मादेनसा विश्वस्मान्मुंच त्वंहसः ॥"

अर्थात्—स्वप्न और जगृति के सब दोष को सूर्य (धूप) हटाता है। सूर्य प्रकाश मे रहने वाला व्यक्ति सहिष्णु हो जाता है। अधिकतर

छाया में रहने वाला रोगी, निर्बल, अल्पायु, बुद्धि-बल-शून्य और असहिष्णु हो जाता है। किसी पौधे को रात दिन, एक सायादार जगह में रख कर देखिये उसकी कैसी बुरी दशा हो जाती है। यही हालत रात दिन छाया में रहने वाले व्यक्ति की भी होती है। ऐसा मनुष्य वीर्यरक्षा कदापि नहीं कर सकता और अनेक वीर्य सम्बन्धी रोग जैसे स्वप्नदोष, शीघ्रपतन, प्रमेह आदि उत्पन्न हो जाते हैं।

(३६) रात दिन बैठना या अधिक मस्तिष्क सम्बन्धी कार्यों को करना।

जो लोग नहाने धोने शौच जाने और भोजन करने के लिये ही उठ कर थोड़ी दूर चलने के बाद एक ही जगह घंटों तक बैठे रहते हैं उन्हें स्वप्नदोष हो जाता है। दुकान दार और दफ्तरों के क्लर्कों को घंटों एक ही जगह बैठे रहना पड़ता है। दुकान या दफ्तर से चलकर घर तक आना और घर से दफ्तर चले जाना ही जिनके लिए काफी है—उनका वीर्य कदापि शुद्ध नहीं रह सकता। जो मनुष्य थोड़ा बहुत शारीरिक श्रम नहीं करता उसका स्वास्थ्य कैसे ठीक रह सकता है। कुर्सी पर बैठ कर काम करना तो फिर भी ठीक है, किन्तु भूमि पर अधिक समय तक एक ही आसन से नित्य घंटों बैठना बड़ा ही हानिप्रद है।

जो लोग दिमागी कार्य करते हैं,—लिखा-पढ़ी का या सोचा विचारी का काम करते हैं, उनकी शारीरिक शक्ति कम हो जाती है। अध्यापकों वकीलों लेखकों सम्पादकों को जब आप देखेंगे तो उन्हें अत्यन्त ही निर्बल पावेंगे। कारण यही है कि, ये लोग मस्तिष्क का कार्य करते हैं, अतएव शारीरिक बल कम हो जाता है। मस्तिष्क सम्बन्धी कार्य करने वाले मनुष्यों को, दूध दही, मक्खन और फलों का अधिक सेवन करना चाहिये। साथ ही थोड़ा बहुत व्यायाम भी अव

श्य कर लेना चाहिये। शाररिक अधिक परिश्रम करने से लोग निर्बल हो जाते हैं, किन्तु इतने नहीं जितने कि मस्तिष्क कार्य के करने वाले निर्बलता के पाश मे फँस जाते हैं। दीमागी कार्य करने वाले स्वप्नदोष प्रमेह आदि रोग तक ही नहीं रह जाते, वल्कि नपुमकता तक पहुँच जाते हैं । अतएव अधिक मस्तिष्क सम्बन्धी कार्य कभी नहीं करना चाहिये। जब दीमाग थका हुआ ज्ञान पड़े तभी उसे फौरन आराम दे देना चाहिये।

(३७) शारीरिक अस्वच्छता।

यह हमेशा स्मरण रखो कि, जहाँ स्वच्छता है वहीं तन्दुरुस्ती भी है। सफ़ाई और स्वास्थ्य का बहुत ही निकट सम्बन्ध है। स्वच्छता से मतलब यहाँ पर आन्तरिक और वाह्य दोनों प्रकार की सफाई है। मन की पवित्रता के विषय मे हम जहाँ तहाँ इसो पुस्तक में लिख आये हैं, अब हम वाह्य अर्थात् वाहिरी-शारीरिक स्वच्छता पर ही यहाँ लिखेंगे। शरीर के चर्म को तथा रोम-कूपों को जल से धो कर खूब साफ रखना चाहिये। बगलें, रानें, नासिका, मुख, आँख, कान, जिह्वा, दाँत, शिश्न आदि शारीरिक अङ्गों को भी धो पोंछ कर सदा पवित्र रखने चाहियें। अनेक लोगों के गले मे, छाती पर, वालों में खूब ही मैल होता है, उन्हें ध्यान रख कर अपने शरीर को शुद्ध रखना चाहिये। किसी इन्द्रिय के मलोत्सर्ग पर उसे जल से ही धोना चाहिये। जल ही एक ऐसी उत्तम वस्तु है, जो शारीरिक अस्वच्छता को हटाता है। हाथों को सदा साफ रखो। नाखूनों को मत बढ़ने दो। नंगे पैरों, मैले कुचैले स्थानों मे मत घूमो। वस्त्र हमेशा साफ सुथरे ही पहनो। प्रायः लोग ऊपर पहनने का वस्त्र, अच्छा धुला हुआ पहनते हैं, किन्तु वह कपड़ा जो रात दिन शरीर को छूता रहता है, इतना गन्दा और मैला होता है कि, जिसकी कोई सीमा नहीं। ऐसे आदमी कभी नीरोग नहीं रह सकते। इस बात का सदा ख्याल

रखा कि जो वस्त्र शरीर को ढका रहता है वह अत्यन्त साफ और पवित्र हो। उस वस्त्र को वर्षा और शीत में दूसरे तीसरे दिन तथा गर्मी में नित्य धोते रहना चाहिये। कभी कभी खौलते पानी में भी डाल कर उसे धो डालना चाहिये। भोजनशाला पवित्र हो, भोजन बनाने वाला पवित्र और स्वच्छ वस्त्रधारी हो। भोजन पकाने तथा भोजन करने के पात्र मँजे हुए और जल से धुले हुए साफ हों तथा भोजन सामग्रियाँ भी शुद्ध हों। घर आँगन बैठक शयनागार, बिल्कुल साफ सुथरे हों उनमें फालतू चीजों की भरमार न हो। घर के आसपास लोग पाखाना पेशाब न करते हों कचरा कूड़ा और गोबर आदि न डालते हों। पाखाना (टट्टी) बिल्कुल साफ हो। घर में स्वच्छ हवा और सूर्य प्रकाश एवं आता हो—आदि बातों का खूब ध्यान रखना चाहिये। मनुष्य जितना अधिक स्वच्छता का ध्यान रखेगा वह उतना ही नीरोग रहेगा। अतएव जिन्हें यह इच्छा हो कि हमें किसी भी तरह का कोई रोग कभी न हो उन्हें चाहिये कि स्वच्छता की ओर विशेष ध्यान दें।

(३८) व्यायाम न करना।

जो लोग शारीरिक श्रम नहीं करते वे वीर्यरक्षा कदापि नहीं कर सकते। परिश्रमी मनुष्य सदा दीर्घायु और आरोग्य पाते हैं, किन्तु साथ ही यह बात भी है कि, अधिक परिश्रमी हानि भी उठाते हैं। व्यायाम करने से शरीर में पसीना आता है, जिससे शरीर की सब मल दूर हो जाते हैं, और रक्त शुद्ध होता है। जब शरीर में रक्त का उचित रीति से संचार होता है तब शरीर पुष्ट और अवयव सुडौल बन जाते हैं। जो व्यायाम उचित रीति से किया जाता है वही लाभप्रद होता है। अनुचित रीति से किया हुआ व्यायाम नुकसान करता है। खेलना, तैरना दण्ड बैठक, मुग्दर भाँजना, डंबेल घुमाना दौड़ना आसन करना इत्यादि कार्य व्यायाम हैं।

व्यायाम का प्रभाव गुर्दों पर अच्छा पड़ता है। पसीना निकल जाता है। पेशाव और पाखाना भी उचित परिमाण में होता है। व्यायाम से पाचनशक्ति बढ़ जाती है, जो अन्न जल को अच्छी तरह पचा देती है। फेफड़े शुद्ध हो जाते हैं। उचित व्यायाम से शरीर के सभी दूषित पदार्थ निकल जाते हैं। व्यायाम से भीतरी अगों में स्थान-स्थान पर जमा हुआ विजातीय द्रव्य, निकलने के लिये आँतों गुर्दों, फेफड़ों तथा त्वचा।तक पहुँच जाता ह।

यह विषय इतना अगाध है कि, इस पर अनेक स्वतन्त्र ग्रथ तैयार किये जा सकते हैं। परन्तु हम यहाँ मक्षेप में इस विषय पर थोड़ा प्रकाश डालना उचित समझते हैं, क्योंकि वीर्यरक्षा का सारा दारोमदार इसी पर है। हमारे देश में मुख्य व्यायाम दण्ड, वैठक, मुद्गर, कुश्ती, आदि माने जाते हैं। अतएव हम इन्हीं के विषय मे लिखेंगे। सोलह वर्ष से कम उम्र के वच्चों को दण्ड वैठक का व्यायाम हानिप्रद होता है। उन्हें दौडना, खेलना इत्यादि ही हितकर है।

दण्ड—लोग जल्दी जल्दी, और एक साँस में एकदम वहुत से दण्ड. लगा जाते हैं, किन्तु ऐसा करना ठीक नहीं है। दण्ड, वहुत धीरे धीरे और शरीर के सव अङ्गों को वहुत साध साध कर प्राणायाम पूर्वक तथा शांति पूर्वक करने चाहियें। इस प्रकार किये हुए पॉच दण्ड, जल्दी जल्दी किये हुए पचास दण्डों से कहीं अधिक लाभदायक हैं।

वैठक—यह कई प्रकार की होती है। जैसे सादी वैठक, कूद वैठक, हनुमान वैठक। कूद वैठक उत्तम है। इसमें भी शीघ्रता नहीं करनी चाहिये। यह व्यायाम पैरों के लिए लाभप्रद है।

मुद्गर—इन्हें घुमाने की अनेक विधियाँ हैं, जो इसके जानकार द्वारा सीखी जा सकती हैं। मुद्गर के व्यायाम से भुजदण्ड और कलाई मजवूत होती हैं।

डंवेल—डवेल के व्यायाम की कई छपी हुई पुस्तकें मिलती हैं।

हमारे ख्याल से, यह दण्ड बैठक और मुग्दर से श्रेष्ठ व्यायाम नहीं है। इनसे भी छाती, भुजायें और कलाई पुष्ट होती हैं।

इनके अतिरिक्त दौड़ना कूदना—फाँदना घोड़े की सवारी, फुटबाल का खेलना, जिमनास्टिक पटा बनेटी, वजन उठाना आदि विविध कसरतें हैं। मानसिक व्यायाम के लिये, पुस्तकावलोकन, समाचार पत्रों का बाँचना लिखना और तरह तरह की बातों पर विचार करना चाहिये। कसरत वीर्यरक्षा के लिये परमावश्यक है। कसरत करने से शरीर में वीर्य पच जाता है। जिसे वीर्यरक्षा करना हो वह कसरत अवश्य करे। कसरत के समय साँस नाक से ही गहरी लेना तथा छोड़ना हितकर है। नित्य दो बार नहीं तो एक बार अवश्य ही व्यायाम करना चाहिये। बगल या छाती पर पसीने के बूँदें झलक आवें या मुँह सूखने लग जावे तब व्यायाम बन्द कर देना चाहिये। अपनी शक्ति के अनुकूल किया हुआ व्यायाम लाभकारी होता है। पसीना आते ही, उसे कपड़े से पोंछना चाहिये। भूखे प्यासे भरे पेट तथा बीमारी की दशा में व्यायाम नहीं करना चाहिये। व्यायाम के समय पतले कपड़ेका लँगोट बाँधना चाहिये। लँगोट बाँधना फायदेमन्द है, लेकिन स्वच्छ और बारीक हो। स्वप्नदोष के रोगियों को यथेष्ट कसरत करनी चाहिये।

व्यायाम के बाद दूध घी आदि पौष्टिक चीजों का सेवन आवश्यक है। अथवा ९ दाने बादाम ९ दाने काली मिर्च ३ छोटी इलायची और चवन्नी भर धनिया में १॥ मासा सोंठ, रात को मिट्टी, पत्थर चीनी अथवा काच के बर्तन में भिगो दें। सुबह कसरत करने के बाद बादाम और इलायची को छील कर सब को बारीक घोट डालें और छान कर पी लें। आवश्यकता हो तो मिश्री डाल लें। सर्दी में कुछ गर्म कर के पीना चाहिये। ज्यों ज्यों व्यायाम बढ़ावें त्यों त्यों इसकी मात्रा भी बढ़ा देनी चाहिये।

---

(३९) प्राणायाम न करना ।

प्राणायाम दीर्घायु का देने वाला, वीर्य को शुद्ध तथा स्थिर करने वाला है। प्राणायाम से फेफड़े शुद्ध होकर शरीर स्वस्थ होता है। हिन्दू शास्त्रों मे उपनयन सस्कार के बाद ही, बच्चे को प्राणायाम सिखा दिया जाता है, किन्तु आजकल लोग सिर्फ एक दो क्षण का नाक पकड़ कर छोड देते हैं, इस प्रकार प्राणायाम की लकीर नित्य पीटी जाती है। यदि देश मे ठीक ढग से प्राणायाम करने वाले होते तो, स्वप्नदोष इस प्रकार वृद्धि कदापि नहीं पाता। यहाँ प्राणायाम की प्रशसा न लिख कर पाठकों को प्राणायाम करने की विधि बताते हैं, आशा है जिन्हें दीर्घायु तथा आरोग्य की इच्छा होगी वे अवश्य इस क्रिया से पूर्ण लाभ उठावेंगे। यह क्रिया मामूली नहीं है। यह योगियों की क्रिया, और एक बड़ा भारी तप है। हिन्दू-शास्त्रों ने इसकी प्रशसा मुक्त कण्ठ से की है।

प्राणायाम का अर्थ है, प्राण-वायु का रोकना और त्यागना। प्राणायाम (१) पूरक (२) कुभक (३) रेचक और (४) बाह्य कुम्भक, है। इसके करने की विधि इस प्रकार है। सिद्धासन से बैठो-(देखो चित्र न० १३) मुख, पूर्व, पश्चिम या उत्तर दिशा की तरफ रखो। पीठ की रीढ़ हड्डी बिलकुल सीधी रहे। पहिले अभ्यास करने के लिये, सीधी दीवार के सहारे बिलकुल सिर तक टिक कर सीधे बैठ जाओ। नाक मुँह आदि का मल पहिले से ही शुद्ध कर दो। अब साँस खींचो, और एक दो तीन गिनने लगो। यह पूरक प्राणायाम है। धीरे धीरे साँस खींचने तक जितने गिने हों, उससे चौगुने गिनने तक साँस को रोके रहो यह "कुभक" प्राणायाम हुआ। अब, साँस खींचने में जितनी संख्या हुई थी, उससे दुगुने गिनते हुए साँस धीरे-धीरे छोड़ो। यह रेचक प्राणायाम हुआ। साँस छोड़ने पर, तुरन्त ही [illegible] ठहरो। यह "बाह्य कुभक" प्राणा-

याम हुआ। अर्थात् यदि १० तक गिनते हुए "पूरक" हुआ तो फिर एक दो से गिन कर ४० तक "कुंभक" करो और फिर "रेचक" एक दो से लगा कर बीस तक गिनो तब तक करो। "बाह्य कुंभक" अपनी शक्ति के अनुसार ही करना चाहिये। "पूरक" के वक्त नासिका का बायाँ छेद दबा कर दाहिने छिद्र से धीरे धीरे साँस खींचो। "कुंभक" के समय दोनों नथुने दबा दो और साँस रोके रहो। "रेचक" के समय दाहिना नथुना दबा कर बाँया खोल दो। अब दूसरे प्राणायाम में बायें नथुने से साँस को दोनों दबा कर धारण करो और बाँया दबा कर दाहिने से साँस छोड़ो। ऐसे उलट फेर कर, कई बार करते रहो। कमसे कम ३ बार अवश्य ही करना चाहिये। भरे पेट तथा अशुद्ध वायु में प्राणायाम करने से हानि होती है। इस क्रिया को एकान्त में जलाशय के पास बगीचे में वन में पर्वतों पर रम्य स्थानों में जहाँ शुद्ध वायु बहता हो प्रसन्न मन तथा शान्तिपूर्वक करने से ही लाभ होता है। प्राणायाम के लिए सूर्योदय या सूर्यास्त का समय उत्तम है। स्वप्नदोष वालों को प्राणायाम जरूर करना चाहिये। प्राणायाम के समय तीन "बन्ध" किए जावें तो सोना और सुगन्ध बन जाता है। तीन बन्धों के नाम ये हैं (१) मूल बन्ध (२) जालन्धर बन्ध और (३) उड्डियान बन्ध। गुदा को सिकोड़ कर ऊपर की ओर खींचे रखने की क्रिया को "मूलबंध"। गले को सिकोड़ कर ठुड्डी को कण्ठमूल में लगाये रहने की क्रिया को "जालन्धर बंध" और पेट को भीतर की ओर खींच कर रीढ़ की हड्डी से सटा देने के प्रयत्न को "उड्डियानबंध" कहते हैं। ये तीनों बंध पूरक कुंभक और रेचक के समय इस प्रकार करने चाहिएँ—

(१) पूरक के समय मूलबन्ध और उड्डियानबंध।
(२) कुंभक के समय मूलबन्ध और जालन्धरबंध।
(३) रेचक के समय मूलबंध और उड्डियान बंध।

नर्मोंमें प्रधानता मूलबन्ध की है। वास्तव में जो नित्य नियमपूर्वक

प्राणायाम के साथ विधिवत् "मूलबन्ध" करता है उसे कभी भी स्वप्न-दोष नहीं हो सकता। जिन्हें स्वप्रदोप होता होवे 'मूलबन्ध' के द्वारा इसे समूल कर सकते हैं। विधिवत् मूलबन्ध स्वप्रदोष का एक अचूक इलाज है।

(४०) खुद को तुच्छ समझना

जिस मनुष्य में आत्म-सम्मान अथवा आत्मगौरव का अभाव है। वह मनुष्य ही नहीं। प्रत्येक व्यक्ति मे आत्माभिमान का होना अत्यावश्यक है। स्मरण रहे मिथ्याभिमान त्याज्य और बुरा है। हमारे शरीर में इन्द्रियाँ हैं, और जो इन इन्द्रियों का अधिपति है वही "इन्द्र" है। अर्थात् प्रत्येक शरीर में इन्द्रदेव का राज्य है अतएव अपने को दीन हीन और तुच्छ समझना मानों इन्द्रदेव को अपमानित करना है। मनुष्य को उचित है कि अदीन भाव से आमरण रहे। वेद भी—

"शतमदीनाः स्याम"

कह कर आयु भर, अदीन भाव से रहने की आज्ञा देता है। दूसरे के आगे अपने को चाटुकारी, चापलूसी या अन्य किसी प्रकार से दीन बनाना या तुच्छ समझना अनुचित है। ऐसे मनुष्य एक प्रकार के मुर्दादिल, और नामर्द होते हैं। ऐसे मनुष्यों से राष्ट्र निर्बल होता है। अतएव मनुष्यों को अपने दिल से यह बात एक दम निकाल देनी चाहिये कि, मैं तुच्छ हू। जिसके मन में निर्बलता की भावना होती है वह वीर्यरक्षा कदापि नहीं कर सकता। अतएव स्वप्रदोप से बचने की इच्छा रखने वालों को चाहिये कि अपने मन को तुच्छता दूर कर दें।

पत्र व्यवहार मे या बात-बात में, आपका दास हूँ या सेवक हूँ, किंकर हूँ, इत्यादि शब्द प्रयोग करना आजकल एक सभ्यता बन गई है, लेकिन यह अनुचित है। हमारी वैदिक-सभ्यता इसके विरुद्ध है। भारतीय सभ्यता दासत्व के बन्धन मे फँसानेवाली, नहीं है, बल्कि पाश्चात्य-सभ्यता है।

(४१) अधिकवस्त्र पहनना।

स्वप्नदोष से जिन्हें दूर रहना हो अथवा यों कहिये कि जिन्हें स्वस्थ रहना हो, उन्हें अधिक वस्त्र कदापि नहीं पहनने चाहियें। लज्जा निवारणार्थ सिर्फ धोती पहन कर शेष शरीर यदि नग्न रखा जावे तो स्वास्थ्य के लिये बड़ा ही उत्तम है। नहीं तो जहाँ तक हो सके, कम वस्त्र पहिनना ही हितकर है। आजकल फेशन बन गया है कि अकारण ही लोग कपड़ों पर कपड़ा लादे रहते हैं। अधिक कपड़ों का शरीर पर लादना हम लोगों ने अंग्रेजों से सीखा है। इसके पूर्व भारतवासी बहुत ही कम कपड़े पहना करते थे। यही कारण था कि आज की भाँति भारत पहले रोगी नहीं था। बनियान कमीज वास्कट कोट ओवरकोट वगैरा पाँच पाँच छः छः कपड़े पहनना पाश्चात्य सभ्यता है। भारतीय-सभ्यता तो कम वस्त्र पहिनने में ही है। अंग्रेजों का देश शीतप्रधान है अतएव वे इतने और दुगुने लादें तो भी उन्हें कम हैं। किन्तु भारतवासियों की तन्दुरुस्ती के लिये तो अधिक वस्त्र बरबाद करने वाले हैं। जो लोग इस प्रकार अनाप-सनाप कपड़ों में अपने को वेष्टित रखते हैं, वे बड़ी भूल करते हैं। हमें चाहिये कि सिर्फ अपनी तन्दुरुस्ती ठीक रखने के लिये ही कम से कम वस्त्र धारण करें। सिवाय शीतकाल के अन्य ऋतुओं में तंग कपड़े मत पहनो। अभ्यास द्वारा, मनुष्य एक वस्त्र में ही शीत ग्रीष्म वर्षा आदि ऋतुओं को सहज ही काट सकता है। केवल अभ्यास की जरूरत है। अभ्यास द्वारा शरीर को इच्छानुसार बनाया जा सकता है।

(४२) मुख का गंदापन और दाँतों को अपवित्रता।

स्वास्थ्य का दारोमदार पेट पर ही है लेकिन पेट का दारोमदार मुख पर है क्योंकि पेट में भोजन पहुँचाने का एक मात्र मार्ग यही है। यदि मार्ग दूषित हो तो, खाया हुआ अन्न भी दूषित—रोगोत्पादक होकर पेटमें जावेगा और पेट उस दोष को सारे शरीर में पहुँचा

देगा। इसलिये मुखको खूब साफ़ रखना चाहिये। दाँत, जिह्वा, तालु, मसूढ़े ये मुखके मुख्य अवयव हैं। इन्हें माँज रगड़कर शुद्ध रखने की जरूरत है। सायं प्रातः दोनों समय सफाई की जा सके तो बड़ी ही अच्छी बात है, नहीं तो प्रातःकाल उठते ही मुख धोने के पूर्व दातून अवश्य करनी चाहिये। ब्रश से दातून करना ठीक नहीं। यदि ब्रश की आदत ही हो तो, अपना ब्रश अलग रखो, और खूब धोकर शुद्ध कर दिया करो। ब्रश के साथ कोई दाँत साफ करने का मंजन अवश्य होना चाहिये। अनेक लोग कोयले से, राख से, मिट्टी से, या अन्य किसो प्रकार के चूर्ण से दाँत साफ़ करते हैं, किन्तु ये लाभप्रद नहीं होते। जो लोग तमाखू से या चिलम के गुल से दाँत साफ करते हैं, वे तो बड़ी ही भूल करते हैं। वृक्षशाखा की दतून ही अत्यंत लाभदायक है। ताजा होती है, इसके अतिरिक्त जैसा वृक्ष होता है, वैसी ही वह गुणदायक होती है। दतून पर की वल्कल पेस्ट् (Paste) का काम करता है। दतून को चीरकर उसकी फाँक से जिह्वा पर का मैल अच्छी तरह शुद्ध किया जा सकता है। दतून हमेशा कनिष्ठिका अँगुली के अग्रभाग समान मोटी, और बालिश्त भर लम्बी होनी चाहिये। रोज नई ताजा दतून लेना चाहिये। एक दतून से दिनों तक दांत साफ करना बहुत हानिकारक है। नीम, बबूल, खदिर, करज, रतनजोत, इमली, पलाश, जामुन, महुआ, बरगद की जटा, अपमार्ग (आँधी झाड़ा) आदि की वृक्षों की दतून की जा सकती हैं। आयुर्वेद में भी—

"अर्क-न्यग्रोध-खदिर-करञ्ज-ककुभादिकम् ।
प्रातर्भुक्त्वाचमृद्वग्रं कषाय-कटु-तिक्तकम् ।
भक्षयेद्दन्तधावनम् दन्तमांसान्यबाधयन् ।"

अर्थात्—आक, वट, खैर करज और अर्जुनादि वृक्षों तथा कटु, तिक्त और कषाय रसवाले अन्य वृक्षों की दतून लें और उसके

अममाग को खूब चबाकर ऐसा कोमल बना ले कि, जिससे मसूढ़ोंको रगड़ न पहुँचे। इनके अतिरिक्त जिस वृक्ष की शाखा का रस अच्छा बन जावे उसी की दतून कर लेनी चाहिये। लेकिन यह ध्यान अवश्य रखा जावे कि, कोई हानिमद वृक्ष की शाखा न हो। खजूर, और बाँस की दतून नुकसान करती है। हमेशा यह याद रखना चाहिये कि—

"दाँत घिसन सों काम लकरिया काहू की ।"

दाँतों को बड़े घिसना चाहिये। उन्हें तीनों तरफ से साफ करना चाहिये। जब साफ हो जावें तब जल से कुल्ले करके तालू, जिह्वा, तथा जिह्वा के नीचे का भाग मल रहित कर देना चाहिये। तमाखू, कत्था, सुपारी आदि खानी कर मुँह को गन्दा कभी नहीं करना चाहिये। इसके सेवन से रक्तोत्पादक मक्खियाँ निर्बल हो जाती हैं। इन मक्खियों से रात दिन थूक बनता रहता है। यह थूक दाँतों की जड़ों को छूकर, मुख में से पेट में जाता रहता है। यही थूक भोजन को पचाने में सहायता देता है। यदि मुख गंदा हुआ तो थूक सारे शरीर में रोग पहुँचा देगा। इसलिये मुख को खूब ही साफ रखो। जरा भी बदबू मुख से नहीं आनी चाहिये। भोजन के बाद और पहिले मुख और दाँतों को विशुद्ध शुद्ध कर लेना चाहिये। मिठाई खाने वालों के दाँत खराब हो जाते हैं। जिनके दाँतों में दर्द हो उन्हें टिंचर-आयोडिन या फिटकिरी के कुल्ले करना चाहिये। अथवा सोडाबाईकार्ब के पानी से कुल्ले करने चाहियें।

बड़ी बड़ी बीमारियाँ जो बहुमूल्य औषधियों से नहीं हटतीं उन्हें डॉक्टर सिर्फ रोगी के दाँत साफ करके ही हटा देते हैं। अतएव दाँत और मुख की शुद्धि शरीर के लिये उतनी ही आवश्यक है, जितना कि भोजन।

(४३) नग्न, अथवा एकान्त में सोना ।

तरुण पुरुष के लिये, एकान्त शयन कामोद्दीपन का कारण होता है। इसी प्रकार नग्न सोना भी कामोत्तेजक है। शास्त्रकारों ने लिखा है "न च नग्नः शयीतेह" अर्थात्—नग्न हो कर कभी नहीं सोना चाहिए। जो नवयुवक वीर्यदोष से दुःखी हैं, उन्हें चाहिये कि कभी एकान्त वास न करें, और सोने के वक्त भी अलग कमरे में न सोवें। अच्छे पुरुषों की सङ्गति में रहें। जैसी सङ्गति होती है, मनुष्य भी वैसा ही बन जाता है। इसलिये अपना मित्र बनाने के पूर्व, खूब ही सोच समझ कर मित्रता करनी चाहिये। बुरे मित्रों की कुसङ्गति के कारण, बड़े बड़े पुरुष भी नष्ट भ्रष्ट हो चुके हैं, और सज्जनों की सत्सङ्गति से नीचों का भी उद्धार हुआ है। विशेषतः वीर्यरक्षा के लिये भले मित्रों की ही सङ्गति चाहिये। वीर्य नष्ट होने का कारण, बुरे मित्रों की सङ्गति, अर्थात् उनके साथ सोचे हुए बुरे विचार ही होते हैं। अतएव यदि समय मिले तो, सत्पुरुषों की ही सङ्गति करनी चाहिये। एकान्त वास, नासमझ नवयुवकों के लिये कदापि उचित नहीं है। नंगे सोना पशुता है। मातापिता को चाहिये कि अपने नासमझ बच्चों को नंगे कभी एकान्त में न रहने दें, और नंगे बच्चों को एक साथ या अकेला न सुलावें।

(४४) तमाखू सेवन ।

यद्यपि हम इस विषय पर "मादक द्रव्योंके सेवन" में बहुत कुछ लिख आये हैं, तथापि इसे फिर दोहराने का कारण है कि, इसके कारण हमारा सारा देश स्वप्नदोष पीड़ित है। तमाखू-सेवन दुर्व्यसन है। इसका खाना, पीना, सूंघना वगैरः सभी बुरा है। बीड़ी, सिगरेट, चुरुट, चिलम, हुक्का नास, हुलास, सुरती, वगैरः सभी त्याज्य हैं। धर्म-शास्त्रों में इसकी बड़ी ही घृणित कथा है। इसे गोरक्त से उत्पन्न कहा है—

"कर्णेभ्यश्च तमाखम् ।"

(कार्तिक म हात्म्य)

अर्थात्—गौ के कान से तमाखू उत्पन्न हुई है—आदि कथायें है। या, काफी से बहुकोष्ठता होती है, अन्य मादक पदार्थों से रक्त-दाब बढ़ते हैं, किन्तु तमाखू से वीर्य दोष उत्पन्न होते हैं। जिसे स्वप्नदोष से बचना हो उसे सब से पहले इससे बचना चाहिये।

(४५) सोते समय कुविचार।

विचारों का प्रभाव मन पर पड़ता है, इसे आप इसी पुस्तक में जहाँ तहाँ पीछे पढ़ आये हैं। स्वप्नदोष निद्रा के समय होता है, अत एव निद्रा के पूर्व जैसे अच्छे या बुरे विचार मन में होंगे, वैसे ही स्वप्न में भी दृश्य दिखाई पड़ेंगे। अतएव जिन स्त्री-पुरुषों प्रति आप की कामेच्छा हो, या जिनसे अनुचित सम्बन्ध हुआ हो या है उनका स्मरण सोते समय कदापि मत करो। धार्मिक पुस्तक का स्वाध्याय करके सोना चाहिये। या शय्या में लेटकर उत्तम पुस्तक अथवा पत्र पढ़ते रहना चाहिये। नींद आने लगे तब पुस्तक रख कर, सो जाना चाहिये। अथवा सोते समय बिछौनों में साफा ले कर ईश्वरस्मरण में ध्यान लगा लेना चाहिये। सारांश यह कि सोने के पूर्व मन में कुविचारों को कदापि स्थान नहीं देना चाहिये।

(४६) निंदा से डरो।

जो लोग अपनी निन्दा से नहीं डरते वे लोग प्रायः व्यभिचारी हो जाते हैं। और व्यभिचारी को स्वप्नदोष होना अनिवार्य बात है। इसलिए निन्दा से डरते रहो। झूठी निन्दा से निर्भय रहो।

(४७) आत्म विश्वास का न होना।

प्रत्येक को अपनी कमजोरियों के भय से दूर कर अपने में आत्म-विश्वास रखना चाहिये। मैं आत्मा हूँ और मैं ही कर्ता हूँ ऐसे

उच्च विचारों को मन में स्थान देना चाहिये। मैं सदाचारी, श्रेष्ठ, पुण्यात्मा, बलवान, और ब्रह्मचारी बनूँगा—अनेक प्रयत्नों द्वारा मैं अपनी आत्मोन्नति करूँगा । ऐसे विचार रखने से मनुष्य को किसी प्रकार का वीर्यदोष नहीं हो सकता।

(४८) आलस्य ।

आलस्य भी स्वप्नदोष पैदा करता है । पुरुषार्थी ही अपनी रक्षा कर सकता है। आलसी अपना नाश स्वय कर लेता है । नीतिकारों का कहना है कि:—

"आलस्यं हि मनुष्याणां शरीरस्थो महान् रिपुः ।"

आलसी को स्वप्नदोष ही क्या विविध वीर्य-विकार उत्पन्न हो जाते हैं। इसलिये आलस्य से बचो।

(४९) अधार्मिकता।

सदाचार भी धर्म का एक लक्षण है । धर्म के शेष लक्षणों का पालन प्रत्येक व्यक्ति को करना चाहिये । जो मनुष्य धार्मिक है, वही श्रेष्ठ है। जो मनुष्य धर्म का पालन करता है, धर्म उसकी अनेक प्रकार से रक्षा करता है। इसके विपरीत अधर्माचरण करता है, अथवा धर्म का पालन नहीं करता वही इस ससार में दुःखी और रोगी देखा जाता है। अतएव धैर्य, सहिष्णुता, मनोनिग्रह, अस्तेय, पवित्रता, इन्द्रिय-दमन, सद्बुद्धि-ज्ञान, सत्य और अक्रोध, धर्म के इन १० लक्षणों को पालन करना चाहिये ।

(५०) ईश्वर में अनन्य श्रद्धा

एक मात्र परमात्मा की अनन्य भाव से भक्ति तथा उपासना करनी आवश्यक है। जो हमारे शरीर का निर्माता है, जिसके हाथमें इस अखिल-विश्व की बागडोर है उसी मङ्गलमय परमात्मा का

नित्य ध्यान कीजिये और उसे अपने हृदय में ही विराजमान देखिये। उसके नाम सायम्-प्रातः उस परम-पिता के गुणानुवाद अवश्य गाइये। ईश्वरभक्त को किसी प्रकार का रोग, शोक भय दुःख आदि नहीं होता। परन्तु कि निष्काम भक्ति हो। दुनियाँ को दिखाने की बगुला भक्ति से कुछ भी नहीं होता। ईश्वर में अनन्य श्रद्धा रखने से मानव का कल्याण है।

सैकड़ों कारण स्वप्नदोष के हैं, किन्तु उन्हें यहाँ लिख कर पुस्तक के पृष्ठों को अधिक बढ़ाना उचित नहीं जान पड़ता। छोटे मोटे ५० कारण आपको बताये गये हैं। यदि इन सब कारणों को ही दूर कर दिया जायेगा, तो स्वप्नदोष भी दूर हो जायेगा। अब हम आगे कुछ पथ्य-पदार्थों के नामों की एक सूची दे रहे हैं।

कुछ पथ्य-पदार्थों की सूची।

अन्न।

गेहूँ ज्वार-मक्का चाँवल, मूँग, तुअर, मसूर अरहर, मटर जौ चना बाजरा। इत्या०।

मिष्टान्न।

हलुआ घेवर, रबड़ी, लड्डू बेसन के, नानखटाई, कलाकन्द, इमरती, फेनी, जलेबी गुलाबजामुन, इत्यादि। स्मरण रखिये अधिक मिठाई खाने से स्वप्नदोष अवश्य हो जाता है। साथ ही यह भी ध्यान में रहे कि मिठाई पवित्रतापूर्वक तथा पवित्र शक्कर से बनी हुई हो। दिन भर में एक मनुष्य को आध पाव तीन छटाँक मिठाई से अधिक कभी नहीं खानी चाहिये। दूध खोआ दही आदि से बनी

मिठाइयां स्वप्नदोष के रोगी को कम खानी चाहिए और रात्रि के समय तो बिलकुल ही नहीं खानी चाहिये।

दूधसे बने पदार्थ।

दूध, (अधिक औटा हुआ न हो, और अधिक शक्कर युक्त न हो) दही (खट्टा न हो) छाछ, (गऊ की हो और ताजा हो) मक्खन, घी (शुद्ध हो) रबड़ी, खोवा, इत्यादि। दूध के अतिरिक्त सभी अल्प-मात्रा में खाने चाहिए।

मसाले।

सेंधानमक, कालीमिर्चें, जीरा इलायची, दालचीनी, हल्दी, धनिया, हींग, स्याह-जीरा, इत्यादि। लाल मिर्चें बिलकुल ही काम में न ली जावें।

अचार और मुरब्बे।

पुराना नीबू का अचार, आँवले का अचार, कैर का अचार, वगैरः गुणदायक हैं। आमका अचार भी कम मात्रा मे सेवन किया जा सकता है। स्वप्नदोष वाले को मुरब्बे, सभी हितकर हैं।

तरकारी।

पालक, कद्दू, बथुआ, सेंगरी, मूली, आल, गिलकी, तोरई, खीरा, कुलफा, ग्वारकीफली, करेले, टमाटो, सेम, आलू, गोभी, कचनार की फली, केला, मटर की फलियाँ, गाजर, इत्यादि।

फल।

आम (मीठा पका हुआ), केला, नारंगी, अनार, सतरा, आडू, सेव, चकोतरा, नाशपाती, निम्बू, खरबूजा, तरबूज, रामफल मौसबी, जामुन, अंगूर, अन्नास, अमरूद, सीताफल, बड़े बेर, सिंहाड़े, मूँगफली, सफेदगन्ना, इत्यादि।

मेवा ।

छुहारे बदाम किशमिश मुनक्का अखरोट चिलगोजा चिरौंजी, मखाने पिंडखजूर, काजू (कम खानी चाहिये)।

विविध ।

पानबीड़ा (अधिक से अधिक दिन में दो बार) इलायची, केसर, कस्तूरी, (कम मात्रामें) मूंग की बड़ी (मुंगोड़ी) पापड़ मूंग के भात सिवैयाँ, गुड़ (अधिक नहीं) पूरी, कचौरी, पराँठे आदि नित्य नहीं खाने चाहिये। ऐसे गुरुपाक पदार्थ प्रातः काल के भोजन में रखना चाहिये रात्रि को सदा शीघ्र पचने वाला भोजन करना उचित है।
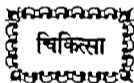
चिकित्सा

मानसिक-चिकित्सा ।

"मन एव मनुष्याणां कारणं बंधमोक्षयोः।" अर्थात् मन ही मनुष्य के मोक्ष और बन्धन का कारण है। मन की शक्ति कितनी महान् है, इसे कुछ महात्मा, महात्मा लोग ही जानते हैं। मन की शक्ति के आगे इस संसार की, बड़ी से बड़ी शक्तियाँ पानी भरती हैं। जिस व्यक्ति का मन निर्बल है वह शारीरिक शक्ति में भीमसेन के तुल्य ही क्यों न हो तो भी वह निर्बल है। और जिसका मन बलवान है,

वह शरीर से अत्यन्त निर्बल होने पर भी शक्ति सम्पन्न है। यह बात हमारे प्राचीन ऋषि मुनियों में पाई जाती थी। जो शाप और वर-दानों की कथाएँ हम अपने हिन्दू-इतिहास ग्रथों मे पढ़ते हैं, वे सब मनोबल के चमत्कार ही तो थे। हमारे पूर्वज, मनोबल की महान् शक्ति को अच्छी तरह जानते थे। वे लोग मन की शक्ति के सामने शारीरिक शक्ति को तुच्छ समझते थे। आज इसके विपरीत है—लोगों ने मनकी शक्ति को तुच्छ, और शारीरिक शक्ति को मुख्य मान लिया है। यह एक बड़ी भूल हो रही है। जिनके शरीर में केवल अस्थिमात्र शेष हैं ऐसे मनोबल के भण्डार, तपोनिधि ऋषि लोगों ने, भीमकाय और भीमपराक्रम पुरुषों को, सैकड़ों बार पराजित किया था। यह सब-मनोबल का ही चमत्कार था। आजकल भी अनेक घटनाएँ हमारे देखने और सुनने में आती हैं कि, शरीर से निर्बल व्यक्ति भी कभी कभी, जैसे महान् पराक्रमी और खूँख्वार जानवर को सहज ही में मार डालते हैं, और कई बार सशस्त्र एवम् बलवान् व्यक्ति सिंह के द्वारा मारे जाते हैं। यह सब मानसिक शक्ति के कम और ज्यादः होने का ही कारण है। तात्पर्य यह कि मानसिक-शक्ति एक महान् शक्ति है, जिसकी महिमा भी महान् है।

पाठक यह न समझ लें कि, शारीरिक शक्ति की जरूरत ही नहीं है—नहीं, इसकी सबसे प्रथम आवश्यकता है, किन्तु मनोबल की भी मनुष्य के लिये बड़ी जरूरत है। जिसके मनकी शक्ति बढ़ी बढी है, उसके आगे ससार की सब सिद्धियाँ हाथ जोड़े तैयार हैं—और वह ससार में सदा आनन्दित और सुखी रहता है। जो मनुष्य जैसा अपने मनको बनावेगा, वह भी स्वयम् वैसा ही बन जावेगा। कायरता और वीरता मन पर अवलम्बित है। शारीरिक अवयवों तथा इन्द्रियों का स्वामी मन ही है। यही इन्द्रियों पर शासन करता है, देखिये ऋग्वेद में लिखा है—

"भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः ।"

'भद्रं वैवर कृण्वते भद्रं युञ्जन्ति दक्षिणम् ।
भद्रं वैवस्वते चक्षुर्बहुधा जीवतो मनः ॥४'

१०।१६४।२'

अर्थात्—'सदा शुभ विचारों को ही मन में रखना चाहिये। दक्षता पूर्वक सब कार्य करना, सदा चक्षु आदि इन्द्रियों को सदा सन्मार्ग पर ही चलाना चाहिये।' मनुष्य का मन अनेक प्रकार की कल्पनायें करता रहता है यदि वह कल्याण की कल्पना करेगा तो अवश्यमेव कल्याण ही प्राप्त करेगा; क्योंकि मनुष्य का जीवित मन, उत्साहयुक्त मन बहुत ही सामर्थ्यवान है। हम लोगों ने जान बूझकर, मनकी शक्ति की महत्ता को भुला दिया है। माता लोग शुभ कार्यों के समय मुख से अशुभ शब्दों का प्रयोग नहीं करने देते इसका कारण क्या है ? यदि आप इस विषय पर ध्यान पूर्वक सोचेंगे तो मालूम पड़ जावेगा कि इसमें भी मानसिक शक्ति का ही रहस्य है। यदि हमारे मकानों में ऐसे जानवर जैसे उल्लू, चमगीदड़, कबूतर, फाख्ता चील, आदि पक्षी रहने लगें तो हम उन्हें अशुभ समझ कर भगाते हैं। इसका भी कारण यही है कि, ये पक्षी सदा शून्य की इच्छा करते हैं। सूने घरों में ही ये रहते हैं, और जहाँ इनका पदार्पण होता है वहाँ शून्य हो जाता है, ऐसी लोगों की धारणा है। अर्थात् इन पक्षियों का मनोबल सूने के लिये ही इच्छा करता है। इससे सिद्ध हो गया कि सदा मनोबल अवश्य ही अपना प्रभाव करता है। जब कि पशु-पक्षियों के मनोबल तक अपना प्रभाव डालते हैं तो क्या मनुष्य का मनोबल काम नहीं कर सकेगा ? अवश्य करेगा।

इस विषय पर इस पुस्तक में पीछे बहुत कुछ लिख आये हैं, अतएव एक बात को कई बार दोहराना अनुचित समझकर हम ऐसे कुछ वेदमन्त्रों को यहाँ लिखेंगे, जिनमें स्वप्नदोष को केवल मानसिक दोष बताया है। मनके पवित्र होनेपर स्वप्नदोष भी दूर हो सकता है।

"यदाशसा निःशसाऽभिशसोपारिम जाग्रतो यत्स्वपन्तः ॥
अग्निर्विश्वान्यप दुष्कृतान्यजुष्टान्यारे अस्मद्धातु ।"

ऋग्वेद १०।१६४।३

अर्थात्—आशा के कारण, दोष के कारण कुसस्कार के कारण जागृतावस्था में, अथवा स्वप्न के समय जो जो पाप इससे हुए है, वे असभ्य सव दुराचार तेजस्वी मन हमसे दूर करे। अव देखिये अथर्व वेद में कहा है कि:—

"स्वप्नं सुत्वा यदि पश्यसि पापं०—॥१०।३।६

"पर्यावर्ते दुष्वप्न्यात्पात्स्वप्न्याद्भूत्याः॥ ब्रह्माह मंतरं कृण्वे परा स्वप्न मुखा शुचः ॥"

अ० ७।१००।१

अर्थात्—यदि स्वप्न मे कोई बुरी वात दिखाई पड़े, तो ऐसे दुष्ट स्वप्नों के पश्चात्, मन में ब्रह्म की उपासना करनी चाहिये। इससे सब अनिष्टकारक स्वप्न के परिणाम दूर होते हैं।

सारांश यह कि, परमात्मा की उपासना से मन पवित्र होता है, और मनोवल वढ़ता है। अतएव जिन्हें स्वप्नदोष होता हो उन्हें चाहिये कि, अपने मन से बुरे विचारों को निकाल कर उत्तम विचारो को ही धारण करें। जब मन की शक्ति इतनी वढ़ जावेगी तब, आप स्वप्नदोषादि दोषों से सहज ही में छुट्टी पा जावेंगे। धार्मिक कृत्य, धार्मिक निष्ठा, ईश्वर भजन, पाप कर्मों से भय, महात्मा, ज्ञानी पुरुषों की सत्संगति, अपनी मृत्यु का स्मरण, और अपने जीवन का उच्च ध्येय रखने से, मन की शक्ति वढती है। इसलिये स्वप्नदाष के रोगियों को सब से प्रथम अपना मनोवल वढ़ाने का प्रयत्न करना चाहिये। मन के चचल वेग को रोक कर उसे एकाग्र करने का यत्न करना चाहिये। लोग इस कार्य को हौआ समझते हैं, किन्तु अभ्यास

में यह शक्ति है कि यह सब कुछ कर दिखाता है। निरन्तर अभ्यास से मन एकाग्र होने लगता है और वह बलवान हो जाता है।

स्वप्न के पश्चात् जब निद्रा भङ्ग हो जावे तब निम्न वेद मन्त्र उच्चारण करना चाहिये। इस मन्त्र का अर्थ भी ध्यान में रखना चाहिये क्योंकि बिना अर्थ समझे केवल मन्त्रोच्चारण से कुछ भी काम नहीं हो सकता। हाँ यदि मन्त्र न बोला जावे और उसके अर्थ को ही मन में धारण कर क्रिया जावे तो, काम सब सकेगा किन्तु बिना अर्थ समझे मन्त्रोच्चारण से कुछ भी काम नहीं होता—यह बात भूलने की नहीं है।

"यो मे राजन् युज्योवा सखा वा स्वप्ने भयं भीरवे मह्य माह। स्तेनोवायो दिप्सति नो वृकोवा त्वं तस्माद् वरुण पाह्यस्मान् ॥"

अर्थात्—हे वरुण! मेरा मित्र साथी, चोर, हिंस्र पशु आदि स्वप्न में आकर मुझ भीरु को डराता है, उससे मुझे बचाओ।

इस प्रार्थना के करने से मन में बल अवश्य आता है, क्योंकि ब्रह्म की उपासना से मन बलवान होता है, और स्वाभिमान का उदय होता है—मन के सभी कुसंस्कार दूर हो जाते हैं। स्वप्न का मूल कारण मानसिक संस्कार ही होते हैं। मनुष्य के स्वभाव की परीक्षा उसके स्वप्नों से हो सकती है। अच्छे मनुष्य को अच्छे और बुरे विचार वाले मनुष्य को बुरे स्वप्न आते हैं। जो स्वप्न में रोता है, भयभीत होकर चिल्लाता है वह कदापि वीर-व्यक्ति नहीं कहा जा सकता। स्वप्न तो अपने मानसिक विचारों का प्रतिबिम्ब होता है। मनुष्य को चाहिये कि जैसे बने तैसे अपने मन को पवित्र करे, उस पर अपना अधिकार स्थापित करे। जो अपने मन पर अपना प्रभुत्व नहीं रख सकता वह दूसरे लोगों के मन पर भी प्रभाव उत्पन्न नहीं कर सकता। स्वप्नदोष हटाने के लिये ही नहीं बल्कि संसार में उन्नत

प्राप्त करने के लिये भी सब से पहिले मनोबल बढ़ाने की अत्यन्त आवश्यकता है।

निद्रा आने के पूर्व इस निम्न लिखित मन्त्र को अर्थ सहित उच्चारण कर लेना चाहिये—

"अजैष्माद्यासनाम चाभूमानागसोवयम् जाग्रत्स्वप्नः।
संकल्पः पापोय द्विष्मस्तं सऋच्छतु योनो द्वेष्टितमृच्छतु ॥"

ऋग्वेद १०।१६४।५

अर्थात्–परमात्मन्! हम सब निर्दोष बनें, जिससे हम सब आज ही विजय प्राप्त कर सकें, और उन्नत बनें। जो जागृति के समय, अथवा स्वप्न के समय, आने वाला बुरा विचार है, वह उसके पास चला जावे, जिस एक का हम सब एक मत से द्वेष करते हैं, या जो अकेला हम सबों से द्वेष करता है।

इसके अतिरिक्त सोने के पूर्व अपने हृदय पर, अपनी अँगुली से "ओ३म्" (परमात्मदेवका नाम) लिखिये और अपने गुरुमन्त्र का अर्थ ध्यान मे रखते हुए जप कीजिये। गुरु मन्त्र का जप करते हुए ही आप को निद्रा आनी चाहिये। इस प्रकार पवित्र विचार रखने वाले तथा पवित्र विचारों को लेकर सोने वाले व्यक्ति को स्वप्नदोष कदापि नहीं हो सकता। सोते समय, प्रेम सम्बन्धी विचारों को मन मे हरगिज़ मत आने दो। अपने मित्रों का तथा उन मनुष्यों का, जिनके साथ आप का अनुचित सम्बन्ध हो या जिनके लिये आप के मन में अनुचित विचार हों, कदापि स्मरण मत करो। जिन्हें स्वप्न-दोष हो उन्हें वीर्यपात न करने की कोई ऐसी कठोर प्रतिज्ञा या शपथ–सौगन्ध ले लेनी चाहिये कि, जिसकी मन पर गहरी छाप पड़े। ऐसा करने से यह होगा कि जब स्वप्न में वीर्यपात करने का मौका आवेगा, उस वक्त मन को उसकी की हुई प्रतिज्ञा का अवश्य स्मरण होगा, और स्वप्नदोष नहीं होने पावेगा। जब स्वप्नदोष हो जावे तो

अधिक चिन्ता करके अपने मन को दुर्बल नहीं बनाना चाहिये कम कहा तो—

'बीती ताहि बिसारिके आग की सुधि लेउ।
जो बनि आवे सहज में ताही में चित देउ॥'

इस कथन के अनुसार गई गुजरी बात को छोड़ कर, आगे के लिये ऐसा प्रयत्न करना चाहिये कि भविष्य में स्वप्नदोष का प्रभाव कम हो जावे। केवल चिन्ता करते रहने से कुछ भी काम नहीं होता, मनुष्य को चिन्ता छोड़ कर प्रयत्न करना चाहिये।

वायु चिकित्सा।

यदि प्राणी के लिये कोई वस्तु अत्यन्त आवश्यक है, तो वह है वायु। इसके बिना जीवन ही नहीं है। यदि दो चार मिनिट के लिये हमें हवा न मिले तो हमारे जीवन का अन्त हो जावेगा। इतना होते हुए भी आज भारतवासियों ने इसके महत्त्व को भुला दिया! ९ प्रतिशत मनुष्य ऐसे हैं, जो हवा के विषय में जरा भी ज्ञान नहीं रखते। हमारी इसी अज्ञान से देश में विविध प्रकार के रोगों की सृष्टि हो रही है और लोग आजकल मृत्यु पा रहे हैं। प्राणी के लिये अन्न और जल से भी अधिक आवश्यक तत्त्व वायु है। प्रकृति ने भी इसे इतने अधिक परिमाण में बनाया है जो सब जगह सब समय मुफ्त में ही बिना टके पैसे के प्राप्त होती रहती है। लेकिन आजकल, देखने में आता है कि हवा को हम लोगों ने बहुत ही दूषित बना दी है। जंगल की शुद्ध वायु में रहने वाला एक व्यक्ति किसी बड़े शहर में जाकर हमारे इस कथन के सत्यासत्य का निर्णय कर सकता है! मतलब यह कि, आजकल हवा का मूल्य भी बढ़ गया है। गरीब लोग उसका आनंद नहीं लूट सकते। मुफ्त में मिलने वाली वस्तु के लिये भी पैसे खर्च करने पड़ते हैं। लोग इसका मसूरी, आबू आदि

स्थानों मे शुद्ध वायु प्राप्त करने के लिये जाते हैं ! विजली के पखों को चला कर वायु प्राप्त करते है !! कैसी अधोगति है !!

हवा मुफ्त मिले या क़ीमत से, परन्तु विना हवा के शरीर कदापि स्वस्थ और दीर्घजीवी नहीं हो सकता। हमारे शरीर में सर्वत्र और सर्वदा रक्त बहता है, वह फेफड़ों में आकर शुद्ध होता है। यह क्रिया हमारे शरीर में रात दिन होती रहती है। साँस छोड़ कर हम शरीरके विषैले वायु को बाहिर करते हैं, और उसकी जगह शुद्ध वायु शरीर के अदर साँस द्वारा भरते हैं। इस श्वासोच्छ्वास की क्रिया से रक्त की शुद्धि और उसका परिचालन होता रहता है। हमारे शरीर की आरोग्यता, शुद्ध वायु पर ही निर्भर है। यदि हम वायु के सम्बन्ध में थोड़ी सी सावधानी रखें, और खुली एवम् शुद्ध वायु में अधिकांश अपना जीवन व्यतीत करें तो, हम कदापि किसी रोग क शिकार न बनें, और दीर्घ-जीवन प्राप्त करें।

स्वप्न-दोष से ग्रसित व्यक्ति को, हमेशा खुली हवा में रहना चाहिये। मकान भी ऐसा हो, जिसमें हवा बिना किसी रोक-टोक के इधर से उधर बखूबी आ जा सके। रहने के मकान मे बहुत सी खिड़कियाँ रखनी चाहिये। मकान के आसपास सडा और गन्दी वस्तुएँ नहीं रखनी चाहिये। घर के नाले, मोरी, होज़, स्नानागार, पाखाने वगैरः अत्यत शुद्ध और पवित्र रखने चाहिये। गोबर, कीचड़, मलमूत्र, कचरा-कूड़ा, मकान के आसपास न होने देना चाहिये। सोते समय किसी बन्द मकान मे हवा के मार्गों को रोक कर नहीं सोना चाहिये। हवा से यदि सर्दी लगे तो, आवश्यकतानुसार वस्त्र ओढ़ने चाहिये, किन्तु हवा के मार्गों को बन्द नहीं करना चाहिये। खुले मैदान मे बरामदों मे, छतोंपर, अथवा मकान की खिड़कियाँ खोल कर सोने से ही शरीर आरोग्य रहता है। सारांश यह कि हवा के महत्त्व को अच्छी प्रकार समझकर उसका उपयोग करने से मनुष्य को कोई रोग हो ही नहीं सकता। पाश्चात्य विद्वानों ने इस विषय पर अनेक पुस्तकें लिखी

हैं, जिसमें बिना औषध के बिना चीर-फाड़ के रोगोंको हटाने की क्रिया का वर्णन है।

स्वप्नदोष के रोगियों को नित्य वायु-स्नान (airbath) करना चाहिये। सिर्फ तीन महीने के वायु-स्नान से स्वप्नदोष समूल दूर जाता है। वायु-स्नान इस प्रकार करना चाहिये गाँव से बहुत दूर जंगल में ऐसे स्थान में जाओ जो निर्जन हो जहाँ सूखी हुई शुद्ध हवा अच्छी तरह बहती हो। वहाँ अपने शरीर पर के सब वस्त्र उतार दो, और बिलकुल नंगे हो जाओ। यहाँ तक कि गुप्तस्थानों को ढकने के लिये चार अंगुल की लँगोटी तक भी शरीर पर मत रखो। दोनों पैरों को मिलाकर और दोनों हाथों को फैलाकर बिलकुल तन कर खड़े हो जाओ। इस क्रिया को नित्य आध घंटे करनी चाहिये। अवश्यमेव स्वप्न-दोष दूर हो जावेगा। यदि जंगल में जाना असुविधा जनक हो तो घर में ही वायुस्नान किया जा सकता है, बशर्ते कि हवा शुद्ध और विपुलता से मिले। इस चिकित्सा के करनेवाले को अधिकांश नंगे बदन रहना चाहिये। आवश्यकता पड़ने पर, कम वस्त्र काम में लाना चाहिये। ब्रह्मचर्य से रहना चाहिये। पथ्य और हीम पचनेवाला भोजन करना चाहिये। वायु-स्नान के पश्चात् जल-स्नान नहीं करना चाहिये। आवश्यकता पड़ने पर, यदि प्रातःकाल वायुस्नान किया हो तो सायंकाल के समय जल-स्नान शीतल जलसे करना चाहिये। ढीले और स्वच्छ कपड़े सफेद रंग के ही पहिनने चाहियें। साँस नाक से ही लेना और छोड़ना चाहिये—यह बात भूलने की नहीं है।

जल-चिकित्सा।

जिस प्रकार हवा मनुष्य के लिये आवश्यक वस्तु है, उसी तरह दूसरे नम्बर पर जल है। हवा के बिना मनुष्य कुछ मिनिटों जीवित रह सकता है तो जलके बिना कुछ घण्टों अथवा देशकालानुसार,

कई दिनों तक भी जीवन धारण कर सकता है। इतना होनेपर भी यह बात निश्चित है कि, अन्यान्य खूराकों के बिना तो मुद्दत तक काम चलाया जा सकता है, परन्तु पानी के बिना नहीं चलाया जा सकता। यद्यपि पानी हमारी बड़ी आवश्यक वस्तु है, हम नित्य इसे काम में लाते हैं, तथापि उसके गुणों की तरफ हमारा ध्यान बहुत ही कम जाता है। स्वास्थ्य को ठीक रखने के लिये, हमे जिस प्रकार शुद्ध वायु की आवश्यकता है, उसी तरह शुद्ध जल की भी जरूरत है। उत्तम वायु और उत्तम जल मनुष्य को बिना किसी औषध-प्रयोग के स्वस्थ और बलवान रख सकते हैं। देखिये जलके विषय मे वेद कहता है:—

हिमवतः प्रस्रवन्तिसिन्धौ समह संगमः। आपो ह मह्य तद् देवीर्ददन् हृद्द्योत भेषजम् १ यन्मे अक्ष्योरादिद्योत पार्ष्ण्योः प्रपोदश्च यत् आपस्तत् सर्वं निष्करन् भिषजां सुभिषक्तमाः २ सिन्धुपत्नीः सिन्धुराज्ञीः सर्वायानद्य स्थन। दत्त नस्तस्य भेषजं तेना वो भुनजामहै ॥ ३ ॥

अथर्व० ६।२४

अर्थ—"जल धाराएँ, बर्फीले पहाड़ से बहती रहती है, उनका समुद्र में संगम है, जल धाराएँ निश्चय पूर्वक मेरे लिये हृदय के चमक की भय जीतनेवाली औषध देवें। जो दुःख मेरे नेत्रों में, मेरी एड़ियों में और जो दोनों पाँव के पजों में चमक उठा है, वैद्यों में अति पूजनीय जलधाराएँ उस दुःख को हटावें। समुद्र को पालने वाली वा समुद्र की शोभा बढ़ाने वाली जो तुम सब नदियाँ हो, वे तुम हमें हिंसक रोग की औषध प्रदान करो जिससे तुम्हारे गुणों को हम भोगे।" और देखिये—

आप इद् वा उ भेषजीरापो अमीवचातनीः ।
आपो विश्वस्य भेषजीस्तास्ते कृण्वन्तु भेषजम् ॥

अथर्व ६।९१।३

अर्थ—"जल अवश्य ही भय-निवारक है, जल पीड़ा नाशक है, जल ही औषध है, वे जल तेरा भय निवारण करें।" जिस प्रकार वायु अमृत है, उसी तरह जल भी अमृत है। यदि इनमें शुद्ध आकाश शुद्ध प्रकाश और शुद्ध भूमि और मिला दी जावे तो "पञ्चामृत" बन जाता है। इस पञ्चामृत का जो पुरुष नित्य सेवन करते हैं वे निस्सन्देह अमरत्व प्राप्त कर सकते हैं। अतएव शुद्ध जल के प्रयोग द्वारा हमें आरोग्य सम्पादन करना चाहिये। जो लोग लापरवाही से जल को काम में लाते हैं वे विविध रोगों के भण्डार बन कर अल्पायु हो जाते हैं। स्नान शुद्धि और पान के लिये हमेशा निर्मल और शुद्ध जल ही काम में लाना उचित है। कहने का तात्पर्य यह कि जल एक पर औषधि है—इसके द्वारा शारीरिक सभी रोग हटाये जा सकते हैं। जल द्वारा रोग हटाने की क्रिया को जल-चिकित्सा कहते हैं। बड़े बड़े शहरों में जल-चिकित्सा के अस्पताल भी खुल गये हैं। आजकल लोगों का औषधियों पर से विश्वास हटता जाता है, और प्राकृतिक चिकित्साओं पर जमता जा रहा है। पाश्चात्य देशों में दिन प्रतिदिन ऐसी चिकित्साओं का प्रचार बढ़ता जा रहा है। और हजारों रोगी, जो औषधि सेवन करते करते अपने जीवन से निराश हो चुके थे, आरोग्य लाभ कर रहे हैं। लोगों का भ्रम है, कि इस चिकित्सा को ढूँढ निकालने वाले पाश्चात्य विद्वान हैं, किन्तु जिन्होंने हमारे उद्धृत किये हुए वेदमन्त्रों को ध्यान से पढ़ा होगा उन्हें इस भ्रम से छुट्टी मिल जावेगी।

जल पृथ्वी के ऊपर और भीतर रहने तथा बहने वाला एक तरल पदार्थ है। जिस जल को हम पृथ्वी से खोद कर प्राप्त करते हैं, वह

जल वहीं पर था ऐसा मान लेना भूल है। पृथ्वी के भीतर जल के बड़े बड़े सोते बहते रहते हैं, जिनके जरिये हमारे कुएँ बावलियों में पानी आया जाया करता है। ये बहने वाले जल विविध रासायनिक पदार्थों को छूते हुये, और अपने साथ बहाते हुए, इधर से उधर बहते रहते हैं, इस कारण जल औषध रूप बन जाता है। यह बात ध्यान में रखिये कि वह शुद्ध जल जिसे आप पीते हैं—डाक्टरों, हकीमों, वैद्यों की बहुमूल्य औषधियों से अधिक मूल्यवान और गुणप्रद है। बात इतनी ही है, कि हम जल के गुणों से अनभिज्ञ हो रहे हैं।

स्वप्नदोष के रोगियों को स्वच्छ, सुस्वादु, निर्मल और शीतल जल ही काम में लाना चाहिये। यदि जल में कुछ कूड़ा कचरा नज़र आवे तो उसे उबाल कर और ठण्डा करके पीना चाहिए। १५। २० सेर जल में, उबलते वक्त यदि चने के बराबर सफेद फिटकिरी डाल दी जावे तो जल का मल जल्द शुद्ध हो जावेगा। जल भारी नहीं होना चाहिये। स्वप्नदोष वालों को हल्का जल ही पीना चाहिये। जल के पहिचानने का यह तरीका है कि, जिस जल में साबुन मसलने से झाग न उठें वह भारी समझना चाहिये। पानी पीते समय डचक डचक करके झटपट नहीं जाना चाहिये, बल्कि अत्यन्त धीरे धीरे शान्ति-पूर्वक जलपान करना चाहिये। जलपान करते समय यह विचार मन में होना चाहिये कि "मैं इस जलपान से अपना स्वप्नदोष हटा रहा हूँ, यह मेरे रोग के लिये ईश्वरीय औषधि है।"

स्वप्नदोष के रोगी को प्रातः सायं दोनो समय ठण्डे और विपुल जल से स्नान करना चाहिये। ग्रीष्म ऋतु में यदि ३ बार भी स्नान किया जावे तो कोई हानि नहीं। ऐसे जलाशय में या पात्र (Tub) में जिसमें कटिपर्यन्त जल हो बैठ कर या खड़े रह कर, अच्छी तरह रगड़ मसल कर स्नान करना चाहिये। स्नान के समय एक मोटे खुरदरे तथा मुलायम गीले वस्त्र से, नाभी और लिंग के मध्यस्थान को धीरे धीरे १०। १५ मिनिट तक घिसना चाहिये। स्नान के पश्चात्,

किसी सूखे मोटे खुरदरे वस्त्र से शरीर को रगड़ कर पोंछ डालना चाहिये। स्नान के बाद तत्काल ही यथारुचि शीतल जल पीने से स्वप्नदोष मिट जाता है। महीनों इसका प्रयोग करने से पूर्ण लाभ होता है।

सूर्योदय से पूर्व उठना स्वप्नदोष वालों के लिये बहुत ही जरूरी बात है। कमसे कम सूर्योदय से एक घण्टे पहिले शय्या त्याग देना, उठते ही हमारे पीछे बताये हुये नियम के अनुसार, पाव डेढ़पाव के लगभग जल पी लेना चाहिये। इसे "उषपान कहते हैं। आयुर्वेद में उषः पान का अत्यन्त महत्त्व वर्णन किया है। इस वक्त का पान किया हुआ जल अमृत के समान गुणदायक होता है। उषपान के पश्चात् पाखाने जाना चाहिये। पाखाने के बाद शुद्ध, निर्मल एवम् शीतल जल से लिंगेन्द्रिय की विधिवत् शुद्धि करने के पश्चात् अंडकोषों पर कम से कम सौ चुल्लू पानी की डालनी चाहिये। यदि जल शीतल न हो तो उसे बर्फ डाल कर शीतल बना लेनी चाहिये। किसी जलाशय के किनारे, निर्जन स्थान में यदि यह क्रिया की जावे तो और भी उत्तम हो। इसी तरह सायंकाल को भी शौच के पश्चात् अण्डकोषों पर जल डालना चाहिये। ऐसा करने से अण्डकोष बिल्कुल सिकुड़ जायेंगे—उस समय उनमें सिकुड़ने के कारण संभव है कुछ कुछ दर्द सा भी होने लगेगा। जब उनमें इस प्रकार का दर्द आरम्भ हो जावे तब अण्डकोषों का स्नान बन्द कर देना चाहिए।

रात को सोने के पहले, यदि स्नान क्रिया न बन पड़े तो अण्ड कोषों को १।१५ मिनट तक शीतल जल के पात्र में रखना चाहिये। यदि लिंगेन्द्रिय के आसपास बाल हों तो उन्हें उस्तरे से साफ कर देना चाहिये। ऐसा करने के पश्चात् कमर से नीचे के भाग को शीतल जल से अच्छी प्रकार धोकर सूखे वस्त्र से पोंछ डालना चाहिये।

स्वप्नदोष के रोगी को सोडा लैमन या काफी, चाय, आइसक्रीम आदि कृत्रिम पेयों से अलग रहना चाहिये। जहाँ तक बन सके, शरबत वगैरा भी अधिक मात्रा में नहीं पीने चाहियें। बहुत से लँगोटी

भाई, भाँग को स्वप्नदोष-नाशक कह कर भोले भाइयों को, सदा के लिये भँगेड़ी बना कर उनका अमूल्य जीवन बरबाद कर देते हैं। स्मरण रखिये, नशीले पदार्थ क्षणिक-स्तंभक होते हैं, किन्तु अन्त में वे असफल हो जाते हैं।

मदिरा पेय पदार्थों में से एक अत्यन्त ही निकृष्ट पेय है। इसका सेवन, जातीय, धार्मिक, और सामाजिक नियमों के अनुसार वर्जित है। स्वप्नदोष की बीमारी वालों को यह विष के समान है। तात्पर्य यह है कि, किसी प्रकार के कृत्रिम जल का उपयोग करना स्वास्थ्य के लिये अत्यन्त हानिप्रद है। केवल शुद्ध जल जो पीने मे सुस्वादु, हल्का, स्वच्छ, निर्मल, मिष्ट, और सूर्य प्रकाश से प्रकाशित रहता हो- पीने तथा काम में लाने योग्य है, शेष सर्वथा त्याज्य है।

योग-चिकित्सा।

अब हम यहाँ उस गुप्त विधि को बताएँगे, जिसके लिये हमारे सैकड़ों भाई अपना असख्य रुपया फूँक चुके हैं। "बिना औषध के स्वप्नदोष दूर" करने के विज्ञापन से लोगों ने बहुत पैसा कमाया है। "योगि-राज की बताई हुई क्रिया।" के नाम से धूर्तों ने बहुत पसा लूटा है। जिस क्रिया के लिये राजा महाराजाओं, और धनी मानी सज्जनों से ५००) रु० फीस है और जिस विधि के बताने की दक्षिणा, कम से कम २५) रु० रखी गई है। वही बिना औषध के स्वप्नदोष दूर करने की विधि हम यहाँ अपने पाठकों के लाभार्थ, इस अल्प-मूल्य पुस्तक में ज्यों की त्यों बल्कि और भी सुधार पूर्वक बतलावेंगे। मुझे आशा है, इसके जान लेने के पश्चात् हमारे भाइयों को, भविष्य में कभी ऐसे धूर्तों को पैसा लुटाने का अवसर न आवेगा।

योगाभ्यास द्वारा स्वप्नदोष ही क्या बल्कि बड़े बड़े शारीरिक और मानसिक दोष भी दूर हो सकते हैं। मृत्यु, जिसे लोग अटल और अनिवार्य कहते हैं उसपर भी योगाभ्यास द्वारा, लोगों ने विजय प्राप्त की

है। जब से भारतवर्ष ने योगाभ्यास से उदासीनता प्रकट की, तभी से देशवासियों ने अपना स्वास्थ्य बल खोना आरंभ कर दिया। जिन ऋषिमुनियों की हम अत्यंत दीर्घायु सुनकर अवाक् रह जाते हैं, वे सब योगाभ्यासी हो गये हैं। आचार्यों ने योग के आठ अंग बताये हैं:—

"यम-नियमासन-प्राणायाम-प्रत्याहार—धारणा-ध्यान-समाध-योऽष्टावङ्गानि ।"

(पातञ्जल योग-सूत्र)

अर्थात—१—यम २—नियम ३—आसन, ४—प्राणायाम ५—प्रत्याहार, ६—धारणा ७—ध्यान, और ८—समाधि। योगके ये आठ अंग हैं। महर्षि याज्ञवल्क्यने इनके दस भेद किये हैं। लेकिन आसन, प्राणायाम धारणा ध्यान और समाधि ये पाँच ही मुख्य अंग हैं। थोड़ा बहुत योगका अभ्यास प्रत्येक मनुष्य को अवश्य ही करते रहना चाहिये। आसन और प्राणायाम योगके प्रमुख अंग हैं। इनसे मानसिक और शारीरिक बल की वृद्धि होकर, मनुष्य पूर्ण आरोग्य और पूर्णायु प्राप्त करता है। योगके इन दोनों अंगों द्वारा, बड़ी बड़ी बीमारियाँ हटाई जा सकती हैं। जिन रोगों पर औषधियाँ काम नहीं करतीं वे रोग योगासनों द्वारा सर्वथा हटाये जा सकते हैं—

"आसनानि समस्तानि यावन्तो जीवजन्तवः। चतुरशीतिलक्षाणि शिवेन कथितं पुरा ।"

चौरासी लाख जीवयोनियाँ प्रसिद्ध हैं, उनके अनुसार ८४ लाख ही आसन, योगिराज शिवजीने वर्णन किये हैं। उनमें से केवल ८४ आसन ही उत्तम माने गये हैं। ये आसन विविध रोगोंको नाश करके, दीर्घायु देने वाले हैं। नीरोग और धार्मिक लोगोंने इन्हें पवित्र

चौरासी आसनों को, मैथुनादि कार्य के लिये बना लिये हैं। जिनके कारण भारत मे विविध गुप्त-रोगों की सृष्टि हो रही है। वास्तव मे ये आसन योगके हैं जिनका वर्णन किसी योग सम्बन्धी पुस्तक में, हमारे पाठक यदि चाहेंगे तो विस्तार पूर्वक देख सकेंगे।

हम इस पुस्तक में स्वप्न दोष-नाशक-अनुभूत आसन बतावेंगे, लेकिन आसनों की क्रिया बताने के पहिले हम लिंगेन्द्रिय और गुदा के सम्बन्ध में थोड़ा समझा देना चाहते हैं, जिससे कि आसनों का महत्त्व सहज ही मे समझा जा सके। यह बात हरेक विचार-शील व्यक्ति को अच्छी प्रकार मालूम होगी कि, जब पेशाब करना होता है तब गुदा का मुख भी खुल जाता है। बिना गुदाके फैले मूत्र कदापि बाहिर नहीं आ सकता। जब हमें पेशाब करते वक्त मूत्र रोकना होता है, तब गुदाको सिकोड़ना अर्थात ऊपर की तरफ़ खींचना पड़ता है। यदि पाखाना जाने की सख्त जरूरत हो तो, मनुष्य उस वक्त मूत्र नहीं त्याग सकता। और यदि मूत्र त्यागता है, तो गुदा-मार्ग खुलने के कारण मल बाहिर निकलना चाहता है। पेशाब करते समय लोगों का पादना भी हमारी इसी बात का पोषक है। सारांश यह कि, गुदा और लिंग का आपस मे बड़ा भारी सम्बन्ध है। (देखो चित्र न० ४ मे छ) जिसकी गुदा-सकोचन-शक्ति अर्थात् मल-द्वार सिकोड़ने की शक्ति अच्छी है, वह व्यक्ति ऊर्ध्व रेता है। इसलिये, वीर्य धारण करने के लिये मनुष्य को अपनी गुदा की सकोचन-शक्ति बलवान बनाना आवश्यक है। इसे योगिक शब्दों में "मूलबन्ध" कहते हैं। प्राणायाम की क्रिया करते समय, यह मूलबन्ध किया जाता है। (मूलबन्ध के सम्बन्ध मे हम पीछे लिख आए हैं) आसन करते वक्त अपने गुदा और लिंग को सिकोड़ कर, ऊपर की तरफ खींचना चाहिये। ऐसा करने से स्वप्नदोष वालों को अत्यन्त लाभ होता है। बिना आसन के ही, जब कभी फुरसत मिले हर कहीं हर किसी वक्त आप कर सकते हैं। मान लीजिये कि, आप एक सभा मे बैठे हुए हैं—

लेकिन यदि आप चाहें तो वहाँ भी गुदा और लिंग की संकोचन क्रिया को बखूबी कर सकते हैं।

शौच स्नान व्यायाम, आदि से निवृत्त होकर बिना कुछ खाये पीये प्रातःकाल ऐसी जगह में जहाँ सूर्य प्रकाश तथा शुद्ध वायु विपुलता से हो बैठ कर आसनों का अभ्यास करना चाहिये।

(१) सिद्धासन।

बायें पाँव की एड़ी गुदा और अण्डकोषों के बीच में दृढ़ता से जमाइये बाद में दाहिने पाँव की एड़ी लिङ्ग के ऊपरी भाग में अर्थात लिङ्ग मूल में ऊपर की तर्फ दृढ़ जमाइये। ठोड़ी को हृदय में कण्ठमूल से थोड़ी दूर जमा कर स्थिर और सीधा शरीर करके पलकों और नेत्रों को न हिलाते हुए भौहों के बीच में दृष्टि को स्थिर कीजिये। हाथों को चाहे घुटनों पर रखिये चाहे मध्य में रखिये। (देखो चित्र नं ११) दोनों पाँव एक दूसरे पर ऐसे आ जावें कि दोनों की संधि स्थान की हड्डियाँ एक दूसरे पर रहें। इस समय श्वासोच्छ्वास की क्रिया शान्तिपूर्वक करनी चाहिये। पीठ की रीढ़ हड्डी प्रत्येक आसन करते समय सीधी रहे, यह बात अच्छी तरह स्मरण रखनी चाहिये। अन्यथा लाभ की जगह हानि हो जाना संभव है। रीढ़ से ही शारीरिक समस्त नसें फैली हैं। यह रीढ़ मेरुदण्ड कहा जाता है। यह जीवन का आधार-स्तम्भ है। इसे चलते फिरते हमेशा सीधा रखना चाहिये। इस दण्ड में से कितनी ही नसें निकलती हैं। (देखो चित्र नं १४) यह आसन यदि कहीं अँधेरे स्थान में किया जावे तो भी लाभप्रद होता है। एक मास के अभ्यास से ही लाभ मालूम होने लगता है। इस आसन का अधिक अभ्यास नहीं करना चाहिये क्यों कि अधिक अभ्यास से काम वासना बिलकुल शान्त हो जाती है, और पुरुष स्त्री के काम का नहीं रह जाता। इस भय से आसन लगाना ही छोड़ देना चाहिये बल्कि अभ्यास कम करना चाहिये।

चित्र नं० १३
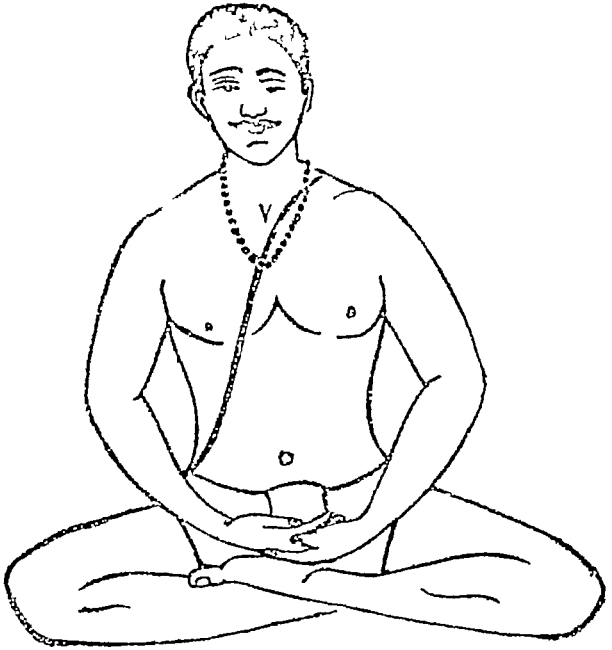
सिद्धासन।

चित्र न० १४

चित्र नं. १५

जानुशिरासन ।
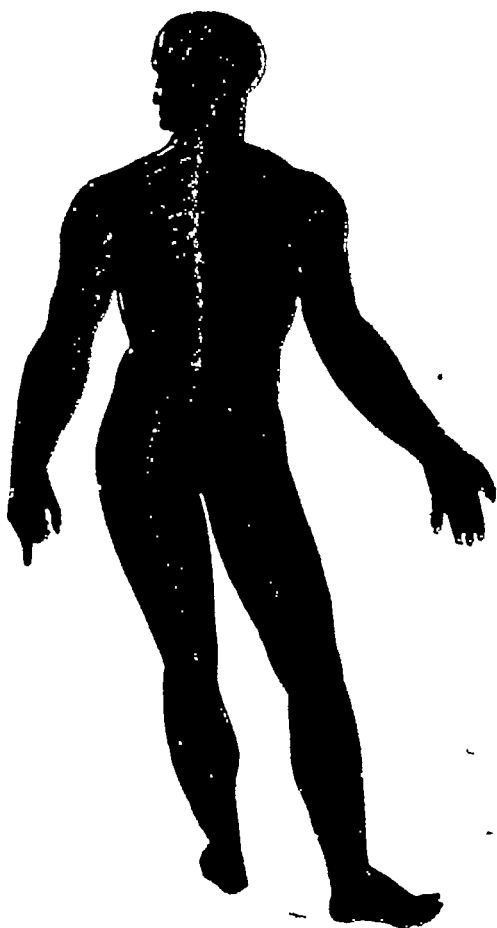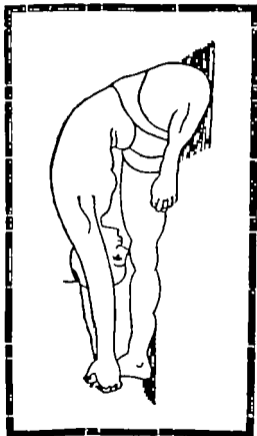
(२) कमलासन ।

दाहिना पाँव बाईं जघा पर, और बायाँ पाँव दाहिनी जंघा पर रखिये । दोनों पाँव दोनों जघाओं पर अच्छी तरह आ जावें । पाँवों की एड़ियाँ पेट के नीचे लगी रहें । पश्चात् बाँया हाथ बाँये घुटने पर, और दाहिना हाथ दाहिने घुटने पर रखिये । पीठ, गला, सिर, रीढ़, विल्कुल सीधा और समसूत्र मे रखिए । अपनी दृष्टि किसी एक लक्ष्य पर जमा दीजिये । भौहों के बीच में या अपनी नासिका पर भी दृष्टि स्थिर कर सकते हैं । इसे पद्मासन भी कहते हैं । इसमें भी सिद्धासन की भाँति गुदा और लिंग को ऊपर आकर्षण करने की विधि मुख्य है ।

(३) जानु शिरासन ।

पहिले दोनों पावों को सीधे जमीन में फला दीजिये । पाँव जमीन से चिपके रहें उठने न पावें । अब कोई भी एक पाँव की एड़ी लाकर गुदा और अण्डकोषों के बीच में इस प्रकार जमा दीजिए कि पाँव का तलवा दूसरे पैर की जघा से अच्छी तरह चिपक जावे और एड़ी का दवाव पड़ता रहे । बाद मे दोनों हाथों की कैंची बना कर फैले हुए पैर को, अच्छी तरह तलवे के पास से पकड़ लें, और उसी पाँव के घुटने पर अपना सिर अथवा नाक लगा कर बैठ जावें । (देखो चित्र न० १५) गुदा और लिंग का आसन मिनिट दो मिनिट करने से लाभ की आशा करना भूल है । पाँच मिनिट से लगा कर २०।२५ मिनिट तक यथाशक्ति इसे करने से ही लाभ होता है ।

यह आसन एक बार दाहिने पाँव से, और फिर बायें पाँव से अवश्य करना चाहिए, इसमें भूल करने से बड़ी भारी हानि होती है । दोनों पैरों का अभ्यास सम प्रमाण में होना चाहिये । जितना समय एक पैर से आसन करने में लगा हो, उतना ही समय दूसरे पाँव से

करने में लगाना चाहिये । ऐसा न करने से कोई दोष तो न होगा, लेकिन लाभ भी बहुत कम होगा। स्त्रियों के लिये यह आसन वर्जित है।

(४) पादांगुष्ठासन ।

एक पाँव की एड़ी गुदा और अंडकोष के बीच में लगा कर उसी पर सारे शरीर का वज़न तोल कर बैठ जाइये और दूसरा पाँव घुटने पर रखिये। (देखो चित्र नं १६) सहारे के लिए चाहे एक हाथ का या दीवार का सहारा लिया जा सकता है । गुदा और अंडकोषों के मध्य में जो चार अंगुल जगह है वहाँ वीर्यासन है। (देखो चित्र नं ४ में ग) इन वीर्य की मम नाड़ियों को एड़ी से दबाने पर वीर्य का प्रवाह बाहिर होना बन्द हो जाता है। इस लिये वीर्य विकार नष्ट हो जाते हैं। स्त्रियों को यह आसन नहीं करना चाहिये । तथा गृहस्थी पुरुष भी, इसका निरन्तर अधिक अभ्यास न करें।

(५) शीर्षासन ।

योग-शास्त्र मे इस आसन को वृक्षासन विपरीतकरणी, विपरीतासन शीर्षासन इत्यादि कई नामों से पुकारते हैं । इस आसन में सिर के बल खड़ा रहना होता है इसलिये सिर के नीचे अच्छा नर्म गदेला रखना चाहिये अथवा किसी वस्त्र की गिंडुई बनाकर उसमें सिर रखने से भी काम चल सकता है। तात्पर्य यह है कि सिर के नीचे सख्त ज़मीन न हो नहीं तो मस्तिष्कपर बुरा प्रभाव होगा। आरम्भ में इस आसन को दीवार के सहारे करना चाहिये। अकेले अभ्यास न करके, यदि दो मित्रों की सहायता से किया जावे तो और भी अच्छी बात है। दीवार का सहारा होने से गिरने पड़ने का भय नहीं रहता। सिरको गदेले पर या गेंडुई म रखकर दोनों हाथों की कैंची गाँठकर; सिरको अच्छी तरह पकड़ लीजिए। आरम्भ अपने दोनों पाँवों को ठीक सिरके ऊपर लम्बे करके

चित्र नं० १६

पादांगुष्ठासन ।

चित्र सं० १८
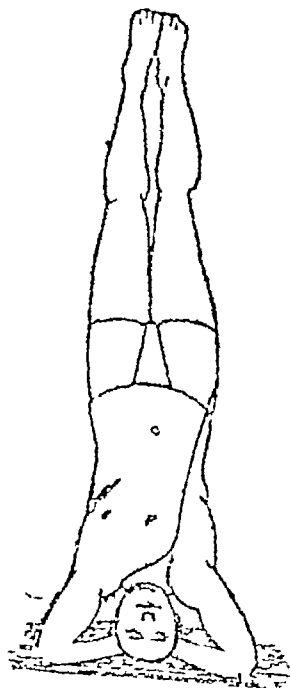
शीर्षासन।

खड़े रहने से यह आसन होता है। (देखो चित्र न० १७) आरम्भ में शीर्षासन एक दो मिनिट से अधिक नहीं करना चाहिये। ६ महीने के अभ्यास से आध घण्टे तक बढ़ाया जा सकता है। आसन कर चुकने के बाद लेटना, या बैठना वर्जित है। जितने समय आसन किया हो, उतनी ही देरतक सीधे खड़े रहकर टहलना चाहिये। दीवार के सहारे अभ्यास करने पर, यह आसन बिना किसी आश्रय के अथवा बिना किसी मनुष्य की सहायता के, हर कहीं लगाया जा सकता है। इस आसन से वीर्य की अधोगति रुककर ऊर्ध्वगति हो जाती है, और मनुष्य ऊर्ध्वरेता बन जाता है। यह सर्वरोग-नाशक बड़ा ही उत्तम आसन है। छः महीने के निरन्तर अभ्यास से जिन लोगों के बाल जवानी में सफेद हो गये हों, काले पड़ जाते हैं। इस आसन के अभ्यासी को वीर्य सम्बन्धी कोई बीमारी नहीं होने पाती।

आसनों के अभ्यास के दिनों में वीर्यरक्षा करनी चाहिये। बिना वीर्यरक्षा किये आसनों से यथेष्ट लाभ नहीं होगा। अभ्यास के दिनों में लघुपाक हल्का सादा भोजन करना चाहिये। कंद, मूल, फलों का सेवन अत्यन्त लाभ दायक होता है। मनमाना भारी गुरुपाक भोजन करके आसनों से लाभ की आशा नहीं करनी चाहिये। सात्विक भोजन और पथ्य पदार्थों का सेवन बहुत जरूरी है। मिर्च मसालों को तो छूना भी नहीं चाहिये। गौ का दूध और चावल, खिचड़ी, दलिया, थूली, गेहूँ की रोटी, मूँग की दाल, पवित्र शक्कर, मधु, साबूदाने की खीर, सूखे मेवा, हरी शाक-भाजी और हरे फल खाने चाहिये। इस प्रकार इन आसनों के निरन्तर अभ्यास द्वारा ६ महीने में अवश्य बिना दवा दारू के स्वप्नदोष हट जाता है।

उपवास-चिकित्सा।

हिन्दू शास्त्रों में उपवास का जितना माहात्म्य वर्णित है, उसे यहाँ लिखना असम्भव है। उपवासों के गुणों से मुग्ध होकर हमारे पूर्वजों

मे इसकी गणना धार्मिक कृत्यों में की है । उपवास द्वारा मोक्ष की प्राप्ति होती है, ऐसे सैकड़ों हिंदू ग्रंथों में प्रमाण मौजूद हैं । यह कहाँ तक सत्य है हमें इससे कोई प्रयोजन नहीं हमें तो यहाँ केवल उपवास की महिमा दिखानी है । मुसलमानों में भी, रोजों का माहात्म्य कुछ कम नहीं है । रोमन कैथोलिक क्रिश्चियनों में भी बहुत से उपवास प्रचलित हैं। शरीर की आरोग्यता के लिये मनुष्य को हर एक पक्ष में एक उपवास अवश्य कर लेना चाहिये । उपवास से स्वास्थ्य को बड़ा ही फायदा होता है। चौमासे में अनेक हिन्दू एक बार ही भोजन करते हैं, इसमें रहस्य छिपा हुआ है। जब हवा में नमी होती है और सूर्य बादलों में छिपा रहता है तब जठराग्नि मन्द हो जाती है; अतएव ऐसे समय में कम खाना ही हितकर है।

जितने भी रोग पैदा होते हैं, सब खाने पीने की बदपरहेजी से ही होते हैं। अर्थात् जितनी बीमारियाँ हैं सब पेट से ही पैदा होती हैं। उपवास पेट के संचित मल को और बिना पचे अन्न को, जलाकर अग्नि प्रदीप्त करता है। लेकिन आजकल लोग जिस् उपवास करते हैं या जिस ढंग से उपवास करते हैं वह, बिलकुल अनुचित तथा हानिप्रद है। इससे स्वास्थ्य सुधरने के बजाय बिगड़ जाता है। हिन्दुओं में प्रतिशत ९० व्यक्ति केवल कलाकन्द रबड़ी, दूध दही, मेवा मिष्ठान, फल मूलादि खाने के लिये ही उपवास करते हैं। अन्य दिनों की अपेक्षा उपवास के दिन इतना ठूँस ठूँस कर खा जाते हैं कि दूसरे दिन उनको भूख तक नहीं लगती !!! ऐसे उपवास हानि कारक होते हैं।

औषधियाँ जिन रोगों को हटाने में असमर्थ हैं, उन्हें उपवास हटा देते हैं। औषधियों से रोग समूल नष्ट नहीं होते बल्कि उनके प्रभाव से कुछ समय के लिये वे दब जाते हैं, और समय पाकर फिर जोर पकड़ लेते हैं। किन्तु उपवासों से रोग की जड़ तक जाती रहती है, और फिर रोग होने की कोई आशंका ही नहीं रहती।

स्वप्न-दोष हटाने के लिये, लगातार विधि पूर्वक ७१ दिन के उपवास की आवश्यकता है। उपवास के दिनों मे केवल फलों पर ही रहना चाहिये। कभी कभी दूध कम मीठा डाल कर भी प्रयोग करते रहना चाहिये। मिठाई, रबड़ी, खोया आदि काम में नहीं लाना चाहिये। शक्कर कदापि काम मे नहीं लानी चाहिये। प्यास लगनेपर जल मे ५।७ बूँद नीबू के रस की डाल कर पीना चाहिये। प्राणायाम व्यायाम, नित्य नियम पूर्वक करना चाहिये। उपवास के दिनो में कब्ज न हो जावे, इस बात का ध्यान रखना जरूरी है। जरूरत हो तो कब्ज होने पर बस्ति—क्रिया (एनिमा) द्वारा दस्त करना कोई बुरी बात नहीं है। या "शीर्षासन" करते रहने से भी कब्ज नहीं होने पाती। इन दिनों सदैव कठोर शय्यापर ही शयन करना चाहिये। सबसे बड़ी आवश्यकता इस बात की है कि, मन को सर्वथा पवित्र रखना चाहिये।

उपवास पूर्ण होने पर, एक दम अन्न नहीं खाना चाहिये। पहले कुछ दिन तक रसदार फल जैसे नारंगी, मौसम्बी आदि लेना चाहिए। बाद मे कुछ दिनों तक अन्न और फल दोनों मिला कर, खाते रहना चाहिये। धीरे धीरे अन्न की मात्रा बढ़ाते जाना चाहिये, और फलों की मात्रा कम करते जाना चाहिये। इस प्रकार ८।१० दिन मे अन्न खाने लगना चाहिये। फलाहार के पश्चात् हल्का अन्न ही खाना चाहिये। नहीं तो एक दम पेट मे, कोई रोग पदा हो जावेगा। इस प्रकार विधिवत् किये हुए उपवासों से, स्वप्नदोष समूल नष्ट हो जावेगा।

औषध चिकित्सा।

हमें जितना विश्वास प्राकृतिक-चिकित्सा पर है, उतना औषधि-चिकित्सा पर नहीं। इसके कई कारण हो सकते हैं (१) यह कि हमे इस विषय का ज्ञान विशेष न हो (२) यह कि औषध लेनेवाले के लिये प्रकृति भेदानुसार औषध न बन सकी हो (३) नाम भेद के

अनुसार एक औषध के बजाय दूसरी काम दी गई हो (४) उसकी चीजें सड़ी, गली, पुरानी बहुत दिन की हों (५) बनाने की विधि में कुछ कसर रह गई हो (६) मात्रा रोगी की प्रकृति और बलपुरुषार्थ के अनुकूल न दी गई हो (७) रोगी ने उसे विधिवत् सेवन नहीं की हो (८) औषध सेवन के समय रोगी ने पथ्य न रखे हों; इत्यादि अनेक बातें हैं जिनके कारण आज औषधि-चिकित्सा उतना काम नहीं देती जितना कि उसे देना चाहिये।

स्वर्गीय बकलीयम ने कहा है—

'जिन वनस्पतियों के सम्बन्ध में, वैद्य लोगों को बहुत थोड़ा ज्ञान है उन्हीं वनस्पतियों को वे ऐसे शरीर में पहुँचाते हैं, जो शरीर, उन वनस्पतियों का ज्ञान उन वैद्यों से भी बहुत थोड़ा रखता है। वैद्य लोगों को जब इस बात का पूरा पूरा अनुभव हो जाता है, तब वे लोग भी यही बात कहने लगते हैं।"

डाक्टर मेजेन्डी ने कहा कि— 'वैद्यक महा पाखण्ड है।'

सर एसली का कहना है कि—

"वैद्यक शास्त्र केवल अटकल पर रचा गया है।"

सर जान फोरबस कहते हैं कि—

अच्छे वैद्यों के रहने पर भी, बहुत से मनुष्यों को कुदरत ही नीरोगता देती है।"

डाक्टर बेकर सा फरमाते हैं कि:—

'आज बुखार से जितने रोगी मरते हैं, उससे अधिक रोगी वहीं उस बुखार की दवा से मरते हैं।"

डाक्टर फ्रैंक का कहना है कि—

"इन दवाखानों द्वारा हजारों मनुष्य की हत्या होती है।"

डाक्टर मेसनगुडका कहना है कि—

"हैजा प्लेग महामारी, आदि द्वारा जितनी मौतें होती हैं, उनसे अधिक मनुष्य दवाओं की बलि चढ़ते हैं।"

ये डाक्टरों की सम्मतियाँ हैं। पाठक इन्हें पढ़ कर इस विषय का फैसला स्वयम् कर लें। भारतवर्ष में बढ़ती हुई वीर्य सम्बन्धी बीमारियों को देख कर, आज चूरन बेचने वाले और चूरन का लटका बोल कर पेट भरने वाले मूर्ख लोग तक भी, राज-वैद्य बन बैठे और अपने भोले रोग-ग्रस्त भाइयों की, खरे पसीने की कमाई से अपना जेब गर्म करने लगे ॥ पाठकों को इन धूर्त्त विज्ञापनबाज वैद्यों के बल वीर्य वर्द्धक विज्ञापनों को पढ़ कर, उसमे नहीं फँसना चाहिये। ऐसे नीम-हकीमों की दवाओं से रोग दूर होनेके बजाय दिन प्रतिदिन बढ़ता ही जाता है। अतएव सबसे पहिले मनुष्य को प्राकृतिक-चिकित्सा करनी चाहिये। इसमे किसी प्रकार का भय नहीं—हानि हो ही नहीं सकती। औषधियों के समान उलझने और झझटे इसमें नहीं हैं। कई लोग ऐसे भी होते हैं जो प्राकृतिक चिकित्सा को उलझन समझते हैं, उनके लिये हम अपने कुछ अनुभूत नुस्खे यहाँ लिखते हैं:—

(१) सतावरि और बिरादरीकन्द दोनों समान भाग लेकर उसमें खरहटी (बला) के रस की ७ भावना देकर जगली बेर के बराबर गोलियाँ बना लें। एक गोली सुबह और एक गोली सायंकाल को आध आध सेर गोदुग्ध के साथ सेवन करे। अवश्य लाभ होगा।

(२) दो माशा कबाब चीनी का चूर्ण, शहद के साथ नित्य सोते समय कमसे कम २१ दिन सेवन करने से स्वप्नदोष जाता रहता है।

(३) ईसबगोल की ताजा भूसी १ तोला सिंहाड़ा सूखा २ तोला छुहारा ४ तोला और देशी शक्कर की मिश्री ७ तोला लेकर चूर्ण बना लो। एक तोला रोज प्रातःकाल गऊ के दूध के साथ ७ दिन तक सेवन करो, और औषध सेवन के बाद भी सात दिन तक पथ्य रखो। इन १४ दिनों में नमक नहीं खाना चाहिये। केवल दूध, चाँवल, घृत, शक्कर, गेहूँ की रोटी या चने की खानी चाहियें। यदि १४ दिन में फायदा न हो तो फिर १४ दिन खाकर देखो।

(४) अशोक की छाल २ तोला लेकर पाव भर पानी में उबालो

जब एक छटांक बाक रह जाय तब उसे चूल्हे से नीचे उतार कर छान लो। इसमें आधा तोला शुद्ध शहद मिला कर सेवन करो। नित्य प्रातः कई दिन के सेवन से स्वप्नदोष चला जायगा।

(५) शीतचीनी का चूर्ण एक तोला गो घृत एक तोला और मिश्री एक तोला तीनों को मिला कर नित्य प्रातः सेवन कीजिए। गुड़ तेल, खटाई, मिर्च और मादक द्रव्यों से परहेज कर।

(६) त्रिफला १ तोला बच १ तोला पुराना गुड़ ४ तोला इन सब को कूट पीस कर चार चार रत्ती की गोलियाँ बनालो। प्रातः सायं एक एक गोली ठण्डे पानी के साथ सेवन करें।

(७) बबूल की कोंपलें ६ माशा खा कर ऊपर से ठंडा पानी पी लवें। दो हफ्ते के सेवन से लाभ होगा।

(८) छः माशा मालती के पत्तों के चूर्ण को मिश्री और शहद में मिला कर कुछ दिन सेवन करने से स्वप्नदोष नष्ट हो जाता है।

(९) सहदेई की जड़ का महीन चूर्ण गो दुग्ध में डाल कर कुछ दिन तक सेवन करें।

(१) शिलाजित शुद्ध तीन रत्ती और बंगभस्म एक रत्ती नित्य शहद के साथ सेवन करके ऊपर से मिश्री मिला कर गो दुग्ध सेवन करने से स्वप्नदोष नष्ट होता है। ४० दिन सेवन कर देखें।

(११) सूखा धनियाँ और सफेद शक्कर दोनों समभाग लेकर चूर्ण कर लेवें। नित्य ७ माशा चूर्ण शीतल जल के साथ सेवन करें। कम से कम पाँच सप्ताह प्रयोग करना चाहिए।

(१२) बबूल की फलियों को छाँह में सुखा कर उसका चूर्ण कर लें। नित्य १ माशा फलियों के चूर्ण में १ माशा मिश्री का चूर्ण मिला कर गो दुग्ध के साथ सेवन करने से लाभ होगा।

(१३) पानी की सूखी हुई काई (सेवार) का चूर्ण बराबर की मिश्री मिलाकर रख लें। नित्य ६ माशा गो दुग्ध के साथ सेवन करने से स्वप्नदोष दूर होता है।

(१४) पोटेशियम ब्रोमाइड ३० ग्रेन एक औंस पानी में नित्य १०।१२ दिन तक सेवन करने से भी लाभ होता है।

(१५) केम्फर मानो ब्रोमाइड ५ ग्रेन, २॥ तोले पानी के साथ नित्य सेवन करने से भी स्वप्नदोष दूर होता है।

इन औषधियों के अतिरिक्त भी, यदि औषधियों की इच्छा रह जावे तो किसी वैधक ग्रंथ से मदद लेनी चाहिये। अथवा किसी योग्य विश्वस्त वैद्य, हकीम या डाक्टर से मिल कर रोग की दवा करानी चाहिये। इस विषय पर अधिक लिखना अनधिकार चेष्टा समझ कर, अब अपनी लेखनी को यह लिख कर विश्राम देता हूँ कि:—

"जिन खोजा तिन पाइयाँ, गहरे पानी पैठ"

---
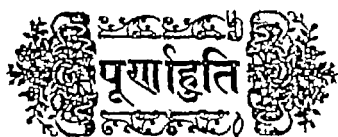
(१) रात्रि में निद्रा भङ्ग हो जाने पर शय्या में निद्रा की इच्छा से मत पड़े रहो।

(२) रात्रि को निद्रा भग होने पर पेशाब करके या पानी पीकर फिर मत सोओ।

(३) सूर्योदय के ३ घण्टे पहिले न हो सके तो कमसे कम १ घंटे पहले अवश्य ही शय्या त्याग कर खड़े हो जाओ।

(४) उठते ही पाव डेढ पाव जल पी लो।

(५) पाखाने जाते समय जोर लगा कर मल मत त्यागो।

(६) पाखाने जाते वक्त गुदा और लिंग को गर्म पानी से मत धोओ।

(७) लिंग और अंडकोषों को सदैव ठंडे रखो।

(८) हमेशा लंगोटा मत कसे रहो। लंगोट मोटे वस्त्र का न हो।

(९) उपस्थेन्द्रिय के आस पास का स्थान मैला न रहने दो।

(१) शीतल जल से ही स्नान करो।

(११) दिन में १ वक्त स्नान करो। अन्य ऋतुओं में यदि न बन पड़े तो गर्मी के मौसिम में तो २ बार नित्य अवश्य ही स्नान कर लेना चाहिये।

(१२) कमर कमर जल में कुछ देर खड़े रहो।

(१३) बुरे विचारों को अपने मन में न आने दो।

(१४) स्त्री पुरुष सम्बन्धी, तथा रति क्रिया सम्बन्धी बात-चीत और विचार मत करो।

(१५) पशु पक्षियों का मैथुन मत देखो।

(१६) उत्तेजक पदार्थों का सेवन मत करो।

(१७) नग्न-चित्र तथा नग्न स्त्री पुरुषों को मत देखो।

(१८) गन्दा साहित्य मत पढ़ो।

(१९) वेश्याओं के मुहल्लों में या उनके घरों के आस पास मत घूमो।

(२) स्त्रियों से कन्याओं से अथवा १ । १५ वर्ष के लड़कों से एकान्त में बातचीत मत करो और न उनके कपोल आदि अंगों को स्पर्श करो।

(२१) दूध अधिक मत पीओ। कच्चा दूध कदापि मत पीओ।

(२२) भोजन सुपच हल्का और सूक्ष्म रख कर करो।

(२३) भोजन एक ही वक्त करो। रात्रि में भोजन मत करो।

(२४) अत्यन्त चटपटा और मसाले दार भोजन त्याग दो।

(२५) अधिक मिठाइयाँ मत खाओ। खास करके बाजारू मिठाइयों से अपने को बचाओ।

(२६) सायंकाल को यदि इच्छा हो तो हल्का भोजन करो।

(२७) मिठाई अथवा शक्कर की जगह अधिकांश शहद प्रयोग करो।

(२८) लिंग के मुख पर के चर्म को हटाकर सुपारी पर का मैल ठंडे पानी से सायं प्रातः दोनों समय अच्छी तरह धो डालो।

(२९) लिंगेन्द्रिय पर तैल मर्दन न करो।

(३०) लिंग को महीने में १।२ वार नमक के पानी से धो डालो।

(३१) शीत ऋतु के अतिरिक्त शरीर पर तैल मर्दन मत करो।

(३२) प्रेम की कथाएँ न पढ़ो और गन्दे नाटक, सीनेमा, खेल तमाशे इत्यादि मत देखो।

(३३) आत्म-शासन करना सीख ।

(३४) अधिक मेहनत मत करो।

(३५) व्यायाम नित्य करो, परन्तु अधिक मत करो।

(३६) चिन्ता से बचते रहो।

(३७) मांस मत खाओ।

(३८) दिन में, (ग्रीष्म ऋतु को छोड़कर अन्य ऋतुओं में) मत सोओ।

(३९) विना गहरी नींद आये, बिछौनों में जाकर नींद की राह मत देखो।

(४०) तिले, कुश्ते, भस्म तथा वाजीकरण दवाइयाँ मत खाओ।

(४१) लिंगेन्द्रिय बढ़ाने के लिये अमानुषिक कार्य्य और मूर्खों की दवा न लो।

(४२) कन्याओं, वेश्याओं, बूढ़ियों और ऋतुस्रावा स्त्रियों से मैथुन न करो।

(४३) पराई स्त्रियों को सदा, अपनी माता बहिन और पुत्री मानो।

(४४) आग से अधिक मत तपा करो।

(४५) मुँह ढँककर मत सोओ।

(४६) रात्रि में जल्दी सोओ और जल्दी उठो।

(४७) मानसिक-श्रम अधिक मत करो।

(४८) महात्माओं के जीवन-चरित्र रात दिन पढ़ो।

(४९) अपनी पोशाक सादा रखो।

(५०) इत्र फुलेल आदि गन्ध और पुष्प माला आदि धारण मत करो।

(५१) घोड़े और बाईसिकल की सवारी अधिक मत करो।

(५२) लिंग को रात दिन मसलने की आदत मत डालो।

(५३) औंधे मत सोओ।

(५४) अधिक मत जागो।

(५५) पेशाब और पाखाने की जरूरत को मत रोको।

(५६) अधिक पानी मत पीओ।

(५७) हस्तमैथुन, पशुमैथुन गुदमैथुन आदि अप्राकृतिक मैथुन कदापि मत करो।

(५८) पेशाब करने के पश्चात् लिंगेन्द्रिय को ठण्डे पानी से अवश्य धो डालो।

(५९) औषधियों अधिक सेवन मत करो।

(६) कब्ज हटाने के लिये हमेशा जुलाब मत लो।

(६१) ठण्डे स्थानों में ही रहो गर्म स्थानों में मत रहो।

(६२) हमेशा खुली हवा में रहो बन्द मकानों में मत रहो।

(६३) बीड़ी तमाखू चाय काफी, कोको सोडा लेमन भाँग, गाँजा चण्डू चरस अफीम मदिरा आदि पदार्थों का सेवन मत करो।

(६४) मुलायम गद्दों पर मत सोओ। कठोर शय्या पर ही सोओ।

(६५) एकान्तवास मत करो।

(६६) नंगे मत सोओ।

(६७) भोग-विलास की कथाओं को (जैसे श्रीमद्भागवत की रास लीला की कथा) मत सुनो भले ही वे पवित्र ग्रन्थों में ही क्यों न वर्णित हों।

(६८) किसी से लिपट कर मत सोओ।

(६९) खूब चबा कर भोजन करो।

(७०) नाक से ही श्वासोच्छ्‌वास की क्रिया करो, मुँह से मत करो।

(७१) कमर के पृष्ठवंश अर्थात् रीढ़ को हमेशा सम सूत्र मे रखो।

(७२) सिर को अधिकांश खुला रहने दो।

(७३) नगे पैरों भी कभी कभी चला करो।

(७४) ढीले और कम वस्त्र पहिनो।

(७५) सोते वक्त लिंगेन्द्रिय तथा अण्डकोषों को शीतल जल से धो डालो।

(७६) कभी कभी नाभि के नीचे पेट पर गीले कपड़े का पट्टा बाँध लिया करो। लेकिन थोड़ी देर।

(७७) सूर्य के प्रकाश मे रहा करो।

(७८) गर्म प्रकृति के पदार्थों को मत खाओ।

(७९) लालमिर्चे, राई, सरसों और गर्ममसाले का सेवन मत करो।

(८०) हफ्ते में एक बार निराहार उपवास अवश्य करो।

(८१) फलों का सेवन अधिक करो।

(८२) भोजन और स्नान मे ३ घंटे का अन्तर रखो।

(८३) भोजन के पश्चात् तुरन्त मैथुन न करो।

(८४) स्त्रियों से अधिकतर वार्त्तालाप न करो।

(८५) दिन में मैथुन न करो।

(८६) ठाले मत बैठो किसी न किसी काम मे लगे रहो।

(८७) बासी भोजन मत करो। सड़े बासे फल मत खाओ।

(८८) बाल-विवाह मत करो।

(८९) जीवन भर वीर्यरक्षा का ध्यान रखो।

(९०) खूब लम्बी चौड़ी जगह में, जहाँ वायु खूब आता जाता हो शयन करो।

(९१) एक बिछौने में दो मनुष्य कदापि न सोओ। स्त्री पुरुषों के बिछौने अलग अलग हों।

(९२) वस्त्र शुद्ध रहें, इस बात को कभी मत भूलो।

(९३) रात दिन कुछ न कुछ खाते रहने की आदत मत डालो।

(९४) उपवास निराहार करो। उस दिन मिठाई मत खाओ।

(९५) नित्य वायु सेवन के लिये गाँवसे बाहिर दूर तक जाओ।

(९६) क्रोध मत करो।

(९७) हमेशा खुश रहो।

(९८) मन पर अपनी विजय प्राप्त करो।

(९९) प्राकृतिक नियमों को मत तोड़ो।

(१००) उस विश्व-सुखाधार-परमात्मा में अपनी अटल श्रद्धा और भक्ति रक्खो।

"सर्वेभवन्तु सुखिनः सर्वेसन्तु निरामया।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु माकश्चित् दुःखमाप्नुयात्॥"

❀ इतिशम् ❀

मुद्रक—पं० बैजनाथ भार्गव आनन्दसागर प्रेस गायघाट, बनारस।

शुद्धिपत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४	८	पृथ्वी सब	पृथ्वी के सब
१०	२४	कार	प्रकार
११	१६	हीती	होती
१२	११	(चित्र नं० १ में)	(चित्र न० १ में ५)
२०	१७	चाम	चाक
२६	२६	घण्के	घण्टे
२७	१०	करोर्णो	करोड़
४४	१३	धड़कने में	धड़कनों में
४७	७	रेलवे बाजार से	रेलयात्रा में तथा बाजार से
५३	२१	नमक	नामक
६५	४	हो,कर लेते	हाँ कर लेते
६८	२०	साध्र्य	साध्य
७३	२६	पदे में	पेंदे में
७७	१५	आज्ञा उसी	आज्ञा है उसी
८०	८	फल्ु	फल्
८१	१२	चास्तमने	चास्तमले
८६	५	जैसे विचार	जैसे विचार होंगे
९०	४	सिहाड़	सिहाड़े
१००	२७	नर्मेइ	इनमें
१०६	११	स्त्री पुरुषों प्रवि	स्त्री पुरुषों के प्रति
११०	२	काजूँर	काजूँ

—